



मध्यस्थ दर्शन – एक परिचय* (1999)

(*विडियो से प्रतिलेखन)



अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन

सहज

मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद)

- ए. नागराज (प्रणेता एवं लेखक)

मध्यस्थ दर्शन सहज 'प्रवेश' पुस्तक

1. जीवन विद्या एक परिचय (प्रकाशित पुस्तक)
2. सहअस्तित्ववाद एक परिचय (संकलन) {PDF}
3. प्रारंभिक पाठमाला {PDF}
4. सत्संग (2005 प्रतिलेखन) {PDF}
5. मध्यस्थ दर्शन एक परिचय (1999 प्रतिलेखन) {PDF}
6. सहअस्तित्ववादी विज्ञान (1999 प्रतिलेखन) {PDF}
7. मूल तत्व अवलोकन (संकलन) {PDF}

PDF Download Link : dub.sh/parichay

प्रकाशक :

जीवन विद्या प्रकाशन, दिव्यपथ संस्थान

अमरकंटक, जिला – अनूपपुर (म.प्र.), भारत, 484886

www.divya-path.org

प्रणेता एवं लेखक :

ए. नागराज

सर्वाधिकार दिव्यपथ संस्थान के पास सुरक्षित

संस्करण: e-book PDF: 14 जनवरी 2026

प्रामाणिक वेबसाइट : www.madhyasth.org

प्रिंटेड पुस्तक प्राप्ति : purchase.madhyasth.org ; books@divya-path.org

सदुपयोग नीति:

यह प्रकाशन 'सर्वशुभ' के अर्थ में है और इसका कोई व्यापारिक उद्देश्य नहीं है। इसका उपयोग एवं नकल, निजी अध्ययन के लिए उपलब्ध है। इसके अलावा किसी भी अर्थ में प्रयोग (नकल, मुद्रण, आदि) करने के लिए 'दिव्यपथ संस्थान', अमरकंटक, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत – 484886 से पूर्व में लिखित अनुमति लेना अनिवार्य है। यह अपेक्षित है की इन अवधारणाओं को दूसरी जगह प्रयोग करते समय इस ग्रंथ का पूर्ण उद्धरण (संदर्भ) दिया जाएगा। कृपया दर्शन की पवित्रता बनाये रखें।

इस संकलन के बारे

यह प्रतिलेखन पूज्य बाबा नागराजजी के 1999 में आँवरी आश्रम (छ.ग) के ऑडियो रिकॉर्ड से किया गया है। इसमें जिज्ञासुओं के साथ मध्यस्थ दर्शन का सामान्य परिचय एवं विज्ञान सम्बंधित चर्चा रही।

हम स्व. श्री राजन शर्माजी (नंदिनी) के प्रति कृतज्ञ हैं, जिन्होंने 1999 में ही इस महत्वपूर्ण चर्चा को विडियो रिकॉर्ड करवाया।

यह पुस्तक श्रद्धेय नागराजजी के विडियो रिकॉर्ड का प्रतिलेखन है। पाठकों को ध्यानाकर्षण है कि पढ़ते समय अर्थ पर संदेह होने पर प्रकाशित ग्रंथों को माना जाए।

पाठकों के सुविधा हेतु प्रत्येक विषय-वस्तु के साथ सम्बंधित विडियो का लिंक दिया गया है।

कुछ स्थलों पर ऑडियो एवं विडियो में मेल नहीं है (Mismatch)। प्रत्येक अध्याय के साथ उससे सम्बंधित YouTube फाइल की लिंक भी दिया गया है, ताकि पाठकों को पढ़ने-देखने में सुविधा हो।

Youtube channel name: Madhyasth Darshan Originals – A. Nagraj

Playlist name: Sah Astitvavadi Vigyaan_1999

जिम्मेदारियां:

ऑडियो से प्रतिलेखन: शालू अग्रवाल, निताशा त्यागी, शिल्पा गर्ग, ओमप्रकाश गुमास्ता, अमोल यादव, नीरू पूरी,
हिमांशु पस्तागिया | संकलन: श्रीराम नरसिम्हन

सुधार संपर्क: books@divya-path.org

अनुक्रमणिका

1. मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद	8
2. मानव केंद्रित चिंतन	16
3. जीवन की शक्ति व बल	19
4. अनुभव व जागृति	33
5. दर्शन, वाद और शास्त्र	43
6. मानव शरीर रचना	47
7. मानव शरीर गुण और नस्लें	50
8. जीवन और शरीर का सम्बंध	53
9. मध्यस्थ मार्ग और दर्शन	60
10. आहार विहार	61
11. ज्ञानवाही और क्रियावाही तंत्र	64
12. कामनाओं का विश्लेषण	65
13. अखण्ड समाज व्यवस्था	72
14. परमाणु - 1	74
15. परमाणु - 2 (आचरण)	85
16. परमाणु - 3 (मध्यस्थ बल व प्रजाति)	89
17. परमाणु - 4 (अंश और जीवन परमाणु)	93
18. परमाणु में गति	102
19. पर्यावरण संतुलन	108
20. विकास क्रम - पदार्थावस्था से ज्ञानावस्था	111
21. जागृति क्रम	116
22. शिक्षा संस्कार योजना	120
23. स्वावलम्बन	123
24. भाषा	126
25. गणित	129
26. उत्पादन कार्य योजना	134
27. विज्ञान	136

28. विवेक	141
29. समय, काल, वर्तमान	144
30. तकनीकी का प्रयोग	148
31. कला और तकनीकी	150
32. प्रबंधन	153
33. विनिमय कोष और श्रम मूल्य.....	154
34. न्याय, संविधान और संप्रभुता	157
35. स्वास्थ्य संयम	159
36. स्थिति, गति और बल.....	161
37. सापेक्षतावाद और अनिश्चयवाद	162
38. वनस्पतियों में जीवन और प्राण कोशा.....	168
39. समाधान और भय मुक्ति	171
40. कम्पन तरंग से ज्ञानोदय	174
41. विचारों का स्थान और प्रभाव	180
42. अनुभव - जानना, मानना, पहचानना और निर्वाह करना.....	184
43. बोध साक्षात्कार	187
44. अंतर मुखी एवं बहिर्मुखी - 1	192
45. अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी - 2	195
46. अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी - 3	199
47. अध्ययन के तीन चरण.....	205
48. समापन.....	207

1. मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 2, time 00:00-34:18](#)

मेरे बंधुओं, मेधावियों और जिज्ञासुओं!

मैं विश्वास करता हूँ आप लोगों के जिज्ञासाएँ बहुत सारा सवालों से दंशित हो करके, सवालों का बहुत सारा दर्दों से भरकर आप लोग जिज्ञासा कर रहे हैं, ऐसा मैं स्वीकारता हूँ। इसका प्रमाण भी मुझे भी ऐसा लगता है, जब कभी हम तीव्र जिज्ञासु होता हूँ, किसी दर्द भरे तरीके से ही हम उससे मुक्ति पाने की आशय बनती है और उसी मुक्ति पाने के आशय से हम उसका समाधान चाहना शुरू कर देते हैं। वो चाहत यदि बाकी हमारा जिंदगी की तरह-तरह की जीने वाले जो प्रधानता रहती है और वरीयता रहती है, उससे यदि वरीय हो जाये, माने हम जितने तरीके से भी जीते रहते हैं, किसी की एक point का एक कीमत है, किसी की 10, किसी की 25 और किसी की 90, ऐसा कीमत से हम वरीयता को आँके रहते हैं, उस क्रम में ये हमारा जिज्ञासा सबसे ऊपर हो जाती है, तब उसका समाधान समीचीन हो जाता है। उसका कोई एक प्रकार नहीं है, जैसा मैं अभी आपको उपलब्ध हूँ। मैं यदि उपलब्ध नहीं भी रहूँगा तो संसार में, अस्तित्व में, सवाल का उत्तर रहता ही है। ये कोई अपन आश्चर्यजनक विधि से सोचने की जरूरत नहीं है। तो अभी आपने एक बात बताई थी –स्मरण में, कि सवाल है तो उसका समाधान रहता ही है। यदि समाधान नहीं है, सवाल हो ही नहीं सकता।

ऐसा कोई सवाल ही नहीं कर सकता और वो सवाल का कोई अर्थ बनता ही नहीं। अर्थ का मतलब दर्द का परिस्थितियाँ नहीं बनती। यदि सवाल का जवाब ना हो, यदि ऐसा कोई सवाल करता है, वो दर्द भरे होते ही नहीं हैं। ये इस ढंग की इसका कसौटियां रहते हैं। मेरा भी ऐसा ही अनुभव कहता है, दर्द अति तीव्र होने के बाद हमारा जिज्ञासा तीव्र हो जाता है। ये इतनी सी बात है, छोटी सी बात है! वो दर्द जो है ना, वरीयता क्रम में, सबके ऊपर होने के बाद, उसको अपनाने की नौबत आती है। अपनाने की नौबत आ जाता है तो हम प्रमाणित होने वाला तरीका और आवश्यकता सब बन जाती है, हम स्वयं प्रमाणित होने के लिए तत्पर हो जाते हैं। तत्पर होने के पश्चात उसका तो खुशबू ही अलग होता है, स्वाभाविक रूप में “प्रमाण” ही मनुष्य का मूल वर्चस्व है।

एक वाक्य यह बना – मनुष्य जो है ना समाधानों का समझदार है, धनी है, ना कि सवाल का। अभी के वर्तमान में हम जो परेशान हो गए हैं, सवालों को पैदा करने से विद्वान हो गये, ऐसा हम सोचते हैं। वो सवालों को पैदा करने पर धनी नहीं है, विद्वान नहीं है, न ही मेधावी है, न जिज्ञासु ही है। तो सवाल पैदा कर देना कोई मेधावीपन का अर्थ नहीं है। सवाल का जवाब चाहना मेधावियों का काम है – पहला। वो समीचीन होने से उसको जीवन में अपनाना मेधावियों का दूसरा वर्चस्व है। उसको प्रमाणित करना तीसरा वर्चस्व है। इन वर्चस्व के साथ ही मेधावियाँ संसार के लिये उपकारी हो पाते हैं। और केवल जिज्ञासा किया, जिसको हमको जीना ही नहीं है, ऐसा जिज्ञासा से कोई संसार का फायदा होने वाला नहीं है – पहले बात तो मेरा अनुभव यही कहता है।

उसके बाद जो मूलतः अभी पहला जिज्ञासा यही है, अभी हमको आप लोगों ने जो समझाये हैं उसके अनुसार, मध्यस्थ दर्शन मैंने प्रस्तुत किया है, आप जैसे मेधावियों के कर-कमलों में, और इसको प्रस्तुत करने के लिये - प्रस्तुत तो कर दिया, इसका मतलब को यहाँ आप लोग सुनना चाहते हैं, ऐसा आप लोगों का जिज्ञासा है।

मध्यस्थ दर्शन का मूल मतलब यही है - जो विज्ञान से और अध्यात्म से अथवा आदर्शवाद से - दोनों के हाथ में जो नहीं लगी थी, वो चीज़ हमारे हाथ लग गई - उसका नाम मध्यस्थ दर्शन। अध्यात्मवाद में जो प्रतिपादन नहीं हो पाई, अध्यात्मवाद प्रमाणित नहीं कर पाया, अध्यात्मवाद दूसरों को समझाने की तरीका या ताकत पैदा नहीं कर पाया या पहचान नहीं कर पाया, इसका नाम है मध्यस्थ दर्शन। उसी भाँति जो भौतिकवाद है - वो पहचान नहीं पाया या प्रमाणित नहीं कर पाया, बता नहीं पाया, सोच नहीं पाया, इसी का नाम मध्यस्थ दर्शन है। अर्थात् विज्ञान और आदर्शवाद - अभी तक दो ही चिंतन आई हैं। आदर्शवादी चिंतन का नजरिया - रहस्य मूलक ईश्वर केन्द्रित चिंतन, ईश्वर से सब कुछ होता है - ये नजरिया है। इसको अपने को अच्छी तरह से हृदयंगम करने की आवश्यकता, इसको ध्यान में रखने की आवश्यकता। मध्यस्थ दर्शन को सटीक एक अपनी मूलतः स्वीकृति के रूप में पाने के लिये इसको याद रखने की आवश्यकता है।

क्या हुआ - आदर्शवाद रहस्यमूलक ईश्वर केन्द्रित चिंतन का अभिव्यक्ति है। हर बात को हम ईश्वर के साथ जोड़ना चाहते हैं। ईश्वर से ही पैदा हुआ, ईश्वर में ही मरेगा, ईश्वर में ही रहेगा, ईश्वर के कृपा से ही हम संबंध पायेंगे, इस प्रकार से सारी बात आती है। हम यदि बहुत बड़ी धनी होते हैं, ईश्वर की कृपा से होते हैं। बहुत बड़ी भारी बली होते हैं तो भी हम ईश्वर की कृपा से होते हैं। बहुत भारी विद्वान होते हैं तो भी हम ईश्वर की कृपा से होते हैं। बहुत बड़ा भारी यश मिल जाता है तो ईश्वर की कृपा से होता है। ऐसा हम हर बात को उसी के साथ जोड़ते हैं। अच्छा मकान मिल गया, ईश्वर कृपा से मिल गया, अच्छा कपड़ा मिल गया ईश्वर कृपा से मिल गया, हर बात को ईश्वर की झोली से जोड़ना चाहते हैं। और उसके मूल में रिक्तता क्या रही - इसमें कोई आपत्ति भी बहुत ज्यादा दिन तक पता भी नहीं लगा है, इतिहास के अनुसार। कुछ बाद में कुछ पता लगा - ईश्वर को पहचाने बिना ईश्वर का झोली कहाँ से आई, ईश्वर की झोली में कैसा डाला जाये। इसके भी काफी चर्चाएं हुई, उसका कोई उत्तर निकला नहीं। इस ढंग से बात हुई। उसका प्रश्न चिन्ह पर कोई चीज़ है ही नहीं है, सबका उत्तर होना ही है। इसका अभी मध्यस्थ दर्शन निष्पन्न होने का कारण में से एक ये हुआ।

उसके बाद जैसे ही विज्ञान युग आया अपने ढंग से आदमी को पढ़ाना शुरू किया। अभी हम समझता हूँ - आदर्शवाद से अधिक जो संसार में यदि शिक्षा में स्वीकृत हुई, वो विज्ञानवाद ही है, भौतिकवाद ही है। इसको पूरा देश स्वीकारा है। सभी देश में एक ही प्रकार से विज्ञान को पढ़ाना देखा गया है। किन्तु मनुष्य उसमें आता नहीं। कैसे नहीं आता है? वस्तु से सब कुछ होता है। रासायनिक भौतिक वस्तु से सब कुछ होता है - ये विज्ञान का कहना है। कथन का सारभूत बात इतना ही है। जबकि ये दोनों से बची हुई चीज़ 'जीवन' का पहचान विज्ञान से हुआ नहीं - ये छूट गई। और उधर भी ईश्वरवादी के अनुसार भी जीवन का पहचान नहीं हो पाई। इसलिये आदर्शवादियों ने ये कहा है - जीव और जगत। जगत का मतलब को अपन साधारण रूप में आप भी अनुभव कर सकते हैं - भौतिक रासायनिक संसार को जगत के नाम से अपन अपनी अवधारणा में पा सकते हैं, और जीव के नाम से मनुष्य से लेकर सभी जीवों के साथ मनुष्य को भी जोड़कर के आप एक अवधारणा पा सकते हैं। जबकि वस्तु स्थिति इससे भिन्न है। मनुष्य एक अलग ही

चीज़ है और जीव संसार अलग है, ये दोनों अपने को स्पष्ट दिखता भी है। कुछ समझने चलते हैं तो समझ में भी आता है। ये इसमें कष्ट निहित हो गई। ये इस ढंग से अध्यात्मवादी मनुष्य को पहचानने में रह गए और उसके साथ जीवन को पहचानने में रह गए। जीव-जीव कहते हुए मनुष्य को ले गये। तो यह जीव में भय की स्वाभाविक प्रवृत्ति बताई गई। वो भय के लिये कोई आश्रय की आवश्यकता बताई गई। वो मूल आश्रय ईश्वर बताई गई, ईश्वर ही सब का भय को दूर करने वाला है। उनका कृपा होने का आवश्यकता है, ऐसा ले गये लोग। उसी की दो शाखा हुआ – पहले ज्ञान ही एकमात्र बात थी। उसके बाद भक्ति को भी लोक मान्यता मिली और लोगों ने भक्ति से भी भय का मुक्ति हो जाती है, ऐसा कुछ परिकल्पना आई। कौन छुड़ायेगा वाला बात आता है, उसमें भी ईश्वर के स्थान पर ये देवता आ गए।

देवता को प्रमाणित करने वाला कोई नहीं है और देवता से भय दूर हो जाएगा – ये हम सब के मन में भरे हैं। और भय तो मनुष्य की स्वाभाविक गति बताई गई। ठीक है? इस ढंग से भयभीत आदमी ईश्वर को वर करके भी कहीं, सभी भयभीती से मुक्ति हो गया – ऐसा कुछ नहीं मिला। या भयभीती से मुक्त हो गया है – ऐसा व्यक्ति अपने घोषणा भी नहीं कर पाया – हम भय से मुक्त हो गए भाई, भयमुक्त विधि से हम जी रहा हूँ, ऐसा कुछ भी नहीं कह सकते। तो भय से जो मुक्त हुआ है ऐसा जो सोचता है, जैसा सिद्ध हो गए, वो भी ईश्वर का प्रार्थना करना है हमको भय से मुक्ति कराओ, दरिद्रता से छुड़ाओ – वो उनको भी करना है, हमको भी करना है, क्या फर्क पड़ा इसमें? सारा दुख दरिद्रता से छुड़ाने के लिये एक सिद्ध आदमी भी वोही प्रार्थना करना है, और जो आप हम हैं, जो सिद्ध नहीं हैं, हमको भी वोही प्रार्थना करना है। क्या फर्क पड़ी इसमें? ये तो करना ही करना है। इस ढंग से संसार में अभी तक जीव जगत के बारे में आदर्शवादियों का नजरिया यही रहा। जीवों के सदृश्य ही आदमी है।

उसके बाद वो थोड़ा सा और उसमें भरे, ईश्वर कृपा से जीवों के ऊपर करुणा होती है। वो करुणा जो है मनुष्य के ऊपर भी बरसता है। उसी के आधार पर भैंस भी बोला वेद को, घोड़ा भी बोला वेद को, बकरी भी बोला वेद को, मेंढक भी बोला वेद को, ये सब कहना पड़ा – ये सब तो भरे ही हैं हमारे यहाँ। तो इस ढंग से हम फैले। फैल करके हम कहीं के नहीं रह गये। भाषा में बहुत फैले किन्तु प्रमाण के रूप में कहीं नहीं रहे। इन दोनों से हम पीड़ित होकर जब मनुष्य जो समझने वाला है, रोने वाला है, गाने वाला है, हँसने वाला है और पाने वाला है, खोने वाला है, तो इसमें ईश्वर कौन सा चीज़ को छुड़ाकर ले जाता है, कैसा ले जाता है। कौन ऐसा छुड़ा करके ले जाने वाला ईश्वर के अलावा कोई चीज़ होगा तो क्या चीज़ है – उसको एक प्रकार से खोजने की इच्छा हुआ। ईश्वर है तो चीज़ क्या है?

वो चीज़ के रूप में ईश्वर है कि भाषा के रूप में ही है? तो पहले ये भी कह गए थे, कहे हैं, कि शब्द को प्रमाण मानते हैं, वस्तु को प्रमाण मानवे ही नहीं किया – पहले-पहले। वस्तु जैसा आप है, आप गौण हैं, आपका नाम प्रथम है, ऐसा बात हो गई। इस प्रकार की चीज़ें आने से मनुष्य और भी गुमराह हो गया। तो मैं इसको शायद हमारा मूर्खतावश, अथवा हटवश, अथवा परिस्थितिवश, या हमारा स्वविवेकवश, अथवा नियतिवश – कहीं ना कहीं हम इसको लाँघ लिया। ये तो कहीं ना कहीं hotch-potch है, ये स्पष्ट नहीं है और इसका स्पष्ट रूपरेखा आवश्यक है।

जीवों में और मनुष्य में दूरी स्पष्ट है। वो दूरी का रेखा कहाँ है, जीवों में मनुष्यों में कहाँ से अंतर शुरू होता है? ईश्वर और जीव के बीच में क्या संबंध है? यदि ईश्वर है तो वस्तु के रूप में क्या चीज़ है? ये हमारा मूल सवाल थी। एक तो यह थी।

उसके बाद आई कि मोक्ष और बंधन के बारे में काफी बात किया जाता है, चर्चाएँ उपनिषदों में बहुत की गई हैं। ब्रह्मसूत्रों में किया गया है और योगसूत्र में भी किया गया – सभी किए। अपने-अपने ढंग से जो कर सकते थे उस समय में वो सब किये। वो हमारे लिये तो स्पष्ट नहीं हुआ, हमको बोध नहीं हुआ। तो तत्कालीन विद्वानों से, हमको बोध कराने के लिये हमारे तत्कालीन विद्वान सक्षम नहीं हुए, पूरा नहीं पड़े। फलस्वरूप हम अपने में प्रताड़ित होना, दुखी होना, संकटग्रस्त होना – स्वाभाविक बात रही है। इस ढंग से वो संकट बहुत दूर तक, बाकी जो हम वरीयता बनाये रखे थे, जीने के लिए – फैक्टरी (factory) लगाना, दुकान लगाना, व्यापार करना, वो करना, ये करना, घर में खूब आराम से रहना – ये सब एक प्रकार से वरीयता क्रम लगाये थे, वो धीरे-धीरे एक-एक को लाँघता हुआ आगे चला।

आगे चलकरके एक संयोग से सन् 1947 आया। 1947 में सत्ता हस्तांतरण हुआ हमारे देशवासियों के लिये और उस समय में एक संविधान बनाने की आवश्यकता आई। उसमें जो पहले जैसा संविधान था उसको यथावत स्वीकारा गया। उसमें तीन बात को उद्धृत किया गया – धर्म निरपेक्षता, समानता और गणतांत्रिक शासन प्रणाली – इसको स्वीकारा गया। उसके लिए तरीका अपनाया। वो तरीके बिल्कुल कामयाब नहीं हुआ अभी, किन्तु उस समय में हम यह बात को स्वीकारा कि भाई इस संविधान के तले कोई सही आदमी का मूल्यांकन नहीं हो सकता। वो आज पूरा का पूरा उतर भी रहा है। धीरे-धीरे यदि कोई कोने में नहीं उतरा होगा तो कल उतर ही जाएगा, उस जगह में हम आ गए हैं। ये जुड़ने के बाद इन सभी, जो हम लगाये थे वरीयता क्रम, उसके ऊपर ये चले गए। हमारा संकट इस सब के ऊपर चला गया, हमारा सारा सुविधा, सारा संग्रह, सारा हवीस – इन सब के ऊपर ये पहुँच गया। इसका वर्चस्व हो गया सब के ऊपर, बाकी सब इसके प्रभाव से प्रभावित हो गये, अंततोगत्वा मैं अपने को मानसिक रूप में तैयार किया – इसके ऊपर सोचा जाए, इसका निष्कर्ष निकाला जाए।

मूल में क्या केंद्रित हुई? बंधन और मोक्ष की बात आई, मूल मुद्दे में और दूसरा संविधान के पक्ष में, संविधान का ध्रुवीकरण होता है, नहीं होता है – ये मुद्दे बने। ये दोनों मुद्दे को लेकर पता चला हम जो कुछ भी साधना किया कहो, अभ्यास किया कहो, सोचा कहो या खेला कहो और कुछ भी नाम दे दीजिये, उसका परिणाम में हमको ये पता लग गई कि ये अस्तित्व में जीवन नाम की चीज़ है। सब से बड़ी भारी बात क्या हो गई – जो आदर्शवादियों के हाथ में नहीं लगी थी, विज्ञानियों के हाथ में नहीं लगा है, वो चीज़ है जीवन। दोनों के हाथ में नहीं लगा था। वो जीवन हाथ में लग गई, जीवन हमको समझ में आ गई। मैं जीवन हूँ, इस बात के यकीन मुझमें स्थापित हो गई। मैं ही, कुल मिला करके, अस्तित्व में द्रष्टा, कर्ता, भोगता हूँ। हमको जो कुछ भी बाकी संसार है – जैसे तारागण से लेकर, सूरज चाँद से लेकर, आकाशगंगा से लेकर, धरती से लेकर, हवा से लेकर, पानी से लेकर, मट्टी से लेकर – जितने भी चीज़ हमारे चारों तरफ फैली हुई है, इसके साथ ही मैं रहता हूँ, इसको छोड़ करके तो हम कहीं जाता नहीं हूँ। इसीलिए ये सहअस्तित्व है, साथ-साथ में होना है, इसका प्रमाण हमको समझ में आ गया।

उसके बाद ये भी आ गई – ईश्वर, जीव और जगत के बारे में जो बात करते रहे, ईश्वर के बारे में ये पता लगा, पहले से एक उपकार तो किए थे हमारे बुजुर्गों ने – ईश्वर व्यापक है। उसको पूछा गया था, उपनिषदों में चर्चा किए हैं, व्यापक का क्या मतलब है? वो कहा ईश्वर ही ईश्वर में व्यापक रहता है, ऐसा बात कही थी। जैसा सोना, सोने में ही व्यापक रहता है, लोहा लोहे में व्यापक रहता है, इस ढंग से बात कहना चाहा। इन चाहत के आधार पर हम संतुष्ट तो नहीं थे, किन्तु ये भाषा तो दे गये थे। तो उसके बाद जब हम देखे एक अस्तित्व की पूरा स्वरूप को, ये सब जगह में फैला हुआ वस्तु है, जिसको हम व्यापक कह सकते हैं। जो व्यापक रूप में फैला हुआ है, इसी में सभी प्रकृति – माने चैतन्य प्रकृति, (जीवन को हम चैतन्य प्रकृति नाम दिया है) – तो चैतन्य प्रकृति भी इसी व्यापक वस्तु में निहित है, जड़ प्रकृति – जो रासायनिक भौतिक वस्तुएँ हैं, ये भी इसी में निहित है – ये पता चला।

इसको अच्छी तरह से हमने समझा। ये दोनों समझ में आने के बाद यह पता चला कि मूलतः सहअस्तित्व ही है, प्रकृति और व्यापक वस्तु एक-एक वस्तु में नित्य सहअस्तित्व है, ये बात समझ में आया। इस नित्य सहअस्तित्व कभी भी वियोग नहीं होता है, इसको फाड़ा नहीं जा सकता, ना फटता है, इसको अलग नहीं किया जा सकता, अलग होता नहीं – इसलिए सहअस्तित्व नित्य वर्तमान है, इस ढंग से हम आ गए।

उसी के साथ-साथ ये अभी दूसरा भाग कहा था – आकाशगंगा से धरती तक, धूलि तक, पानी तक, हवा तक, सब के साथ हम रहते ही हैं। ये दोनों जब प्रमाणित हो गई, इसमें भी सहअस्तित्व ही है, मूलतः सहअस्तित्व ही है, फल भी सहअस्तित्व ही है, और मूल भी सहअस्तित्व है – ये बात स्पष्ट हो गई।

इस ढंग से हम जो भौतिकवाद और आदर्शवाद से छुटी हुई जीवन ज्ञान हासिल होने से ये मध्यस्थ दर्शन और जो भौतिकवाद और आदर्शवाद – दोनों से छुटी हुई थी – सहअस्तित्ववाद। इस ढंग से मध्यस्थ दर्शन, सहअस्तित्ववाद का मतलब में हम इतना निहित अर्थ को देखा है और उसी को स्पष्ट करने के लिए कई विधियों से प्रयत्न किया है। उसका जो चार अध्यायों में पूरा मध्यस्थ दर्शन को लिखा है। पहला अध्याय ये है – मानव व्यवहार दर्शन, दूसरा अध्याय है मानव कर्म दर्शन, तीसरा अध्याय है मानव अभ्यास दर्शन, चौथा अध्याय है मानव अनुभव दर्शन।

अनुभव के बारे में विगत में ये बात सोचा जाता था कि अनुभव को बताया नहीं जा सकता। बिल्कुल उसका उलटा हुआ – यदि सही ढंग से, सटीक ढंग से, उचित ढंग से, कारगर ढंग से और जीने के ढंग से, प्रमाण के ढंग से कोई चीज़ बताया जा सकता है, तो अनुभव ही है – हम यहाँ आ गए। कितना उलटा हो गया, एक दम पलटी खा गई! पलटी खाना यहां से शुरुआत हुई। होते-होते हर मोड़ मुड़े पर जहाँ-जहाँ व्यर्थता की मान्यता है, उसको सार्थक मान्यता के रूप में परिवर्तित करने के स्वरूप में हर मोड़ मुड़ा आने लगी, वो पलटी खाने लगे।

पलटी खाते-खाते यहाँ आ गई तो बहुत सारे अभ्यास, साधना, योग ये सभी बातें आते हैं, हम ये सब से गुजरे ही थे, इसका भी बात समझ में आ गई, ये सब समझदारी को अर्जन करने के लिए है, ना कि समझदार होने का प्रमाण नहीं है। कहाँ पहुँच गए? ये सारे उपक्रम समझदार होने के लिए इसका प्रयोग करना कोई अनुचित नहीं है, समझदारी यदि लक्ष्य है। यदि समझदारी लक्ष्य नहीं है, ये ही समझदारी है, क्या चीज़? योग, अभ्यास, तप, हवन, पूजा, पाठ, प्रार्थना, पत्री – यही हमारी समझदारी का यदि गवाही प्रमाण बताना चाहेंगे, ये सार्थक नहीं है। ये भी हमको समझ में

आ गया। हम ये सब कुछ करते हुए ही आए। इससे ये पता चला और भी अच्छी ढंग से हमको ये समन्वित¹ भी हुए, संबद्ध² भी हुए, प्रमाणित भी हुए – ये सब के बाद जो हमारा समझदारी आई, हम सहअस्तित्व में जीने में सार्थक हो गये। सहअस्तित्व में जीने के लिए तैयारी कर लिए तो क्या परिवर्तन हो गया भाई? हर समस्या का समाधान हमारे पास, हर परिस्थिति में हम अपने में समृद्ध हैं, हम पराधीन नहीं हैं। हम भयभीत होने का कोई जगह नहीं हैं, हम अपने पुरुषार्थ से हम समृद्धि का अनुभव करते हैं, अपने ही पारमार्थिक अर्थात् अभ्यास विधि से हम समझदारी से संपन्न हो जाते हैं, समाधान से परिपूर्ण हो जाते हैं। अब अभ्यास का दो ही विधि बनी – एक तो यह विधि बनी – समझदार बनने के लिए अभ्यास करिये, उसको हम जिज्ञासा कहते हैं। दूसरा समझदारी को प्रमाणित करने में अभ्यास करिये, ध्यान दीजिये, ऐसा मैं कहता हूँ, जो कि मैं स्वयं करता हूँ। इस ढंग से सहअस्तित्ववाद का प्रयोजन जीने की जगह तक पहुँचा। जीने में आने में क्या बनता है? समाधान, समृद्धि पूर्वक हर परिवार में जीना बनता है, ये मुख्य बात है।

उससे जो उपकार का रास्ता बनी बहुत लंबा बनी, ऐसा हर परिवार यदि हो सकता है, नहीं हो सकता है – बात आई – उसके बाद ये हुआ, हम जो समझा हूँ, दूसरा कोई समझ सकता है कि नहीं, इसको कसौटी में लाने की आवश्यकता आई। जो समझा हूँ, उसको और हमारे मानव परंपरा में जो है, उनमें डालने की कोशिश की, ऐसा लगा कि दूसरों को ये पहुँचता है। यहाँ आ गए। उसका प्रमाण भी धीरे-धीरे धरती में उदय होने लगी, उसमें और भी हम सुदृढ़ हुए। इस ढंग से हम जो समझा हूँ इसका प्रमाण हम किसी को समझाना, वो दूसरे को समझाने पर वो अंतरित हो जाना, अर्पित हो जाना – इस स्थिति में हम प्रमाणित होते हैं। हम समझ गया हूँ, हम हमारे में कोई प्रमाण नहीं है।

सहअस्तित्व में ही प्रमाण होगा। इस ढंग से समझा करके ही हम समझदार प्रमाणित होता हूँ। हम किसी को सिखा करके ही हम सीखा हुआ हूँ, इस बात का प्रमाण हो पाता है। किसी को उपलब्ध करा दिया तो हमारा उपलब्धि होना भी प्रमाणित हो जाति है। इस ढंग से ये तीनों जगह में – कुछ पाने के लिये, कुछ करने के लिये, कुछ समझने के लिये – आदमी जिज्ञासु है। इन जिज्ञासा में सबसे बाधक है भय। भय जो है ना ईश्वरवाद – ईश्वरवाद को जब तक हम ओढ़े रहते हैं – तब तक हम भय से मुक्ति नहीं पायेंगे। ईश्वरवाद का क्या मतलब है? ईश्वर सब कुछ करता है। इस भ्रम को छोड़ देना चाहिये। ईश्वर की ताकत से हम सब भरे हैं – इसको उपयोग करके हम समृद्ध हो सकते हैं, समाधानित हो सकते हैं – इस ढंग से सोचने की आवश्यकता है।

ये कुल मिला करके सहअस्तित्व की, सहअस्तित्ववादी विचार का, मूल रूप ऐसा आता है। क्यों ऐसा कहते हैं भाई? उसका जो बहुत साधारण बात है – जैसा आप हमारे बीच में जो रिक्त स्थली है, यही स्वयं में व्यापक वस्तु है। हर परस्परता में यह रिक्तता रहती है, ये खाली स्थली रहती है। एक परमाणु अंश से लेकर दूसरे परमाणु अंश के बीच में ये रिक्त स्थली रहती है। यदि गणितीय भाषा का एक संख्या भी मानते हैं, हम गणितीय भाषा को वस्तु मानते हैं, विद्वानों ने अभी तक ये भी माना है – गणितीय भाषा को संख्या भी मानते हैं। संख्य विधि से यदि किसी एक को विखंडित करते चलें जाएँ, कितना भी विखंडित करें, एक टुकड़े से दूसरा टुकड़ा के बीच में यह रिक्त स्थली रहती है। रिक्त स्थली से मुक्त कोई होता ही नहीं, कितना भी टुकड़ा करिए, सभी टुकड़े के सभी ओर यह रिक्त स्थली रहेगी।

¹ समन्वित : मिला हुआ, संयुक्त, जिसमें कोई रुकावट ना हो

² संबद्ध : लगा हुआ, जुड़ा हुआ, सम्बन्ध रखने वाला

इसलिये टुकड़ा माना जाता है, नहीं तो कोई दूसरा रास्ता ही नहीं है टुकड़ा मानने की। ये तो कल्पना में ही आता है – संख्या से विखंडित करना। इसमें यही कल्पना आती है हर टुकड़े के सभी ओर यह रिक्त स्थली रहती है, तभी हम टुकड़ा कहते हैं। नहीं तो कह ही नहीं सकते। एक उमड़ा को भाग-विभाग करते हैं – टुकड़ा करते हैं, वो इसीलिए उसे टुकड़ा किए मानते हैं कि उसके सभी ओर रिक्त स्थली दिखती है। पहले कैसा था? वो कुंडे में वो रिक्त स्थली बना ही था, उसके बाद आपका सहयोग से वो प्रदर्शित हो गया।

इस ढंग से यदि हम जाते हैं तब पता लगता है ये व्यापक वस्तु सभी वस्तु में, सभी एक-एक वस्तु में पारगामी है, आर-पार हो गया। इससे क्या हो गया भाई? सभी एक-एक बल संपन्न हो गये, ऊर्जा संपन्न हो गये, चुम्बकीय बल संपन्न हो गये। चुम्बकीय बल संपन्न होने का क्या प्रमाण मिला? प्रमाण ये मिला – एक-एक परमाणु अंश एक से अधिक से मिलकर व्यवस्था को प्रमाणित किया। एक से अधिक परमाणु मिलकर एक अणु को प्रमाणित किया और एक से अधिक अणुएं मिलकर एक रचना को प्रमाणित किया, और वो ही अणुएं प्राण-कोशा बनकर अनेक प्रकार की रचना कर दिया। ये रासायनिक भौतिक कार्यक्रम का यही लंबाई-चौड़ाई जो हम आपको फलवती के रूप में मिलता है। फल के रूप में मिलने वाला इतना ही है। इसके ऊपर कितने भी प्रश्न हो सकता है, उसका उत्तर हमारे पास है। धीरे-धीरे यह बात को तय किया जा सकता है। इसमें कोई शंका होता है, उसको पूर्णतया विश्वास की धरती तक पहुँचाने की विधि, पहुँचाने का कार्य और इन सभी में हम कुशल हैं, परिपूर्ण हैं। इस ढंग की बात हुई।

तो विज्ञान से ये जुड़ गयी और मान्यताओं से आधारित वो बनी। अब क्या हो गई? विज्ञान एक अलग संसार नहीं है और ना तो आदर्शवाद कोई अलग संसार नहीं है। कैसे? तो अस्तित्व में ही हम विज्ञान और विवेक दोनों का प्रयोग करते हैं। मैं किया हूँ, जो ज्ञान से विवेक, माने समझदारी से विवेक। विवेचना करने की विधि बनती है, उससे लक्ष्य निर्धारित होता है। क्या लक्ष्य है? मानव का लक्ष्य, जीवों का लक्ष्य, वनस्पतियों का लक्ष्य और पदार्थ संसार का लक्ष्य। सब समझ में आता है। निर्धारित विधि से सभी पदार्थ संसार अपना कार्य कर ही रहे हैं। इसका नाम है पदार्थ संसार में जो कार्य करते हैं, नियम पूर्वक करते हैं, नियंत्रण पूर्वक करते हैं और संतुलन पूर्वक करते हैं। ये तीन विधि से पूरा रासायनिक भौतिक संसार अपना कार्यकलाप को सम्पन्न करता ही आया है। पहले से भी आया है, अभी भी कर रहा है, उसी विधि को जो अनुसरण करते हैं, हम उसमें सफल हो जाते हैं। उस विधियों को हम जहाँ कहीं भी ताक में रखते हैं, वहाँ हम सफल नहीं हो पाते हैं। अभी कुल मिलाकर के यही है – दोनों विद्या से आदमी काम कर रहा है, प्रयोग कर रहा है। उसके अनुकूल, प्राकृतिक नियति विधि के अनुकूल, कुछ कार्य योजनाओं को बनाता है, उसमें सफलता का अनुभव करता है, उसके विपरीत करता है, असफलता का अनुभव करता है। असफलता के फलस्वरूप हम ना-ना प्रकार के परेशानियों को हम झेलते ही हैं। सफलता के आधार पर अपने छातियाँ फूलती ही है, ये दोनों को मनुष्य करता जा रहा है। इस ढंग से कहाँ पहुँचें हम? सहअस्तित्ववाद का मतलब क्या हुई? व्यापक वस्तु, एक-एक वस्तु साथ-साथ में है, ये विभक्त³ हो नहीं सकता, इसलिये यह सहअस्तित्ववाद है। हमारा जो कुछ भी विज्ञान विधि से तर्क को हम प्रोड्यूस (produce) करते हैं, प्रस्तुत करता हूँ, इसका पूरा तर्क विधि इसी से जुड़ा हुआ है। दूसरा मध्यस्थ दर्शन के आधार पर हम जो कुछ भी प्रतिपादन करता हूँ, ये सहअस्तित्ववाद से ही निर्भर है, मूल तत्व,

³ विभक्त : अलग किया हुआ, बांटा हुआ

उसको मध्यस्थ दर्शन नाम दिया है। नाम कैसा दिया? क्योंकि विज्ञान ने अछूता रखा और आदर्शवाद ने अछूता रखा था। किसका? ये मनुष्य का अध्ययन को। मनुष्य जो है ना जीवन और शरीर का संयुक्त रूप में, सहअस्तित्व में है – इस बात का अध्ययन नहीं कर पाया, फलस्वरूप मनुष्य अपने में विश्वास करना नहीं बना, फलस्वरूप हम कहीं ना कहीं लटके रहना, किसी बैसाखी को खोजते ही रहना, ये बनते ही आया, आज भी उसी स्थिति में आदमी जात है।

आदमी जात की इस विपन्नता को दूर करने की संभावना है। किस विधि से? सहअस्तित्ववादी विधि से। इन दोनों के हाथ से छूट गया था, इसी लिए मध्यस्थ दर्शन। इन दोनों की दर्शन विधाओं से, चिंतन विधाओं से, जो हाथ से छूट गई थी – क्या चीज़ छूटा भाई? जीवन। जीवन का प्रतिपादन इन दोनों विधाओं से छूटी थी, इसी लिए ये मध्यस्थ दर्शन हुई। ये निरंतर व्यवस्था में जीता है, इसी लिये सहअस्तित्ववाद है, इस ढंग से ये वाक्य बनता है। ये सतत् सभी जगह में सहअस्तित्ववाद का जो प्रतिपादन व्यवस्था के रूप में, हर वर्तमान में, नित्य वर्तमान में प्रमाणित होती जाती है। हर मनुष्य के अध्ययन से जीवन की अस्तित्व हमको समझ में आता है, आपको भी समझ में आएगी। हमको भी विश्वास होता है, आपको भी विश्वास होता है – इसके आधार पर ये मध्यस्थ दर्शन – ये आई। इस ढंग से मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद का सार संक्षिप्त स्वरूप प्रस्तुत हुआ।

2. मानव केंद्रित चिंतन

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 2, time 37:13-47:17](#)

प्रश्न- बाबाजी आपने इस चिंतन को - अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन - ऐसा क्यों कहा? मानव को केन्द्र में रख कर सोचने की क्या जरूरत थी? और अस्तित्व मूलक होने से आपका क्या आशय है? और पुरानी विचार धाराएँ जो हमको मानव जाति की मिलती हैं, उसमें क्या कमी रह गई थी जिसकी वजह से आपको इस नाम से एक चिंतन को मनुष्य जाति के सामने रखना पड़ा?

उत्तर : अभी इस बात पर आपने प्रकाश डालने के लिये कहा है कि मध्यस्थ दर्शन अपने आप में ये प्रतिपादन किया है कि अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन है। या दूसरा विधि से यह भी बता कहा है अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिंतन से ये मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद निष्पन्न हुई - ये बात को प्रकट किया है। आपने इस बात का प्रश्न किया है - अभी विगत में जो दो बात आ गई थी, उसके बाद भी आप तीसरे प्रकार से अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन बताने की क्या आवश्यकता आ गई थी। ये आपने पूछा। ये आवश्यकता ही नहीं है, नितांत हमारा तकाज़ा हो गई, दूसरा कोई रास्ता ही नहीं रह गया। दूसरा कोई विधि से इसको कोई बताया भी नहीं जा सका। ऐसा हम परिस्थिति में आ गये। क्योंकि अस्तित्व विगत दोनों प्रकार की विचार से ,आपसे विनय किया है, अस्तित्व पूरा अध्ययन गम्य नहीं हुई थी, ये एक बात बताया। दूसरा मनुष्य तो पहले से भी था, मनुष्य ही सब कुछ करता रहा, विचारता रहा, मनुष्य अपने जीवन को ही पहचानने में कोई रास्ता नहीं निकला था। ये बात आपको बताए थे। तीसरा बात ये भी बताया है कि जीवन ही दृष्टा कर्ता भोगता है। वो दृष्टा पद को, कर्ता पद को, भोगता पद को मानव परंपरा में ही जीवन प्रमाणित करता है। मूल मुद्दा यही है। दू

सरा कोई परिस्थिति में, जैसा कि जीव संसार में भी जीवन होता है, होते हुए दृष्टा, कर्ता, भोगता पद को वो प्रमाणित नहीं करता है। इस आधार पर मनुष्य ही दृष्टा, कर्ता भोगता पद को प्रमाणित करता है, इस विधि से अस्तित्व तो नित्य वर्तमान है ही है, आप माने चाहे न मानें, जानें चाहे न जानें, वो दोनों फर्क नहीं पड़ने वाला है। अस्तित्व तो रहता ही है, जो थी नहीं वो होते ही नहीं। वर्तमान में जो कुछ भी प्रमाणित होता है, वो था ही पहले, वोही प्रमाणित होने में आता है। अब रह गया कि मनुष्य उसको जो था, उसको क्या मनुष्य ने पहचाना था? यह प्रश्न बनता है। इस प्रश्न के अर्थ में तो पहले कुछ पहचाना गया - ईश्वर, परमात्मा, देवता - इस प्रकार की परिकल्पनाएँ हुई और उसके बाद, जो है ना वस्तु, रसायन, भौतिकता, ठोस, तरल, विरल ये सभी बातें शुरू हुई। इसके आधार पर कुछ बातें ये प्रस्तुत किये। प्रस्तुत करने पर इसका गम्य स्थली संग्रह सुविधा की जगह में पहुँचाया, भौतिकवादी विधि से, वो पूरा होने वाला नहीं है। इसीलिए ये कहीं भी परिवार या समाज व्यवस्था होने का तरीके की आधार नहीं बना। इतनी ही बात है।

दूसरे विधि से आदर्शवादी विधि से हम चले गये - ईश्वर सब कुछ करता है, हमारा कोई ज़िम्मेदारी ही नहीं रहा। हर क्षण में, हर पल में ईश्वर से डरते रहो और डर करके प्रार्थना करते रहो जो - जो कुछ भी घटित होता है, उन्हीं की कृपा से हो रहा है मानो। मर गये तो उन्हीं से रूठ गए और जी गये तो भगवान की कृपा रही, इस ढंग से हम व्याख्या

देने लगे। इस ढंग से – डर भय से – जीने वाली बात इश्वरवाद से आई है। ये लिखा ही है, उसको और थोड़ा स्पष्ट कर दूँ – भय प्रलोभन जो बताएं हैं – स्वर्ग-नर्क, भय-प्रलोभन – जोड़ा है ये। नर्क के प्रति भय पैदा करना और स्वर्ग के प्रति प्रलोभन पैदा करना – जितने भी परिकथाएं लिखी गई हैं, इसका मतलब उतना ही है। जो आदर्शवादी विधि से परिकथाएं हैं, असंख्य परिकथाएं लिखित रूप में आ चुकी हैं – आप लोग देख भी सकते हैं, देखे भी होंगे। ये मेरा सोचना है। इस ढंग से क्या हुई? डर भय से मुक्ति आवश्यक है मनुष्य को, हर मनुष्य यह सोचता है डर ना रहे, हर मनुष्य यह चाहता है भय न रहे और हर मनुष्य यह चाहता है, कहीं ना कहीं, हम विश्वासपूर्वक जी सके, यह तो हर मनुष्य में निहित है ही। मनुष्य अपने में विश्वास करना, जब तक भय है, तो कहाँ से विश्वास करेगा भाई? इसके लिये डर भय के स्थान पर समाधान समृद्धि उपस्थित हो सके और ये स्थिति को हमने देख लिया, जी लिया, उसके बाद हमने सोचा अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन है ये।

ये चिंतन कहाँ से आ गई? अस्तित्व तो था ही, मानव था ही, किन्तु यह सीधा अस्तित्व से सारा-सारा सूत्र को, किस सूत्र को – जीने के सूत्र, number १, जीने में सुख को अनुभव करने के सूत्र, समाधानित होने के सूत्र, समृद्ध होने के सूत्र, वर्तमान में विश्वास करने का सूत्र और सहअस्तित्व में जी रहे हैं, इस बात को प्रमाणित करने का सूत्रों को हासिल कहाँ से करता है? अस्तित्व से करता है। प्रकाशित कौन करता है? मानव ही करता है, दूसरा कोई करने वाला नहीं है। कितने भी चीख लें, चिल्ला लें, और दूसरा कोई करेगा नहीं, जीव संसार ये काम करेगा नहीं, वनस्पति संसार ये करेगा नहीं और पदार्थ खनिज ये तो करेंगे नहीं। इस ढंग से ये बात अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन का आधार बना। क्या चीज़ से? जो वर्तमान में प्रमाणित होने के धरती से। ये भी नहीं है कि आपको बात बता दिया, ऐसा नहीं है। वर्तमान में प्रमाणित होने की धरती से ये नाम पड़ा।

अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन विधि से ही हर मानव समाधानित होगा अध्ययन से और अनुभवमूलक विधि से ये समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व को प्रमाणित करेगा। जो समाज का वांछित फल है। समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व – ये चार जो फल है, ये चारों चीज़ मानव जाति की अपेक्षा है। ये चारों एक आवश्यकता के रूप में रखी हुई है। इसको सार्थक बनाना अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन से ही सार्थक हुआ। क्यों हुआ? आदमी ज़िम्मेवार बनता है, इस आधार पर वो बन जाती है। समझदारी के बाद ईमानदार होता है, ईमानदारी के बाद ज़िम्मेवार होता है, ज़िम्मेवारी के बाद भागीदारी करता है। भागीदारी का फलन है समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व। इस ढंग से अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन का नाम रखना उचित समझा। इसमें और भी जो मेधावियों का सुझाव संभावित है और उसको हम स्वागत करते ही हैं, और इसमें यदि कोई न्यूनतः हो, उसको पूरा करने के लिये हम पूरा तत्पर हैं।

इस संबंध में जितना भी प्रश्न होगा, उसका उत्तर हमारे पास है सार्थकता के आधार पर। एक – अस्तित्व ध्रुव है, दूसरा – मानव में जागृति ध्रुव है। जागृति ध्रुव होने के बाद उसका कसौटी यहाँ आती है – क्या मानव समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व पूर्वक जी रहा है? जीने के लिए तत्पर है? इस कसौटी से ये दोनों चीज़ प्रमाणित हो जाते हैं – अस्तित्व भी और जागृति भी। इस तरीके से ये दोनों चीज़ प्रमाणित हो जाते हैं। कौन चीज़? अस्तित्व भी और जागृति भी। मानव में ही जागृति प्रमाणित होगी और कोई जीव जानवर और दीवाल इससे प्रमाणित होने वाला नहीं है। जागृति हर मानव में प्रमाणित होने की स्थिति में समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व निरंतर वर्तमान में

प्रमाणित होगी। फलस्वरूप आदमी जो अमन चैन चाहता रहा, सुख समृद्धि चाहता रहा, जान-माल का सुरक्षा चाहता रहा आदिकाल से, वो सार्थक हो जाता है। अभी तक वो सार्थक नहीं हुआ। धर्म तंत्र से भी नहीं हुआ, राजतंत्र से भी नहीं हुआ। इसलिये अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन ही इस जगह में पहुँचाने के लिये सार्थक है, इसको मैंने देखा है। इसमें मैं जिया है, इसमें मैं स्वयं प्रमाणित हूँ। इसके आधार पर उसका नाम दिया।

जय हो, मंगल हो, कल्याण हो!

3. जीवन की शक्ति व बल

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 1, time 26:18-1:04:07](#)

जय हो, मंगल हो, कल्याण हो!

अभी यहाँ जितने भी जिज्ञासु मेधावी बैठे हैं, इन सब का आज ऐसा आग्रह है, कल जहाँ तक संबोधित किए, प्रबोधित किए, उसके आगे बढ़ाने को। आगे बढ़ाने की मुद्दा भी सुस्पष्ट है। कल अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिंतन ज्ञान, बनाम मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद की जिक्र की थी। उसका सार्थकता के बारे में, आवश्यकता के बारे में, एक स्वयं स्फूर्त प्रेरणा के बारे में अवगत कराने की कोशिश किए थे। उससे आप लोग सब लोग विद् हैं। आगे जो मानव शब्द आता है, अस्तित्व शब्द आता है, अस्तित्व में भी पुनः अवलोकन करने की आवश्यकता, अवलोकन का मतलब अवधारणा के रूप में वस्तु को देखने की विधि। तो अवलोकन करने के क्रम में ही अभी मानव को पहले स्पष्ट कर लेते हैं और अस्तित्व को स्पष्ट कर लेते हैं। अस्तित्व का विधि को भी समझ लेते हैं, मानव का भी जो जीवन और शरीर का समुच्चय में जो विधि है उसको समझ लेते हैं। यही मानव विधि बनेगी, अंततोगत्वा।

जो विधि व्यवस्था के बारे में आदिकाल से जो अपन फंसे हुए हैं – दिशा विहीन, लक्ष्य विहीन – विधि से सब कुछ करके, शत-विक्षत⁴ हो करके गिर जाते हैं, कुछ करने जाते हैं तो अंततोगत्वा वो विफल हो जाता है और कुछ सोचते हैं उससे भद्दी ही विधि को सोचा जाता है। अंततोगत्वा भद्दी⁵ से भद्दी, भद्दी से भद्दी की ओर जाते-जाते अभी हम कहीं पहुँच गए हैं जो अपने को खुद को भी इतने ज्यादा स्पष्ट नहीं है फिर भी मुद्दे के रूप में ये हो गई है, धरती रोग-ग्रस्त हो गई, मानव के पास दिशा और लक्ष्य नहीं है। ये यहाँ तक तो सुस्पष्ट है। अभी सारा प्रयास इस अभियान में यही है, तो मनुष्य का मनुष्य के लिए दिशा और लक्ष्य स्पष्ट हो जाये और धरती का रोग दूर होने की कोई विधि तैयार हो जाये। इसी आशय से इस कार्यक्रम को शुरू किया गया है। इसमें मैं समझता हूँ सहमति तो ९९ % है ही है, और रहा कि अब निष्ठा के बारे में कैसा प्रयोग कर जाए, निष्ठा को कैसा स्थापित किया जाए, निष्ठा कैसे परंपरा में प्रमाणित हो जाये – इसी आशय को लेकर ये कार्यक्रम को हम संपन्न कर रहे हैं। पहले मुद्दा तो यह है।

अस्तित्व में मानव एक इकाई है। मानव का अध्ययन मैंने किया है, मानव का अध्ययन में ये आई है – शरीर भी है जीवन भी है। जीवन का अध्ययन कैसा कर लिया? यह बात एक सुस्पष्ट प्रश्न है, यह सभी में आता है। मानव का, जीवन का अध्ययन इस प्रकार से कर लिया, उसके मूल में अस्तित्व को समझा। अस्तित्व को समझने पर यह पता चला परमाणु में विकास होता है – मूल मुद्दा यहीं से है। तो विकास का आधार परमाणु है और कुछ भी नहीं है अस्तित्व में। विकास पूर्णता का भी आधार परमाणु ही है और कुछ भी नहीं है। जागृति पूर्णता का भी यदि कोई चीज़ है वो जीवन परमाणु ही है और कोई चीज़ नहीं है। यह मुख्य मुद्दा है। तो इसमें अभी तक क्या परेशानी आई थी – उसके ओर एक नज़रिया।

⁴ शत-विक्षत : जिसका शारीर घावों से भरा हुआ हो, घायल, लहलुहान

⁵ भद्दी : कुरूप, बदसूरत

आदर्शवादी विधि से ईश्वर सब को जीवन प्रदान करते हैं, प्राण रूप है, प्राण से ये सब कुछ संचालित होते हैं – ऐसा बताया। उसके बाद कहा कि आत्मा के रूप में सब को संचालित करते हैं – वो प्राण से आत्मा में आ गए। आत्मा में आने के पश्चात आत्मा के बारे में जब वाद-विवाद हुआ, चर्चाएँ हुई हैं, आत्मा को स्पष्ट करने में असमर्थ रहे। अध्यवसायिक⁶ विधि से आत्मा स्पष्ट नहीं हुई। इस ढंग से आदर्शवादी बात यहाँ रुक गयी। माने आगे विकसित होना संभव नहीं हुआ और प्रेरणावादी बात तो परस्परता में मनुष्य में कहीं ना कहीं, कुछ ना कुछ तो है ही है। एक दूसरे मनुष्य के लिए प्रेरक होता ही है। इसके आधार पर बहुत सारे साधना विधि नियन्त्रि⁷ तैयार कर लिया। उसको भी बहुत सारे लोग प्रयोग किए। प्रयोग करने के बाद यह तो नहीं निकला कि मनुष्य कि जो आवश्यकता है सुख, सुख के मूल में यह शोध करके देखा गया है – समाधान। सुख के मूल में समाधान के बिना मनुष्य को सुख मिलने वाला नहीं। समाधान के मूल में समझदारी। समझदारी जो है स्वयं मनुष्य का अध्ययन हो जाए – समझदारी कहा जाए, अस्तित्व का अध्ययन हो जाये – समझदारी कहा जाये। इससे ज्यादा कुछ होता नहीं है इससे कम में समझदारी होती नहीं।

इस ढंग से आदमी जात के सम्मुख – चाहे वरदान कहिए, चाहे अभिशाप कहिए, ये अपने सम्मुख आ गया है। इसको जो कुछ भी आप नाम दो। इस क्रम में हम यहाँ पहुँचते हैं – मनुष्य अध्ययन करने योग्य है कि नहीं है? उसको जाँचा। जाँचने पर पता लगता है की अध्ययन करने योग्य है। अध्ययन क्या – आँख, नाक, पैर अध्ययन करता है या और कोई चीज़ करता है? पता चला और कोई चीज़ करता है। और कोई चीज़ करता है तो आदर्शवादीयों के आधार पर आत्मा होता है और सहअस्तित्ववादी विधि से बनता है – जीवन अध्ययन करता है। यह बात बनी। पहले से आत्मा को अध्यवसायिक विधि से बोधगम्य कराना असंभव था, अभी जीवन को अध्यवसायिक विधि से हम बोधगम्य कराने में सफल हो गया हूँ। कुल मिला करके यह एक प्रकार से उत्सव की बात कहिये या हमारा उत्साह की बात कहिये, संभावना की बात कहिये – जैसा भी आपको मन पड़ता है – वोही बात को आप अपनाइए। इस जगह में हम आ गए।

इस जगह में आने के बाद हम मनुष्य का अध्ययन में लगे। शरीर का अध्ययन करने पर यह पता चला, गर्भाशय में मनुष्य का शरीर भी रचित होता है। यह पता चला। गर्भाशय से बाहर होने के बाद बड़ा होना, माने रोगी रहना या स्वस्थ रहना, यह सब चीज़ शरीर के साथ जुड़ी हुई है। किंतु रोगी शरीर हो या स्वस्थ शरीर हो गर्भाशय में ही रचित होता है, यह बात का पुष्टि मिल गई। संभवता अभी जो शरीर शास्त्री, शरीर शास्त्र को जितना अध्ययन किए हैं, उनका भी ऐसा निष्कर्ष होना चाहिए संभवता, उसी आधार पर यह कृत्रिम⁸ रूप में भी शरीर रचना की बात सोचते हैं और प्राण कोशायें नहीं बन पाई, फल स्वरूप कृत्रिम रूप में शरीर रचना की कल्पना अधूरा है, वो अभी स्थगित करके रखा हुआ है। आगे चल करके आवश्यकता पड़ने पर अनुसंधान करेंगे, शोध करेंगे, जो सफलताएँ मिलेंगी वो मानव सम्मुख आवे करेगा। इस ढंग से एक तरफ ये आ जाता है कि मानव शरीर रचना गर्भाशय में ही होता है। यह गर्भाशय

⁶ अध्यवसाय : परिश्रम, उत्साहपूर्ण लगन

⁷ नियंता : नियंत्रण रखने वाला, प्रबंधक, प्रशासक

⁸ कृत्रिम : शिल्प / मानव निर्मित (synthetic)

जैसे ही परिस्थितियाँ निर्मित करने पर हो सकता है। यह ऐसा हम कल्पना करते हैं और प्रमाण तो यही है – मानव शरीर मानव के गर्भाशय में ही तैयार होता है। मानव संज्ञा, मानव शब्द में नर नारी दोनों इंगित हैं, समाहित हैं। इस आधार पर मानव शरीर में ही शिशुओं का गर्भाशय में रचना होना यह सर्व विदित है, इस पर बहुत सारा बात करना भी अभी आवश्यक नहीं है।

अब रह गया, मानव शरीर द्वारा जो प्रमाणित होने वाले वस्तु – आशा, पहले जीने की आशा – यह हाथ में है आशा, पैर में है – इसको खोजा गया यह दोनों से परे है। ये पता चला। इसी प्रकार इसको सोचने के बाद अस्तित्व में जो देखे गए, परमाणु में विकास को देखा गया। परमाणु में विकास के क्रम में तो भौतिक रासायनिक प्रक्रिया तो होते ही हैं। उसके बाद जो विकास पूर्णता की पद में जीवन प्रतिष्ठा, जीवन पद प्रतिष्ठा, प्रमाणित हो गया है। जीवन के रूप में एक परमाणु संक्रमित होना पाया जाता है। आप यदि देखेंगे, समझेंगे और शोध करेंगे, आप भी पाएंगे, मैं तो पा चुका हूँ। तो ऐसे ही जीवन पद में संक्रमित परमाणु चैतन्य इकाई के नाम से परमाणु अपना काम करता है। चैतन्य इकाई जड़ इकाई में क्या अंतर है? ये बात को अच्छी तरह से देखा गया। जड़ इकाई में जो अणु, परमाणु से अणु रचित रचनाओं के रूप में ही कोषाओं भी अणु का ही एक रचना है। तो इस ढंग से अणु रचित रचना के रूप में ही रासायनिक भौतिक संसार को हम पहचानते हैं। ये संभवता अभी तक की जो चलते आई हुई अध्ययन में भी ऐसे ही निष्कर्ष निकले होंगे या नहीं निकला होगा तो आगे निष्कर्ष निकाल लेंगे, क्या बुरा है इसमें। ये इस ढंग से आ गए।

जहाँ तक चैतन्य इकाई की बात आती है, गठनपूर्ण परमाणु का प्रतिष्ठा है ये। इस प्रतिष्ठा में क्या विशेषताएं हैं – वो थोड़ा सा ध्यान देने की बात है जो मनुष्य में प्रमाणित होता है। पहली बात यह है जीवन अपने आप में भार मुक्त, भार बंधन मुक्त और अणु बंधन मुक्त है। तो उसका क्या प्रमाण होता है? हमारा जितने भी कल्पनाएँ होते हैं, कहीं भी परिसीमित होने की व्यवस्था में नहीं है। कहीं ना कहीं बंद गए, ऐसा कुछ नहीं। हम कल्पना आगे की करते ही हैं। अभी आज जितना किए कल आगे उसको करेंगे, और करेंगे, और करेंगे, और करते ही रहेंगे। करते ही आए और करते रहेंगे भी। इस ढंग से आशा की प्रवाह को अक्षय प्रवाह के रूप में हम देख पाते हैं। अक्षय प्रवाह के बारे में जब हम एक पहचान कर पाते हैं, उसी जगह में से यह जिज्ञासा होता है – यह क्या भौतिक रासायनिक अणुओं से निष्पन्न हो सकता है? उसको भी हम खोजेंगे।

इसमें से पता चला भौतिक रासायनिक अणु परमाणुओं से यह अक्षयता निष्पन्न नहीं होती है, क्योंकि वर्धमान विधि है, क्षय विधि है, इन दोनों में। क्षय विधि को हम शरण विधि मानते हैं, माने कम होते हुए स्थिति में पाते हैं और वर्धमान विधि को बढ़ते हुए देखते हैं। क्या चीज़? प्राण कोषाएं एक की जगह में लाखों हो गए, उसका रचना हो गई – ये वर्तमान विधि है। ये वर्तमान विधि से हर रचनाएँ हुई हैं। उसी प्रकार पहाड़, पत्थर, लोहे का पत्थर, मणि, धातु – ये सभी चीज़ें अणुओं से रचित हुए हैं। ये भी वर्तमान विधि से रहते हैं। वर्तमान विधि से जो हुए रहते हैं उसका परिणाम ही होता है। पुनः वापस मट्टी-पत्थर मणि-धातु में परिणत होते हैं, वो मणि-धातुएं मट्टी-पत्थर में परिणत हो जाते हैं। इसको एक आवर्तनशीलता के रूप में हम देख सकते हैं। अस्तित्व में यह सभी चीज़ रहेगी ही। पदार्थ अवस्था कि चार स्वरूप को – मृत पाषाण मणि धातु – मट्टी पत्थर मणि और धातु – इसका जो निरंतर होना पाया जाता है। यह समृद्ध होने के बाद ही प्राण अवस्था की प्रवृत्ति है। ये प्रवृत्ति कहाँ से आता है पूछा? इसके लिए प्रवृत्ति मूलतः सहअस्तित्व से आता है। सहअस्तित्व से ही प्रवृत्ति है। जैसा सत्ता सब में पारगामी होने के आधार पर सभी

ऊर्जा संपन्न हैं, बल संपन्न हैं - ये बात को कल भी एक बार बता चुके हैं। वो बल सम्पन्नता ही है - चुंबकीय बल सम्पन्नता के रूप में विद्यमान रहता है। इसी से एक परमाणु अंश दूसरे परमाणु अंश को पहचानना और स्वयं स्फूर्त विधि से व्यवस्था को प्रमाणित करना, क्योंकि अस्तित्व में यह भी देखा गया है प्रत्येक एक अपने त्व सहित व्यवस्था है समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है। ये स्रोत है - स्वयं स्फूर्तता का स्रोत यही है। ये क्या हुआ? हर एक एक-एक व्यापक वस्तु में भीगे रहने से ये स्वयं स्फूर्तता स्वयं सिद्ध है।

यह अस्तित्व सहज है, शाश्वत है, नित्य है। यह कभी भी इसका विच्छेद होता नहीं - स्वयं स्फूर्तता। तो अस्तित्व रूप में हर वस्तु स्वयं स्फूर्त है, अस्तित्व में क्रियाशीलता के रूप में स्वयं स्फूर्त है और क्रियाशीलता के क्रम में, जागृति क्रम और विकास क्रम के रूप में स्वयं स्फूर्त है। यह पूरा का पूरा अस्तित्व इसी रूप में बैठा हुआ है। इसको समझने वाला केवल मानव है और केवल मानव है, केवल मानव है और कोई समझता नहीं है। इस आधार पर मानव को हमने इस ढंग से पहचाना - अभी तक अध्यात्मवादी- भौतिकवादी जीवों के रूप में पहचानते रहे, हम ज्ञान अवस्था की इकाई के रूप में मैंने पहचाना। इसलिए इसका नाम दिया है - यह ज्ञान अवस्था की इकाई है - मानव को। मानव ज्ञान अवस्था की इकाई होने के आधार पर ही भौतिक ज्ञान, रासायनिक ज्ञान, जीवन ज्ञान में जाग्रत होना बनता है।

अभी भी जो भौतिक ज्ञान रासायनिक ज्ञान किये हैं, यह जाग्रत हैं या भ्रमित हैं पूछा जाए, हमारे अनुसार भ्रमित हैं। क्योंकि इसका उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनशीलता को बिना पहचाने हम अपना हविस पूरा करने के लिए भौतिक रासायनिक वस्तुओं को उपयोग करने लगे, फल स्वरूप धरती रोगी हो गई। इस ढंग से ये समझे नहीं हैं, इस गवाही के साथ, ये विज्ञान संसार इसको पूरा समझा नहीं है। 'नीम हकीम खतरे जान'⁹ स्वाभाविक होते ही हैं। इस परिभाषा में विज्ञान की स्थिति आज है। यह बात हमको स्पष्ट हुई है, शायद आपको भी स्पष्ट होता ही होगा। अब इससे क्या हुई? धरती बीमार हो गई, धरती बीमार होने के बाद विज्ञानी, अज्ञानी, ज्ञानी - सभी धरती में ही हैं। ये सब को एक ही साथ डूबने की जगह आ गई, तब अब सोच रहे हैं - ये क्या होगा? आगे में क्या होगा। आगे भाई क्या होने की बात है - कोई सोचता है दूसरा कोई ग्रह गोल खोजेंगे, वहाँ हमारे जात-पात को ले जाएँगे, हमारे आदमी को ले जाएँगे, बाकी को मरने देंगे। कुछ लोग ऐसा सोचते हैं। कुछ लोग ऐसे सोचते हैं - नहीं भाई यह ठीक नहीं है, हमको इसका कोई उपाय खोजना चाहिए - ऐसा भी चर्चाएँ होती रहती हैं। इसको हम सुनते ही रहते हैं।

तो चर्चाएँ तो होता है, किन्तु निष्कर्ष क्या निकला - इसको खोजने पर अभी तक तो कोई भी, कितने भी seminar होते हैं, सभाएँ होते हैं, विमर्शात्मक सभाएँ होते हैं, सभी को हम सुनते हैं पेपरों में। किंतु उसका कोई निष्कर्ष निकाला, ऐसा हुआ नहीं। अभी तक की जो बहुत बड़ी भारी - जो पारंगत कहलाते हैं, पर्यावरण संबंधी समस्याओं को समाधान देने के लिए जो पैदा हुए हैं, जिनको बहुत बड़ी भारी पद दी गई है, बहुत सारे मोटे-मोटे तन्खा दी जाती है, ऐसे लोगों के साथ हमारा चर्चा हुई है, उनके मत से यही है - अब मनुष्य को कितना पर्यावरण प्रदूषण में जी सकता है, उसी को हम पहचानना है, उसको हमें standard बताना है - ऐसा कह रहे हैं। यदि यही सच है तो अभी कोई अपने एक अवधि निश्चित करेंगे, इस अवधि तक आदमी जियेगा और आगे जियेगा नहीं। अभी आप ऐसा ही तय करेंगे। क्योंकि पहले जो है ना, कोई प्रदूषण था नहीं, उस समय में आदमी जीता ही रहा है। अभी प्रदूषण होने के बाद इतना

⁹ नीम हकीम खतरे जान : थोड़ा ज्ञान बहुत हानिकारक होता है

प्रदूषण में आदमी जियेगा, ऐसा एक रेखा बनायेंगे। रेखा बनाने के बाद, थोड़ा दिन के बाद, वो रेखा पार हो जाता है। क्या चीज़? प्रदूषण।

उसके बाद आगे की रेखा बनाओगे। ये कब तक बनाओगे? आपके घुटकी में साँस चलता रहता है, तब तक करोगे। जब तक साँस चलता रहेगा, तब तक ये रेखाएँ बदलती रहेंगीं, तब तक आप रेखाएँ बनाते रहेंगे, तब तक हम सुनते रहेंगे। इसमें निराकरण क्या हुआ? किसके पास निराकरण पहुँचा? कैसा पहुँचा? अध्ययन में क्या चीज़ निराकरण आई? तो standard के नाम से आप अपना पैसा भँजाने के लिए रेखा बनाते हैं, तो रेखाएँ जो है पैसा दिये बिना आप रेखाएँ भी नहीं बनाते हैं – इतने अच्छे उदार चित्त हैं! इन विधि से पैसा के against में आप ऐसा रेखा बनाया जो कि आज जहाँ तक प्रदूषण में जी सकता है आदमी। कल उसको बदलेंगे, परसों और बदलेंगे, तरसों ऐसा बदलेंगे।

जब तक आप हम दोनों समाप्त न हो जायें, घुटकी से प्राण निकल ना जाए, तब तक आप रेखाएँ बनाते रहेंगे, ऐसा मेरा सोचना है। बात यहाँ आ करके टिकता है। इससे कोई प्रदूषण विधि का कोई सही सलामत विधि तो नहीं निकला। उसके बारे में हमारे सहअस्तित्वादी विधि से यदि हम सोचते हैं, तब यह निकलता है, मनुष्य अपने पद प्रतिष्ठा को पहचान ले। उस पर विश्वास करे। ऐसे पद प्रतिष्ठा – क्या पद – मानव जो है ना ज्ञान अवस्था की इकाई है। देव मानव पद में मानव है, गण्य, और भ्रमित रहने से पशु मानव राक्षस मानव के रूप में काम करता है। ज्ञानावस्था का प्रतिष्ठा देव मानव पद ही है। देव मानव का मतलब ये होता है – जो आदिकाल से हम बहुत कुछ, और कुछ अच्छे-अच्छे शब्द प्रयोग किए हैं – प्रबुद्धता का नाम दिया है। प्रबुद्धता एक ज्ञानावस्था की, देव पद प्रतिष्ठा की, एक वैभव है। क्या हुआ? समझदारी – ठीक है? ज्ञान पद प्रतिष्ठा की एक वैभव है।

समझदारी के बारे में अभी आपसे चर्चा हो चुकी है, अस्तित्व को पूरा समझने से समझदारी है, दूसरा मानव को पूरा समझने से समझदारी है। पूरा का मतलब – जीवन और शरीर – दोनों को समझने से। मानव मानव को समझा गया – ये समझदारी है, और इसका प्रमाण व्यवहार में आता है – उसका नाम है मानवीयता पूर्ण आचरण। उसका जो कसौटी है – व्यवस्था के रूप में प्रमाणित होना है – इस ढंग से बनी हुई है। ये कहाँ से जुड़ गया? प्रत्येक एक अस्तित्व में अपने त्व सहित व्यवस्था के रूप में है, समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है – इस सूत्र के साथ जुड़ने के लिए इतना कसरत मानव जाति को करना बाकी है दिखती है। अभी तक इस ओर कोई कसरत हुई नहीं है। जीवन को समझने के लिए कोई कसरत समझ में नहीं आई है आदमी को, या मानव को समझने में कोई कसरत समझ में नहीं आई है। अंत में प्रौद्योगिकी विधि से यही सोचा गया है – प्रौद्योगिकी व्यवस्थावादी, यही सोचते हैं – मानव का management कठिन है, यंत्र का management ठीक है।

ये control रहता है – यंत्र से management control में रहता है, मानव का management कठिन है, इसको कर नहीं सकते। इसी के आधार पर जितने भी जो उत्पादन कार्य हैं, इसको हम यंत्रीकरण किया, इस विधि से कि हमारा management के लिए सुगम हो जाये। उतने जितने में यंत्र बनाया, उतने ही आदमी बेकार हो गया, और दुष्ट कर्म में प्रवृत्त हुआ, और सत्कर्म के लिए आपके पास कोई रास्ता देने की था नहीं। जितने भी हमारे

अर्वाचीन¹⁰ समय की सत्कर्म की बात करते हैं – ना तो वो परिवार बन पाते हैं, ना व्यवस्था बन पाते हैं। इसमें गिर पड़ते हैं – सब बेहोश हो करके गिर पड़ते हैं। ना परिवार को प्रमाणित कर पाते हैं, ना समाज को, ना व्यवस्था को। ये तो पहले से ही गिर पड़े हैं। ये जो प्रद्योगिकी व्यवस्था को ला करके हम आदमी को इस ढंग से बेहोश कर दिया।

आदमी जाये कहाँ? तो यदि सब बात के लिए आप यंत्र बना लिए, उसके बाद में आदमी क्या करेगा? क्या करता रहेगा? उसको भी एक बार सोचना है। उसके लिए कुछ देशों ने ये सोचा – मौज मस्ती मारें। मौज मस्ती के बारे में क्या सोचा गया? बहुभोग, अतिभोग को ये मौज-मस्ती माना है। इसको भी यदि अपन ज्यादा से ज्यादा सोचें, यौन संवेदना में दिन भर मगन रहे – इसी को मौज-मस्ती मानने का आधार माना। उसके लिए गाड़ी चाहिए, घोड़ा चाहिए, पोशाक चाहिए, जूता चाहिए, चप्पल चाहिए, तलवार चाहिए, बन्दूक चाहिए – वो सब हम-आप ने बना के ही दिया है। ठीक है? इसमें जब कभी पराभवित होता है आदमी, बढ़िया आत्महत्या की pills खा लेता है, बढ़िया सो जाता है। उसको ले जाकर सरकार दफना देता है। इस प्रकार की बातें देखने को मिल रहा है धरती की छाती पर। इसी धरती की छाती पर भला, ये सब चीजें देखने को मिल रहा है।

तो इस ढंग से हम कहाँ पहुँचेंगे, कहाँ पहुँचायेंगे – ये सवाल यहीं आता है। तो कहाँ पहुँचेंगे, कहाँ पहुँचायेंगे वाला सवाल आता है – अपन पुनः वहीं आते हैं – अपने को इस विधि से कुछ मिलता नहीं। यही आता है। जूछापन-मतलब बहुत दुधारू मान करके गाय लाये, पता चला एक बूँद दूध ही नहीं निकला। विज्ञान को इतना बड़ी भारी दुधारू माना, संसार ने इतना सारा अरमान रखा, विश्वास रखा – इससे सारा मानव जाति तर जायेगा। उसके पहले आदर्शवादी विधि से मानव तर जायेगा, इस बात के आश्वासन पहले से देते आ ही रहे हैं। वो गिर पड़े तो ये तैयार ही गए। इसके ऊपर विश्वास रखे, अब कहते हैं तुम इतना pollution में जियोगे, आज एक रेखा लगाया, कल दूसरा रेखा लगा दिया। अब कोई-कोई देश ये भी करता है – मिलावट के बारे में – इतना adulteration १५% वैध¹¹ है, उससे ज्यादा होने से वैध नहीं है। ये भी कानून बनाये हैं। तो इसका मतलब है प्रदूषण में जीना ज़रूरी है और मिलावट खाना खाकर जीना ज़रूरी है – दोनों चीज़ आ गई।

तो उसके बाद आता है रिश्वतखोरी। रिश्वतखोरी में भी ऐसे सुनने में आया है, सरकारी बयानों में, सरकार में या प्रधान प्रतिष्ठा संपन्न पदों में आसीन व्यक्तियों से ये सुनने में आया है – १५% की रिश्वतखोरी अच्छी है, उससे ज्यादा होने से खराब है। ऐसा भी सुनाने में आया है। अब लीजिए – रिश्वतखोरी में भी आप गुंजाइश निकाल लीजिये। आज १५% वैध है, कल जो है ना ५०% होगी, तरसों cent percent होगी। वैसे ही मिलावट में भी वैसी कथा है। आज जो है न १५% मिलावट वैध है और कल २५% होगा, उसके बाद ५०% होगा, उसके बाद पूरा प्रतिशत होगा। कहाँ जाएँगे? और pollution में जीने के लिए भी वैसे ही – आज एक रेखा, उसके बाद ऊपर की रेखा, उसके बाद ऊपर ऊपर ऊपर और ध्वस्त ना हो जाए, तब तक रेखा लगाना। इन तीनों विधा से देखने पर हमको कहीं भी कोई बात नहीं।

¹⁰ अर्वाचीन: आधुनिक, नया

¹¹ वैध: जो विधि के अनुसार हो, कायदे-कानून के अनुसार

इसके बाद और बहुत बड़ी भारी साहसी काम विज्ञानी लोग किए - एक तरफ कहते हैं जन-संख्या बढ़ गई। ये एक प्रकार से समस्या का कारण है। ठीक है भाई। दूसरी तरफ क्या करते हैं - तो हम laboratory में आदमी को तैयार देते हैं। एक आदमी को कितना बनाना है - १ लाख बनाना है - पैसा दो हम बना देते हैं। लाख बनाना है - हम बना देते हैं। करोड़ बनाना है - हम बना देते हैं। आपका प्रतिरूप को बना लीजिए - ये हर दिन पेपेरो में, उसमें, इसमें हम देखते ही, सुनते ही हैं, और जितने भी माध्यम हैं प्रचार के, वे सब तो चिल्लाता ही है। इस ढंग से - इसको क्या कहा जाए? एक तरफ हम ही कहते हैं - जन-संख्या बढ़ गई। दूसरी तरफ विज्ञानी ये सोचते हैं - एक आदमी को करोड़ बना सकता है। उसके लिए वे आकर्षित करते हैं - पैसा दीजिए, बनवा लीजिए। एक करोड़ आदमी बन लीजिए - ऐसा ये कहते हैं।

किसकी बात सुना जाए, किसकी बात सही है? जन-संख्या ज्यादा हुआ - ये सही है? एक आदमी करोड़ आदमी के रूप में बदलना - ये जरूरी है या इसकी आवश्यकता है, ये सच्चाई है या झुटाई है - इस बात को कौन बताएगा? कौन उसका उत्तर देगा? इन दोनों को हम सही ठहराते हैं, औचित्यता¹² के बारे में कौन जिम्मेवार है? इसमें कौन चीज़ औचित्य है, औचित्यता का कौन निष्कर्ष निकलेगा? औचित्यता को बताने का आधार कहाँ है? अब कहाँ शोध किया, किसने किया, कब किया? ये सब बातें, अनेकानेक सवाल अपने आप से उत्पन्न होता है।

तो अभी आपसे निवेदन किया की मनुष्य जाग्रत होने के उपरांत - क्या जाग्रत होना है? स्वयं पर विश्वास हो जाना, माने स्वयं का अध्ययन पूरा होना, माने जीवन और शरीर - इन दोनों का समुचित अध्ययन हो जाना - स्वयं पर विश्वास रखने का मुद्दा है। यदि ये नहीं होता है, स्वयं पर विश्वास नहीं होगा। मैं कैसा हूँ, क्यों हूँ - इन दोनों का उत्तर होने के बाद स्वयं पर विश्वास होता है। एक मुद्दा ये है। इसके लिए ये सहअस्तित्ववादी विधि से प्रस्तुति किया, जीवन का अध्ययन को हम विधि से प्रस्तुत किए। जीवन में अक्षय शक्ति, अक्षय बल होता है, उसको हम अध्ययन कराते हैं। जीवन में ही कल्पनाशीलता, कर्म स्वतंत्रता निरंतर, माने स्फूर्त होता रहता है और उसको पढ़ाते हैं। कर्म स्वतंत्रता कल्पनाशीलता की तृप्ति बिन्दु चाहिए, इसके लिए मनुष्य सदा-सदा शोध करता रहता है - इसको भी हम पढ़ाते हैं। उसमें तृप्ति बिंदु कैसे मिलता है उसको हम पढ़ाते हैं। कैसा? जाग्रत होने के बाद व्यवस्था के रूप में जीने से कल्पनाशीलता कर्म स्वतंत्रता की तृप्ति बिन्दु मिलती है। ये हम अध्ययन कराते हैं - मैं स्वयं अध्ययन कर चुका हूँ। जो अध्ययन करते हैं, वैसे ही वो भी तृप्त होते हैं और मैं जैसा तृप्त हुआ हूँ, इस आधार पर हम विश्वास करते हैं।

तो समझदारी का दूसरा बिन्दु बताया - अस्तित्व। अस्तित्व स्वयं सहअस्तित्व है, अकेले नाम की चीज़ नहीं है। तो व्यापक वस्तु में एक-एक वस्तु में नित्य वर्तमान है - इसको हम अध्ययन कराते हैं। इसको अध्ययन कराने के बाद ये प्रश्न समाप्त हो जाता है - एकांत में सुख है। अभी तक जो आदर्शवादी विचार - पूरा एकांत में सुख - को खोज-खोज करके क्षत-विक्षत¹³ हो गए। ना स्वयं प्रमाणित हो पाया और ना उसके सम्मोहन से छूट पाया। घुटकी से प्राण निकलता ही रहा। हमारा एक परिवार परंपरा में ७०० वर्ष में अनेक लोग सन्यासी होते रहे। एक भी ऐसा एक line दे नहीं पाए जो कि हम इस सन्यास के बाद ये पा गए, जो आप लोग नहीं पाए हैं। ऐसा चीज़ किसी ने कह के नहीं मरा,

¹² औचित्य : उचित का भाव, उपयुक्तता

¹³ क्षत-विक्षत : बहुत घायल और लहलुहा

और सब ने यही कह के मरा “आप किताब पढ़ लो” ! मेरे अनुसार किताब आदमी लिखता है और हर किताब से आदमी बड़ा है। हर यंत्र से बड़ा है एक-एक आदमी – ऐसा मेरा सोचना है। यदि ये सच है – हर आदमी हर एक यंत्र और हर एक किताब से बड़ा है – तब तो किताब के अंदर मनुष्य को बेड़ लेना संभव नहीं है। किताब को इतना पूजा किया गया, उससे ज्यादा किसी को पूजा भी नहीं किया होगा। इतना पूजा करने के बाद भी कोई आदमी किताब के अंदर समाया नहीं, आज तक।

अभी विज्ञानियों ने यंत्र को इतना प्रमाण बता करके संसार को इतना व्यामोहित¹⁴ किया, सम्मोहित किया और ये भी किया “ये देखो यंत्र स्वचालित होता है, यंत्र जो है ना वो करता है, ये करता है”। ये सब बताने के बाद भी – मनुष्य किसी यंत्र में समा गया – ऐसा कुछ हुआ नहीं, आज भी नहीं हुआ। इस दोनों गवाही के आधार पर मेरा घोषणा ये है – प्रत्येक मनुष्य हर एक यंत्र से बड़ा है, हर एक किताब से बड़ा है – इस बात पर विश्वास रखने के लिए जरूरत है। उसके लिए क्या आवश्यक है – हमारा जीवन में अक्षय शक्ति अक्षय बल जो कार्य करता है, उसको सटीक जागृति पूर्वक नियोजित करने की विधि को अपनाते तक समझदारी, उसके बाद प्रमाणित करने की परंपरा। इसको हम अध्ययन कराता हूँ। जो आदमी, जिस आदमी को जिज्ञासा होती है, उनको स्वागत है ही है, वो आ करके अध्ययन करें। एक तो बात ये बना।

उसके बाद अस्तित्व के बारे में गए – अस्तित्व में विकास के क्रम बनी, परमाणु ही विकास के क्रम में वस्तु है और गठनपूर्ण होने पर माने – हर एक परमाणु गठनपूर्वक परमाणु है। गठनपूर्णता नाम की एक प्रजाति है – जिस परमाणु में प्रस्थापन विस्थापन मुक्ति हो जाता है। प्रस्थापन नहीं हो सकती है ना विस्थापन हो सकती है। ऐसी जगह में आने के बाद, उस परमाणु का नाम है – गठनपूर्ण परमाणु। उसमें हमने यह देखा है – बीच में एक क्रिया होता है, जिसका परावर्तन प्रत्यावर्तन दो पद्धति है। इसी ढंग से बीच में एक ही होता है। इसी को हम आत्मा नाम दिया है। आत्मा क्रिया है। अनुभव एक क्रिया है। प्रमाण एक क्रिया है। प्रमाणिकता नित्य क्रिया है। इस ढंग से जागृति क्रिया में प्रमाणिकता ही जीवन का पूंजी है। जीवन का पूंजी के रूप में प्रमाणिकता जब तक समाई रहती है, तब तक मानव स्वयं में विश्वास करता है, करता ही रहता है। और एक बात – जागृति का मतलब – स्वयं मानव अपने को समझ लिया, समझने के बाद प्रमाणिक होता है।

प्रमाणिकता सदा-सदा बना रहता है। एक बार समझने के बाद उसकी निरंतरता होती ही है। एक बार हम कोई झाड़ को देखते हैं, समझ लेते हैं, उसके बाद वो समाप्त होते ही नहीं है। सदा बना रहता है – सदा-सदा झाड़ के नीचे खड़े रहने की जरूरत भी नहीं है। वो झाड़ जब कभी सामने आया, उसकी उपयोगिता हमको पता ही है। इसी प्रकार मानव जब कभी एक बार जाग्रत हो गया, उसके बाद उसका निरंतरता होता ही रहता है। तो इस विधि से जाग्रत मानव ही सतत प्रमाणिक रहता है, प्रमाणिकता ही जीवन का सम्पदा है। क्या सम्पदा है? प्रमाणिकता ही सम्पदा है। यही चीज परावर्तन में प्रमाणिकता के रूप में हो जाता है, माने प्रमाणित होता है और प्रत्यावर्तन में अनुभव के रूप में होता ही है। ये दोनों क्रिया कर लेते हैं – निरंतर करते रहते हैं। अनुभव के आधार पर ही बाद में बोध नाम की क्रिया, और इच्छा नाम की क्रिया, और विश्लेषण नाम की क्रिया – ये सभी चीजें क्रियान्वयन होते हुए, जीवन समग्र एक जागृति

¹⁴ व्यामोहित : हैरानी, मोह, अज्ञान, घबराहट, भ्रांति

के ही अर्थ में काम करता हुआ हमको मिला और मैं स्वयं ऐसे ही करता हूँ। जागृति पूर्वक ही हर काम करता हूँ – इसी लिए हम सुखी रहता हूँ। ये हम जो जागृति पूर्वक काम करके, सोच के, विचार के, अनुभव करके, दे के, ले के, हम अभी तक दुखी नहीं हुआ हूँ।

इतने तो आप भी करते हो, आप इससे ज्यादा कुछ भी नहीं करते हो। उतने ही मैं भी किया हूँ। हर एक मुद्दे पर हम सुखी रहता हूँ – काहे के लिए? हम जाग्रत रहता हूँ, सुखी रहता हूँ। वो ही चीज़ करिए और भ्रमपूर्वक, हर जगह में आदमी कुंठित, प्रताड़ित, दुखी, दीन, हीन, पराश्रित¹⁵ – ये बना ही रहेगा। इसके लिए क्या किया जाए? इसके लिए एक ही उपाय है – हर व्यक्ति को समझदार बनाया जाए। बहुत छोटा सा काम, बहुत ज्यादा काम भी नहीं है ये! अभी हम शिक्षा देते ही हैं, शिक्षा का उपक्रम बहुत सारा बनाये रखे हैं। बनाये रखे हैं – उसमें ही समझदारी को समा लेना ही एक मात्र उपाय है। इससे क्या हो जायेगी यह पूछा? इससे ये हो जायेगी – हर व्यक्ति नैसर्गिकता के साथ उचित कार्य करना सीखेगा जिससे जो प्रदूषण होने की जो सिलसिला है, वो रुक सकता है – बात यहाँ आई। उसके बाद ये कैसा रुक जायेगा भाई? इतने लोगों का काम कैसा चलेगा – ये तो हर व्यक्ति के दिमाग में तूफ़ान बैठा ही है।

जैसा की सब आदमी जो है, ये सब दुष्ट प्रवृत्ति से सब को रोजी-रोटी दे दिया – ऐसा सोचा जाता है। जबकि पहले बताया, यंत्र बना करके सब का रोजी-रोटी को छीन लिया। ये बात आपके सम्मुख प्रस्तुत किया है। सबकी रोजी-रोटी कैसे छीनी? सबके लिए हम यंत्र बना दिया है, फलस्वरूप रोजी-रोटी छीन लिया। जैसा घर-घरेलु में mixi बनी हुई है। फिर बाद में काहे को सिलबट्टे में चटनी पीसोगे रे? काहेको पीसोगे? आप बताओ। अब हाथ चलाना ही बंद हो गया। पहले ये ही हाथ बढ़िया चलता रहा। क्या हुआ अब? हाथ का training आ गया – कुछ ना करो। उसी प्रकार औषधि तंत्र में भी यही है। औषधि तंत्र में तुम कुछ नहीं करना शरीर के अंग-प्रत्यंग, हम दवाई देते हैं, उससे ही काम निकल जायेगा। उससे काम निकाल लो, उसमें पहुँचे, मियाँ लोग! वो अंग-प्रत्यंगों का काम ही नहीं करना – जैसा, विशेष करके, गुर्दे से संबंधित रोग। हम खून में होने वाली विकारों को हम छानबीन करके अलग कर देते हैं।

अब काहे के लिए गुर्दा काम करना? पता चला चार दिन के बाद गुर्दा दूसरा लाओ। इस ढंग से जो हम भिड़ पड़े हैं, आदमी को फसाने के कार्य में, सम्मोहन विधि से और निरुत्तर विधि – सामने आदमी के पास कोई उत्तर नहीं है। उस विधि से हम फसाये जा रहे हैं। इस पर भी पुनर्विचार करने की जो ताकत है और योग्यता है और अहंता है और क्रियाशीलता है – ये सभी चीजें तभी उद्भूत होते हैं, स्वयं स्फूर्त होते हैं जब आदमी जात समझदार होता है, उसके पहले होने वाला नहीं है। भ्रमित रह करके होने वाला नहीं है। भ्रम का मूल कारण को ये समझा गया है – शरीर को जीवन समझना। तो भौतिकवाद भी वो ही कहता है – जीव, और आदर्शवाद भी हमको जीव ही कहता है। जीव से अधिक तो आदमी को बताए नहीं दोनों वाद। मैं बता रहा हूँ – आदमी जो है ज्ञानावस्था की इकाई है, समझदार होना ही ज्ञानावस्था का प्रमाण है।

¹⁵ पराश्रित : दूसरे के आश्रय में रहने वाला

समझदारी का प्रमाण है समाधान, समाधान का प्रमाण है सुख, समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व – ये सुख का प्रमाण है। हर दिन के रोज-मरों की काम है – जो हम सब चाहते ही हैं। तो इसको कैसे हम अनुभव किया? हर एक परिवार में ये समृद्धि चाहते ही हैं। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से समाधान चाहता ही है और एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के परस्परता में निरंतर स्नेह विश्वास ही चाहते हैं, भयभीत होने नहीं चाहते हैं – यहाँ तक तो हम आ चुके हैं। पहले कोई समय में तो घर के स्वामी आने से सब घर के अंदर घुस जाना या रास्ते में भाग जाना, ऐसा करते रहे होंगे, किन्तु आज तो ऐसा नहीं है। तो हर बच्चे हर गृह स्वामी को भी जाँचने की जगह में आ गए हैं। इसलिए हर गृह स्वामी का काम ही ये बनता है – स्नेह पूर्वक, विश्वास पूर्वक परिवार के साथ जीना। तब गृह स्वामी की जगह में क्या होता है – क्या बताया – घर परिवार की एक भागीदार है, एक सदस्य है – यही कुल मिला करके प्रमाणित होता है। यदि हम इसको सच मानते हैं – भागीदारी को हम सच मानते हैं, और साथ-साथ रहना हम यदि सच मानते हैं, उस स्थिति में समझदारी को समझना एक अनिवार्य रूप हो गई। ये मूल में क्या बना? मानव जीवन के संबंध में जो मुख्य उपलब्धि है, वो जीवन समझदार होने की विधि में है। क्यों है? मनुष्य शरीर समझदारी को प्रमाणित करने योग्य है। जीव शरीर उसके योग्य नहीं है। इतनी ही बात है।

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 3, time 00:00-15:27](#)

जय हो, मंगल हो, कल्याण हो!

अभी अपन ये समझने के लिए कोशिश किए थे और समझाने के लिए प्रयत्न किए थे, मनुष्य ही जीवन और शरीर का संयुक्त रूप में है। जबकि जीव कोटि के जीव भी, कई जीव, शरीर और जीवन के साथ रहते हैं, केवल मनुष्य ही समझने योग्य है और प्रमाणों को प्रमाणित करने योग्य है, इस बात की पुष्टि में इसके पहले आपके सम्मुख प्रस्तुति हुई थी। मैं विश्वास करूँगा उस पर आपका ध्यान गया है, उसमें आप विश्वास करेंगे। उसके आधार पर हम आगे की कड़ी ये बताना चाहते हैं और शरीर की जो संरचना है मनुष्य की, ये मूलतः उस तरीके से बनी हुई है – सभी धातुएँ और मेधस तंत्र – जो जीवन अपने जागृति को व्यक्त कर सकता है। इससे कम विकसित मेधस तंत्र और सप्त धातुओं का सम्मेलन में संतुलन जीव संसार में है। उसके पीछे की जो संसार है, भौतिक संसार और रासायनिक संसार, उसमें मेधस तंत्र का कोई लक्षण नहीं है, और ना उसमें वो प्रकाशन है, ना उसका प्रमाण है।

इस ढंग से अपन निश्चय कर सकते हैं तो हमारा जो कुछ भी अभी चिंतन है, ये मानव से संबंधित ज्यादा है और मानव ही जागृति को प्रमाणित करने योग्य है, और बाकी यांत्रिक रूप में रासायनिक भौतिक संसार कार्य कर रहा है, इसके बावजूद उसमें त्व सहित व्यवस्था प्रकाशित है, इस बात को आपको यकीन दिलाया है। मनुष्य ही एक मात्र ऐसा इकाई है, अपने त्व सहित व्यवस्था को पहचान नहीं पाया है अभी तक, दो प्रकार के चिंतन आने के बावजूद, अभी तीसरे प्रकार के इस चिंतन से आप हम त्व सहित व्यवस्था होना, हम पहचान सकते हैं। ये इसका मूल मुद्दा थी। जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में होने का मुख्य प्रयोजन क्या है? मानव अपने मानवत्व सहित अपने प्रमाणों को प्रस्तुत कर सकता है। प्रमाणों को प्रस्तुत करता है तो व्यवस्था में ही होता है। व्यवस्था के अलावा दूसरा कोई प्रमाण

भी नहीं होता है। प्रमाण यदि संसार में अपन चाहते हैं परम्परा के रूप में, वो प्रमाण ही होगा। प्रमाण व्यवस्था में भागीदारी के रूप में ही होगी, जागृति के रूप में ही होगी, समाधान के रूप में ही होगी – ये मुख्य बात है इसमें।

तो शरीर के बारे में जो पहले आपको संक्षेप रूप में बतायी, और शरीर का संरचना गर्भाशय में होता है, और जीवन का जो स्थिति है, अस्तित्व में परमाणु विकसित हो करके जीवन पद में संक्रमित हुआ रहता है, जिनमें प्रधान भौतिक संसार का, भौतिक परमाणुओं का और जीवन परमाणुओं का जो मौलिक अंतर क्या है, इस बारे में दो बात आपको गिनाये थे। एक ये बताया था – भार बंधन, अणु बंधन। इन दोनों से मुक्त हो जाता है एक जीवन परमाणु। इसी का नाम है चैतन्य परमाणु। इसी को हम चैतन्य इकाई नाम दिया है। इस चैतन्य इकाई में जो सम्पूर्ण समझदारी को व्यक्त करने की संभावना उसी वक्त भ्रूण अवस्था में होता है। उसके बाद शनैः-शनैः जीव शरीर में कुछ होता है, उसके बाद मनुष्य शरीर के द्वारा शनैः-शनैः वो व्यक्त होते-होते आज के स्थिति में हम पूरा जागृति को व्यक्त करने योग्य हो गए हैं। यही मुख्य मुद्दा है, अभी आज के ध्रुविकरण यही है। इसको कैसा हम पहचाना? क्योंकि मैं प्रमाणित किया इसीलिए आप भी प्रमाणित कर सकते हैं, इसका मुख्य आधार यही है। मैं समझ गया, आप भी समझ सकते हैं – मुख्य आधार यही है। जब मैं समझ गए, प्रमाणित कर गए, इसी आधार पर हम आप भी, सभी मानव जाति इसको समझ सकते हैं, प्रमाणित कर सकते हैं। फलस्वरूप व्यवस्था अस्तित्व में हम जो परंपरा के रूप में हम प्रमाणित कर सकते हैं, व्यवस्था में जी कर परस्परता में एक स्नेह, मैत्री, विश्वास को पूरा कर सकते हैं, समृद्धि पूर्वक हर परिवार जी सकता है, इस बात की आश्वासन इसमें मिलती है।

ये कुल मिला करके जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में होने वाली प्रयोजन। और जीवन का स्वरूप के बारे में ये बताये थे – गठनपूर्ण परमाणु होने के कारण, जिसमें तात्त्विक रूप अंशों का घटना बढ़ना दोनों से मुक्ति पाया रहता है – ये पहला एक वैभव है। तो उसमें परिणाम होना बंद हो जाता है, परिणाम का अमरत्व ही जीवन पद है। ये मुख्य तात्त्विक रूप में होने वाली बात है, इसको हम समझदारी में स्वीकारने की आवश्यकता है, इस पर आप लोग ध्यान देते ही होंगे।

दूसरा महिमा ये है – जीवन की अक्षय बल, अक्षय शक्ति। अक्षय बल के रूप में भी हम आपके, सभी मानव के जीवन में समानता है, जीवन के स्वरूप में भी समानता है, और जीवन लक्ष्य में भी समानता है। अक्षय बल, अक्षय शक्ति के बारे में ये अपने में शोध करने की बात है, पहला जीवन का कल्पनाशीलता है। कल्पनाशीलता को हम कितने भी करते जाएँ, और करने की पूंजी बना ही रहती है। आशा को हम जितने भी कर पाते हैं, और करने की पूंजी यथावत बना ही रहता है। विचारों को जितने भी हम कर पाते हैं, और विचार करने की पूंजी रहता ही है। और उसी प्रकार संकल्प जितने भी करते हैं, निष्ठा कितने भी करते हैं, और प्रमाण जितने भी प्रमाणित कर पाते हैं, और प्रमाणित करने की हमारे पास पूंजी यथावत बना रहता है और प्रखर होते जाता है। इसमें और एक सोने में सुगंधी है – जितने हम प्रमाणित होते जाते हैं, और भी हम प्रमाणित होने का जो संभावना है – और प्रखर, उज्ज्वल, सही, सटीक होता जाता है।

इसको हमने देखा है। इस आधार पर हमारा विश्वास ये होता है – हर मनुष्य जीवन रूप में सामान है। क्या-क्या आया वहाँ? एक तो समानता मूल रूप में उसका स्वरूप के बारे में गठनपूर्ण परमाणु के रूप में समान है, अक्षय शक्ति

के रूप में समान है, अक्षय बल के रूप में समान है और लक्ष्य के रूप में समान है। जीवन लक्ष्य जो है, वो ऐसा पहचाना गया - सुख, शांति, संतोष, आनंद - ये ही जीवन चाहता है। और मानव अपेक्षा चार होता है, उसी के साथ-साथ - समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व। जीवन का अध्ययन मानव ही कर पाता है। शरीर के साथ ही रहेगा। शरीर के साथ ही रह करके जीवन का अध्ययन करेगा, जीवन जागृति को प्रमाणित करेगा, मानव परम्परा में ही प्रमाणित होगी, और कोई परंपरा में ये प्रमाणित होने वाला नहीं है। यही मौलिक वरदान है मानव कुल के लिए। मानव कुल का मौलिक वरदान की ओर हम अभी तक पहुँच नहीं पाए, पहुँचने के लिए एक रास्ता को खोजते रहे, वो रास्ता इस प्रकार से मिलता है।

इस ढंग से शरीर की रचना गर्भाशय में होते हुए जीवन की सम्पूर्ण जागृति को प्रकाशित करने योग्य रचना रहता है। ये मानव परंपरा में ही प्रमाणित होने की बात है। मानव परंपरा में ही मानव मानव-पद में, देव-मानव पद में, दिव्य-मानव पद में प्रकाशित होकर अपने जीवन जागृति को व्यक्त कर देता है - ये कुल मिला करके मतलब है। और मानव पद में क्या होता है, देव-मानव पद में क्या होता है - बात आती है। इसके बारे में ये तालिकाएँ बन चुकी हैं मानव व्यवहार दर्शन में और मनोविज्ञान शास्त्र में - ये सब चीजें काफी विस्तृत रूप में बतायी गई हैं। यहाँ एक संक्षेप रूप में ये बताया जा सकता है, बताये जा रहे हैं कि जैसा हमारा आशा, विचार, इच्छा, संकल्प, प्रमाणिकता, आदि जो कार्य हैं, इसको एक व्यवस्थित ढंग से तालिका बनाने से यही बनता है - बल को हम स्थिति में देखते हैं, और गति में शक्तियों को देख पाते हैं।

जैसा आशा को गति में देखते हैं, आस्वादन को स्थिति में देखते हैं। आस्वादन आपके स्थिति में ही हो पाता है, आस्वादन आप करते ही हैं और मैं भी करता हूँ, ये स्थिति में होता ही है। आस्वादन के लिए चयन कहीं ना कहीं बाहर से ही होता है और उसको भी हम जानते हैं। तो बाहर से, भीतर से मतलब क्या होता है? एक तो सम्बन्ध के आधार पर मूल्य आता है, मूल्यों को आस्वादन के आधार पर चयन होना एक विधि है। संवेदनाओं के आधार पर चयन होना दूसरा विधि है। संवेदनाओं के आधार पर जो चयन होती है, उसको भ्रमित विधि देखा गया है। और मूल्यों पर जो चयन होता है, उसको जागृति विधि के रूप में पहचाना गया है।

तो उसके बाद विचार आती है, विचारों में जो विश्लेषण करने की कार्यक्रम है, वो नजरिया पर आधारित रहता है। मानव के पास नजरिया के दो ही तरीका है। एक तरीका है - प्रिय, हित, लाभ; दूसरा तरीका है न्याय, धर्म, सत्य। इन दो तरीके से जीवन जो है ना अपने को विश्लेषित करने के लिए कोशिश करता है और जब प्रिय, हित, लाभ के साथ जब विश्लेषित करने जाता है, इन्द्रिय सापेक्ष विधि से विश्लेषित करता है। जब कभी ये यदि न्याय, धर्म, सत्य के साथ विश्लेषित करने जाता है, अनुभव के आधार पर विश्लेषित करता है। इसका मूल पहचान यही है। जीवन ही अनुभव करता है, आत्मा ही अनुभव करता है, ये बात आगे आता है।

इसके बाद आता है साक्षात्कार और चित्रण। चित्रण में स्मृतियाँ काम करते हैं, जो शब्दों का स्मृति होती है, रूप का भी स्मृति होती है। किन्तु धर्म और स्वभाव का स्मृतियाँ नहीं होती हैं। और इसका साक्षात्कार ही होना पड़ेगा। स्मृति से केवल स्वभाव धर्म को पहचाना नहीं जा सकता। शब्दों से पहचाना नहीं जा सकता। इसको शब्द के अर्थ में पहचाना जा सकता है। धर्म एक शब्द है, धर्म के अर्थ को हम पहचानते हैं, साक्षात्कार करते हैं। जैसा - मनुष्य सुख

धर्मी है। सुख शब्द में नहीं आता है और साक्षात्कार में आता है, अनुभव में आता है, चिंतन में आता है, बोध में आता है। ये हम संकल्प में, संकल्प पूर्वक प्रवर्तित होकर प्रमाणित करते हैं। इस ढंग से चिंतन पूर्वक चित्रण जो होता है, न्याय धर्म सत्य के आधार पर ही चित्रण होना शुरू हो जाता है। माने हम जितने भी कार्यक्रमों को बनाएंगे, वो सभी चित्रण न्याय, धर्म को प्रमाणित करने के अर्थ में ही होता है। इतने में से क्या हो जाता है? जो संवेदनाएँ रहते हैं मनुष्य में, वो संवेदनाएँ इनमें नियंत्रित हो जाते हैं।

क्या होते हैं? सबसे बड़ी भारी भूमिका यही है – चिंतन पूर्वक जीने का प्रमाण यही है, संवेदनाएँ नियंत्रित हुआ, या नहीं हुआ। उसको हर व्यक्ति जाँचा करो। उसमें हर व्यक्ति को उतना ही अधिकार है जितना मुझको अधिकार है। वो आप अपने में जाँच करके देखिये, यदि संवेदनाएँ नियंत्रित हुई हैं, न्याय धर्म सत्य के जो चौखट में ये संवेदनाएँ अपने को स्थिर होना पाया, माने संवेदनाएँ नियंत्रित हो गईं। यदि संवेदनाएँ न्याय धर्म सत्य की चौखट से बाहर भागने लगा, ये नियंत्रित नहीं हैं, ये बात को हम अच्छी तरह से पहचान सकते हैं। ये बहुत अच्छी एक अपने को जाँचने की स्थली है। यदि इस कसौटी से हम उभर जाते हैं, स्वाभाविक रूप है न्याय धर्म सत्य का बोध होता ही है। ये अध्ययन क्रम में होने वाली प्रक्रिया ही है। इन क्रम में तो जैसा ही न्याय धर्म सत्य अपने आप में यदि हमको बोध हुआ, वो तुरंत ही संबंधों का बोध पहले से ही रहता है, चित्रण रहता ही है और साक्षात्कार रहता है। संबंधों में मूल्यों को निर्वाह करने में हम सक्षम हो जाते हैं। जो-जो संबोधन तो हम पहले से, अभी से कर रहे हैं – माई, बाप सब करते रहते हैं किन्तु वो आयु, परिवेश, परिस्थिति, आवश्यकता – ये सब को ध्यान में रख करके ये बदलती चली जाती है। क्या चीज़? निर्वाह करने की बात। क्या निर्वाह करने की बात? विश्वास को निर्वाह करने की बात। एक समय में जैसा विश्वास निर्वाह हुआ, दूसरी बार ऐसा नहीं हो पता है। कब तक?

भ्रमित रहते तक विश्वास सा लगता है, विश्वास हुआ नहीं रहता है। विश्वास होने के लिए हमको साक्षात्कार होना बहुत अनिवार्य है। हर संबंधों का जो स्वभाव धर्म है, ये हमको साक्षात्कार होने की आवश्यकता है। तो इन साक्षात्कार विधि से हम आगे चलते हैं, इसमें कसौटी की बात कह दी थी। तो जैसा ही हम संवेदनाओं को नियंत्रित पाते हैं, हम हमारा कसौटी ठीक है, हम अपने में स्थिर हुए, निश्चित हुए, निश्चिन्त हुए, निश्चल भी हो गए। इसमें जो दोहरा व्यक्तित्व की संभावना मर जाता है। यही मृत्यु होती है। इसी स्थल में हर व्यक्ति इसको अनुभव करेगा, दोहरा व्यक्तित्व का मृत्यु स्थली यही है। जिस क्षण में, जिस महीने में हम अपने को ये जाँच पाते हैं कि संज्ञानशीलता में संवेदनाएँ नियंत्रित हुआ। उसी क्षण में मृत्यु होती है दोहरे व्यक्तित्व की। दोहरे व्यक्तित्व ही है भ्रम का सबसे भारी कवच। यही भ्रम और जागृति का नीर क्षीर न्याय हो पाता है, इसका लक्ष्मण रेखा यहीं बन पाता है। सही गलती का लक्ष्मण रेखा यहीं बनता है। जागृति भ्रम का भी लक्ष्मण रेखा भी यहीं बनता है। इस बात को हम अच्छी तरह से पहचान सकते हैं। इस ढंग से जीवन वैभव कितना ज़बरदस्त है इसको आप हम बोध कर सकते हैं।

इस बोध के पश्चात स्वाभाविक है बोध को प्रमाणित करने के लिए हम तत्पर होते हैं, अनुभव होते ही हैं, अनुभव विधि से हम पूरा जीवन अभिभूत होता है। अभिभूत होने का मतलब – अनुभव के रूप में सभी प्रक्रियाएँ होने लगता है। अनुभव के तारतम्य¹⁶ में सभी प्रक्रियाएँ होने लगता है। अनुभव आत्मा में होता है। आत्मा में अनुभव किया हुआ,

¹⁶ तारतम्य : जोड़मेल, क्रम या सिलसिला

बुद्धि में बोध और संकल्प में आता ही है। पुनः वोही बोध और संकल्प चिंतन और चित्रण में आता ही है। वोही चिंतन और चित्रण पुनः तुलन और विश्लेषण में आता है। वोही तुलन और विश्लेषण आस्वादन और चयन में आता है। तो जागृति पूर्वक क्या आस्वादन होता है? मूल्यों का आस्वादन होता है। और भ्रम पूर्वक क्या आस्वादन होता है? तो संवेदनाओं का आस्वादन होती है। इतनी ही बात है।

4. अनुभव व जागृति

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 3, time 15:28 - 42:23](#)

अब आदमी स्वयं ये तय करें कि संवेदनाओं का आस्वादन करना है, मूल्यों का आस्वादन करना है? इस ढंग से ये अध्ययन की गरिमा है। इसमें महिमा भी इसी प्रकार आता है। इस ढंग से जीवन स्वयं में जाग्रत होने वाली बात जागृति का प्रकाशन में मानव परम्परा आश्वस्त होने की बात, फलस्वरूप हम परिवार में सुख समृद्धि, समाज में सुख समृद्धि और वर्तमान में विश्वास, और व्यवस्था में हम सुख समृद्धि विश्वास और सहअस्तित्व को प्रमाणित कर लेते हैं। ये छोटा सा एक प्रस्ताव, इस पर हर व्यक्ति अपने को शोध कर सकता है और परीक्षण कर सकता है, निरीक्षण कर सकता है, सोच सकता है और निर्धारित कर सकता है। इसमें हर व्यक्ति स्वतंत्र है। स्वत्व क्या होगी? स्वतंत्रता होगा तो स्वत्व क्या होगी? जागृति ही होगी, समझदारी ही होगी, प्रमाण ही होगी, प्रमाणिकता ही होगी – ये स्वत्व है। तो इस ढंग से जागृति ही मानव का स्वत्व है। स्वतंत्रता, इसको अभिव्यक्त करने के लिए स्वतंत्र है और समझाने के लिए, अभिव्यक्त होने के लिए स्वतंत्र है। इन दोनों विधि है। इस दोनों विधि को ऐसा हम भाषा प्रयोग किया है – अनुभवमूलक विधि, अनुभवगामी विधि। अनुभवमूलक विधि से हम प्रमाणित होते हैं और अनुभवगामी विधि से हम प्रमाणों को दूसरों को बोध कराते हैं। अभी जो मैं कर रहा हूँ ये अनुभवमूलक विधि से, आपको बोध कराने की इच्छा से हमारे अभिव्यक्तियाँ हैं।

अभी आप हम इस बात पर यकीन करने योग्य स्थली में पहुँचे, जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में मानव होता है। यही मानव संवेदन विधि से जब सभी कार्यकलापों को योजित करता है, भ्रमित आदमी कहलाता है। उसके मूल में शरीर को जीवन मानना ही मूल मुद्दा रहता है। दूसरा, जाग्रत मानव यही स्पष्ट किया गया कि हम अपने चिंतन विधि से जागृति को पहचान लेते हैं। क्या जागृति को पहचाना भाई? जीवन क्रियाओं को पहचानना पहला जागृति है। अस्तित्व सहज नियति को पहचानना जागृति दूसरा पक्ष है। इन दोनों का योगफल में, हर मोड़ मुद्दे में समाधानित होना जागृति का तीसरा पक्ष है। और ये तीनों होने के पश्चात चौथे पक्ष है हर कार्य व्यवहार में हम न्याय को प्रमाणित कर देना। ये चौथा पक्ष है। इस ढंग से हम को प्रमाणित करने की चार पक्ष आता है।

इसमें से एक चिंतन पक्ष के बारे में बात बताई थी – जब हम संवेदनशीलता संज्ञानशीलता के मुद्दे को साक्षात्कार करते हैं, संवेदनशीलता प्रभावित होने के बाद संवेदनशीलताएँ नियंत्रित होते हैं। ये बात यदि हमको पूरा का पूरा स्वीकृति होती है, ये तो स्वीकृति सबको होता है – भ्रमित आदमी को भी स्वीकृत होता है; किन्तु उसमें स्वीकृति के बाद निष्ठा पैदा हो जाए, उसके लिए साक्षात्कार आवश्यकता है। साक्षात्कार चिंतन में ही होता है। ये चिंतन में हम अपने को नियंत्रित पा लिया, हमारे व्यवहार में हम नियंत्रित होना प्रमाणित हो जाता है। चिंतन में हम समाधानित होना पा गया, व्यवहार में हम समाधानित होना पाते ही हैं। चिंतन में हम न्यायिक होना पा गए, और व्यवहार में हम न्यायिक होना पा ही लेते हैं। ये हमने शतशः इसको देखा है। एक भी भाग की कमी नहीं है। सम्पूर्ण भागों में जाँचने के बावजूद भी हम यही चीज़ पाते हैं। इसको पाने के बाद ये पता लगता है मानव कितना बड़ा है। अभी तक हमारा जो, एक प्रकार से, बचपना किए हैं, आदमी को यंत्र में बेड़ने के लिए अथवा किताब में बेड़ के देखने के लिए कोशिश किया, ये कितने बचपने की बात है, ये सबको मूल्यांकित होना बन जाता है। तो ये बहुत महत्वपूर्ण घाट है ये। इस घाट को पार

करना मनुष्य ही करता है। जीव जानवर - कुत्ता, बिल्ली, गधा, घोड़ा - ये कोई नहीं करते हैं। तो हम मनुष्य को गधा, घोड़ा, कुत्ता, बिल्ली के साथ जोड़ करके हम भाषा सिखाते हैं, कार्य प्रणाली को सिखाते हैं, नीति शतक को सुनाते हैं, हम कितने अच्छे आदमी हैं, भदे आदमी हैं - आप ही मूल्यांकन कर लो।

ठीक है? तो इसमें यहीं से शुरू होता है - हमारा सारा बैसाखी इससे से छूट जाता है, सारे भ्रम टूट जाते हैं, सारे अतिवाद ध्वस्त हो जाते हैं और उसके बाद स्वच्छंद¹⁷ मानव के रूप में हम जीना बन जाता है। उसका प्रमाण मैं स्वयं हूँ। ऐसे आप भी हो सकते हैं, और भी हो सकते हैं, समग्र व्यक्ति प्रमाण बन सकते हैं। यही हमारा सोचना है, समझना है, सर्व शुभ की संभावना को हमने जो परिकल्पना में देखा और संभावना में देखा, योजना में देखा, कार्य योजना में देखा - इसी को देखा है। इस विधि से हम आ गए, दर्शन की बात आ गई। दर्शन का मतलब ही होता है समझना। समझने का मूल मुद्दा चिंतन ही है, चिंतन ही समझने का पहला सीढ़ी है। दूसरा सीढ़ी क्या है? स्वीकार हो जाना, माने बोध हो जाना।

तीसरा सीढ़ी क्या है? अनुभव हो जाना, माने तृप्त हो जाना, जिसको हम साक्षात्कार किया, बोध किया, उससे हमको तृप्ति मिल जाना - इसका नाम है अनुभव। ठीक है? साक्षात्कार और बोध का तृप्ति बिंदु आ जाता है। उसी स्थिति में आती है कर्म स्वतंत्रता, कल्पनाशीलता की तृप्ति बिंदु। उसी महूरत में आता है - कर्म स्वतंत्रता का तृप्ति बिंदु और कल्पनाशीलता में, कल्पनाशीलता का तृप्ति बिंदु कर्म स्वतंत्रता में होना कैसा होता है, वो तुरंत उसका ध्रुवीकरण हो जाता है। तो उसी के साथ-साथ कर्म करते समय में स्वतंत्र और फल भोगते समय में परतंत्र वाला जो बात रहती है, उसका निराकरण हो जाता है। कर्म करते समय में भी आप स्वतंत्र हो जाते हैं, फल भोगते समय में भी स्वतंत्र हो जाते हैं। वो कैसे आता है? उसका एक थोड़ा सा स्पष्टीकरण। भ्रम पूर्वक किया हुआ किसी भी कर्म फल का परिणाम है - वो लोग बाँटने में कोई लेता नहीं। भ्रम पूर्वक किया हुआ कर्म फल है - उसको संसार में बाँटने जाते हैं, वो कोई लेता नहीं है।

तो जागृति पूर्वक किया हुआ कर्म फलों को हर व्यक्ति घर में, घाट में, दरवाजे में और रस्ते में, हर व्यक्ति झोकने के लिए तैयार बैठा रहता है। इस ढंग से जो हम जागृति पूर्ण विधि से कर्मों को करते हैं, उसका फल को हम कितने भी बाँट सकते हैं। और भी कर्म कर सकते हैं और बाँट सकते हैं। इस ढंग से हम धनी होने की सिद्धांत बनता है। इसी आधार पर हम अपने आवश्यकता से जो अधिक उत्पादन करने वाले कार्य प्रणाली आती है और हमारा आवश्यकता कम होना और संभावनाएँ अधिक होना - ये भी सिद्धांत इसी के साथ जुड़ती है। इस ढंग से सब शास्त्र से और विचार से जुड़ने वाली स्थली जागृति ही है। नहीं तो बाकी सब भ्रम पूर्वक शरीर से ही जुड़ा रहता है। आप कुछ भी करो, आप कुछ भी प्रक्रिया करो, वैज्ञानिक प्रक्रिया, किन्तु शरीर से ही संवेदनाओं से ही जुड़ा रहेगा। ये शरीर संवेदनाओं से जुड़ा हुआ जितने भी कार्य प्रणाली है, कहीं ना कहीं कुंठित होता है, कहीं ना कहीं काला दीवाल में खड़ा होता है, कहीं ना कहीं पुनः जितना हम अच्छा मान करके चले थे, उससे बड़ा प्रश्न चिन्ह बन जाती है, हम स्वयं क्या किया, उसको शोध करने के लिए और आवश्यकता बन ही जाती है।

¹⁷ स्वच्छंद : स्वइच्छा अनुकूल आचरण करने वाला

इसी क्रम में हम सब खड़े ही हैं - ज्ञानी, अज्ञानी और विज्ञानी - सभी का सभी कोई ना कोई इसी कड़ियों में हम समाये हैं। ऐसा मेरा देखने की तरीका है। तो इस ढंग से दर्शन का मतलब होता है - समझदारी की मुद्दा। समझदारी की मुद्दा में तीन ही मुद्दा बनती है - एक तो हम जीवन को समझे रहते हैं, दूसरा जो है अस्तित्व को सहअस्तित्व रूप में समझे रहते हैं, तीसरा तो इन दोनों का योगफल में हमारा आचरण, मानवीयतापूर्ण आचरण होना बन जाता है। अब मानवीयता पूर्ण आचरण होना एक सहज क्रिया होने से मनुष्य परिवार में भी सुखी, मानव समाज में भी सुखी, मानव राज्य में भी सुखी, व्यवस्था में भी सुखी, पढ़ाई में सुखी, पढ़ाने में सुखी - सभी अवस्थाओं में सुखी। उसी के साथ और परिवार के हर व्यक्ति के साथ, बड़ों के साथ सुखी, बच्चों के साथ सुखी, वृद्धों के साथ सुखी, साथियों के साथ सुखी, सम्बन्धियों के साथ सुखी - सब के साथ हम सुखी रहना बनता है। फलस्वरूप हम सुखी करना बन जाता है। इसका एक ही line है - जिसके पास जो पूंजी रहती है, जिसके पास जो चीज रहता है, उसी को वह आबंटित करता है। तो मनुष्य के पास सुख का क्षण भी होता है और परेशानी का क्षण भी होता है। परेशानी का क्षण में आदमी परेशानी को बाँटता ही बाँटता है, और सुख के क्षणों में सुख को बाँटता ही बाँटता है। इसी को मैंने अनुभव किया है, मैं समझता हूँ आप भी अनुभव करेंगे और सुखी होंगे। ये कुल मिला करके जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में होने वाली प्रक्रियाएँ में से ये आ गए।

उसके बाद आता है शरीर के साथ जो जीवन का जो कार्यकलाप है, उसमें भ्रम और जागृति की दो बात पूरा हुआ। इस ढंग से हम इस ठोर में आ गए की जागृति पूर्वक हम सुखी होते हैं और भ्रम पूर्वक दुखी होते रहते हैं। ये इस प्रकार से आई महाराज। अब जागृति यदि हमारा वर होता है, उसके लिए हम जी-जान लगायेंगे ही, और उसमें हम जियेंगे ही। जिनको ये जरूरत पड़ता है, वो अपने निष्ठा को प्रमाणित करेगा ही। जिनको जरूरत नहीं है, वो नहीं करेगा। क्या आपत्ति हुई? और कैसे इसको कहोगे कहा? ये शरीर यात्रा तो बारंबार बनती रहती है, ये शरीर यात्रा में कोई नहीं माना, आगे शरीर यात्रा में अनुकूल परिस्थितियाँ बना ही रहता है, जाग्रत होने की संभावना बना ही रहता है। इस ढंग से मेरा अंतिम उद्गार है। इस ढंग से बन गई।

जय हो, मंगल हो, कल्याण हो!

अभी आप हम, जागृति के सम्बन्ध में, विश्वास करने के मुद्दे पर, कुछ समझने के कोशिश किए, समझाने की कोशिश किए। ये सफल होने की विश्वास में आगे की कड़ी।

दर्शन - ऐसे दर्शन के मुद्दे पर आपको ये स्मरण दिलाया है केवल सूचना के रूप में - व्यवहार दर्शन, कर्म दर्शन, अभ्यास दर्शन, अनुभव दर्शन। चार अध्याय में पूरा मध्यस्थ दर्शन को प्रस्तुत किया है, ये बात की सूचना पहले भी हुई है। और इसमें से हमारे साथ में जो मित्र बैठे हैं, इनका जिज्ञासा है ये अनुभव दर्शन। अनुभव दर्शन पर कुछ प्रकाश डालें, ऐसा आप कह रहे हैं। क्योंकि अभी तक अपन अनुभव का ही डंका बजा रहे हैं और यह भी हम कहना चाहेंगे अनुभव पूर्वक ही हम जो ठोस ढंग से अपने बात को प्रस्तुत करना बनता है। उसके पहले अनुभव विहीन विधि से हम प्रस्तुत तो होते हैं, किन्तु वो ठोसपन नहीं आता है, नहीं तो हमको ये कहना पड़ता है - किताब में लिखा है, तथ्य है ना, यंत्र ऐसा बताता है और मौसम का यंत्र ऐसा बनाता है, ये बनाता है, ये बनाता है, हम दूसरा कोई ना कोई संदर्भ को बता करके ही अपने सारा भाषाओं को प्रयोजित करना बनता है। नहीं तो - हमारा पिताजी ऐसा कहें थे, हमारे

बड़े लोग ऐसा कहे थे, हम लैबोर्टरी में ऐसा देखा - यही बताया! आप क्या किए? आप बताना बनता नहीं! ये मुख्य मुद्दा यहाँ से है।

अनुभव दर्शन में ये मुख्य मुद्दा के ऊपर काफी हस्तक्षेप किया है। अनुभव मूलक विधि से हम स्वयं जिम्मेवार होना बन जाती है। मैंने अनुभव किया है, ये उद्गार आता है। अनुभव के बाद अस्तित्व की नियम, अस्तित्व की नियति, अस्तित्व की प्रक्रिया, अस्तित्व में होने वाले विकास, अस्तित्व में होने वाले विकास क्रम और अस्तित्व में होने वाले जागृति क्रम, जागृति - इन सभी के साथ जुड़ करके हम कहते हैं हम अनुभव किया है। इसमें कोई एक बात को कहते नहीं हैं कि हम एक भाग को अध्ययन किया, ये समग्रता को अध्ययन किया। समग्रता में कितना सुगम है, वो बात आपको बताना चाहते हैं।

तो व्यापक वस्तु में एक-एक वस्तु होने की अवधारणा आपमें जब आ जाता है, एक-एक वस्तु में से मनुष्य भी एक-एक वस्तु में से एक है। उसमें से मनुष्य में जो विशेषता है, वो यही है - जीवन और शरीर का संयुक्त रूप। जीवन कुल मिला करके अनुभव करने वाला वस्तु है, ये आपके स्वीकृति में आ जाता है। अनुभव करने के लिए जब एकमात्र जीवन है, जीवन में ही हम अनुभव करना है अस्तित्व को सहअस्तित्व रूप में, जीवन को जागृति के रूप में - दोनों चीज़ को हम अनुभव ही करना है। इसको दूसरा कोई machine बता नहीं पाता है, ना कोई दूसरा विधि है, ना किताब बता पाता है, हर व्यक्ति ही अनुभव का जिम्मेवार है। अनुभव करने में कोई machine को, कोई माध्यम को हम यदि कहें ये ठीक है, वो होने वाला नहीं। मनुष्य ही अनुभव करेगा, मनुष्य ही जिम्मेवार होगा। मनुष्य ही जिम्मेवार होने के आधार पर समझदारी के कसौटी में जिम्मेवारी को निरंतर जांचेगा। क्या जिम्मेवारी के बारे में? व्यवस्था में जीना जिम्मेवारी है। समझदारी पूर्वक हम जीते हैं, व्यवस्था में जीना ही बनता है। दूसरा कुछ बनते ही नहीं। ये व्यवस्था को ही हम नियति कहते हैं।

समग्र व्यवस्था को हम नाम दिया है नियति। नियति ही समग्र व्यवस्था है, इन समग्र व्यवस्था में भागीदारी होने के लिए हम समझदार होते हैं, फलस्वरूप व्यवस्था में भागीदारी करते हुए हम प्रमाणित हो जाते हैं। यही अनुभव का दृष्ट फल है, माने जीता जागता फल ये ही है। इन फल को प्रयोग करने के लिए आदमी, हर आदमी अपने में अनुभूत होना, किस में - सहअस्तित्व में अनुभव करना, अनुभव किए रहना, एक आवश्यकीय मुद्दा है। जब कभी अनुभव होगा सह-अस्तित्व में ही अनुभव होगा, दूसरी जगह में अनुभव नहीं होता है। इसके पहले एक अवश¹⁸ में आदर्शवादी विधि से एकांत में अनुभव होता है, ये बात को सूचना में दी थी। और उसको समाधि स्थली बताई गई, उसको हम अच्छे भले प्रकार से देखा। उसमें ये निकलता नहीं है - मैं अनुभव किया हूँ, ये हम घोषणा नहीं कर सकते। हम चुप हो जाते हैं। चुप होने की बात वहाँ बनता है। ना हम समझदार हूँ, ये भी हम बता नहीं पाते, ना नासमझ हूँ, इसको हम घोषणा नहीं कर पाते। इस प्रकार की स्थिति हम आ जाते हैं। इसको भले प्रकार से देख लिया गया है। अभी हम आपको जो कह रहे हैं, ये भी देखा है। तो सह-अस्तित्व में अनुभव होने की स्थिति में, हम सहअस्तित्व को समझा हूँ, ये समझ में आता है। जीवन को हम जीवन के रूप में यदि हम पूरा का पूरा अध्ययन कर पाए हैं और उसको

¹⁸ अवश : बेबस, लाचार; इंद्रियों का दास

अनुभव कर लिए हैं, प्रमाणित करने के लिए योग्य हो पाए हैं, उस स्थिति में जीवन का अनुभव मुझमें हो गई है। इसको भी हम घोषणा कर सकते हैं।

जीवन का अनुभव होने के आधार पर हम न्याय धर्म सत्य को प्रमाणित करना बन जाता है। और अस्तित्व में अनुभव होने के आधार पर समग्र व्यवस्था में भागीदारी करना बन जाता है। सभी प्रयत्न का जो अभीप्सा¹⁹, आवश्यकता और जागृति का पहचान, ये इतने में ही होता है। इससे ज्यादा कुछ होता नहीं, इससे कम में आदमी प्रमाणित नहीं हो पायेगा। इससे कम में भी प्रमाणित होना संभव नहीं है, इससे ज्यादा कुछ प्रमाणित होने की आवश्यकता बनती नहीं। समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने के बाद जीवन में जीवन को हम न्याय धर्म सत्य के रूप में प्रमाणित करने के स्थिति में हम आ जाते हैं, यही ज्ञानावस्था की एक बहुत बड़ी भारी उपलब्धि, प्रमाण और परम्परा के रूप में प्रमाणित होने की संभावना, ये सब एक साथ उदय होता है। किस आधार पर उदय होता है? इसके पहले बताया था – चिंतन में हम सही गलती का, जागृति और भ्रम का हम लक्ष्मण रेखा को देख लेते हैं। इस पार भ्रम है, इस पार जागृति है – इस ढंग से आने लगता है।

उसी प्रकार न्याय इस पार है और इस पार में अन्याय है। इसी प्रकार समाधान इस पार है, उस पार में समस्या है। इसी प्रकार असत्य इस पार है, इस पार में सत्य है। इस बात की साक्षात्कार हमको हुआ रहता है। यही साक्षात्कार की महिमा है, इन महिमा के आधार पर हम कुछ भी योजना बनाते हैं, हम प्रमाणित होने के अर्थ में ही बना पाते हैं। इसी को प्रमाणित करने के अर्थ में ही योजना होती है, चाहे कुछ भी कर लो। कोई ही यंत्र बना लो, कोई भी इमारत बना लो। अंततोगत्वा मनुष्य की जहाँ तक मूल्यांकन है, प्रमाणित होने के मुद्दे पर ही आ के टिकती है, प्रमाणित होना बन जाता है। इसीलिए मनुष्य को अनुभव मूलक विधि से जीना आवश्यक है और अनुभव मूलक विधि से, अनुभवगामी पद्धति से अध्ययन कराना भी आवश्यक है। दोनों एक साथ ये आता है। जो हम अनुभव किए रहते हैं, प्रमाणित हुए रहते हैं, अनुभवगामी विधि से हम अध्ययन के लिए अपना योजना बनाते ही हैं।

इस ढंग से अनुभव दर्शन में इस बात को स्पष्ट करने की कोशिश किया है जीवन एक ऐसी अमूल्य वस्तु है, नियति सहज उपलब्धि है, जो इसमें कोई भी ना तो किसी का हस्तक्षेप है, ना तो कोई व्यापक वस्तु इसको बनाने बिगड़ने में नहीं लगा है या एक-एक वस्तु दूसरे के साथ जीवन को बनाने में बिगड़ने में कुछ भी हस्तक्षेप करने में नहीं है। माने ये जीवन को हर एक-एक जीवन के स्वरूप में होने के लिए और जीवन के स्वरूप में प्रमाणित होने के लिए, जीवन के स्वरूप में निरंतर रहने के लिए ये निरंतर सहायक हुए, इस बात को स्पष्ट करता है। ये इस ढंग से बनता है। इस विधि से हम एक अच्छी अपने मूल्य को समझने का एक स्रोत बनता है। किस विधि से? अनुभव विधि से। अनुभव विधि से हम यदि अपने मूल्य को पहचान लेते हैं, वो नित्य निरंतर प्रमाणित होने का एक प्रवाह बन जाता है। इस ढंग से मैंने अनुभव किया है। तो अनुभवात्मक अध्यात्मवाद में यही है – सत्ता में मैं अनुभूत होता हूँ, सत्ता में समग्रता को अनुभव करता हूँ, सत्ता में हम समग्रता के साथ व्यवस्था का अनुभव करता हूँ। यही अनुभवात्मक अध्यात्मवाद में आता है।

¹⁹ अभीप्सा : मून में दबी रहने वाली तीव्र कामना या लालसा

क्योंकि पहले भी आपको ये बताया था कि पूर्वजों ने एक भाषा दिया थी – अध्यात्म को व्यापक। उस व्यापक को हमने हर एक परस्परता के बीच में प्रमाणित करने की विधि दिया है और इस विधि से व्यापक वस्तु सब को बोध होने की बात आ गई। बच्चे, पाँचवी पढ़ने वाले बच्चे भी व्यापक वस्तु को पहले बोध करते हैं, उसके बाद एक-एक वस्तु को पूरा बोध करना बनता है। एक-एक वस्तु को बोध करने के लिए रूप, गुण, स्वभाव, धर्म – इन चारों को बोध करना पड़ता है। केवल व्यापक वस्तु में सर्वत्र विद्यमानता और पारदर्शियता, पारगामियता को बोध करने की आवश्यकता बनती है। इसको हम अध्ययन करा के देखा है, लोगों को बोध होता है, ये प्रमाणित हुई तथ्य है। इसके आधार पर सबको ये बोध होगा, इस आधार पर हम शुरुवात किए हैं। इस ढंग से अनुभवात्मक अध्यात्मवाद अपने में सार्थकता को मनुष्य की जागृति के स्वरूप में सत्यापित करता है।

प्रश्न : आपने अनुभव दर्शन की बात कही, कर्म दर्शन, अभ्यास दर्शन इसके बारे में भी थोड़ा संक्षेप में कुछ जानकारी देना चाहेंगे।

उत्तर : अनुभव दर्शन परम, व्यवहार दर्शन न्याय, और जो धर्म सहज विधि से जीने के लिए – अभ्यास दर्शन और कर्म दर्शन – ये दोनों नियोजित होते हैं। इस ढंग से इन तीनों चारों अध्यायों का अंतर्संबंध जुड़ी हुई है। कुल मिला करके न्याय धर्म सत्य पूर्वक जीना ही है, इसको प्रमाणित करना ही है, जागृति को प्रमाणित करना ही है। जागृति स्वयं में सहअस्तित्व रूप में ही है। एकांत रूप में कोई जागृति नहीं है, जागृति का प्रमाण होता ही नहीं ये बताया, एकांत का अंतिम बिंदु समाधि बताया। उसमें हम अच्छे हैं, बुरे हैं – इसको हम घोषित नहीं कर सकते। हम समझा हूँ, नहीं समझा हूँ – इसको घोषणा नहीं कर पाते रहे। इसको हम अच्छी तरह से देखा है। इसके बाद कोई शंका तो होना बेकार है। यदि शंका करना है तो आप समाधि के स्थिति को प्राप्त करिए, उसके बाद आप घोषणा करिए। ये बात ऐसे ही बनता है। ठीक है? तो इसमें समय को व्यर्थ करना बेकार है और समझदार होना सही घाट है। समझदारी में प्रमाणित होने की प्रवृत्ति है और समाधि में कोई प्रमाणित होने की प्रवृत्ति नहीं है, प्रवृत्ति शून्य है। उसका अर्थ ही बताया, योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः²⁰, चित्त वृत्तियाँ भले प्रकार से चुप हो जाएँ, इसी को निरोध कहते हैं, वो निरोध होना होता है। निरोध होने के बाद हम प्रमाणित करने की आवश्यकता है ही नहीं। ये एकांतवाद का बहुत बड़ी भारी तोप मानते रहे, एकांत में कोई चीज़ प्रमाण होता नहीं। ठीक है?

दूसरा भाग – एकांत नाम की कोई घाट नहीं है। ठीक है? ये दोनों नहीं होने के आधार पर इसकी जो हम व्यर्थ की प्रयास करना बन जाता है और यदि किसी को कोई बहुत ज्यादा ज़रूरत होगा तो हम तो कुछ नहीं कहेंगे, किन्तु इसमें सार्थकता तो कुछ नहीं। इसको छू-छू के देख लिया गया और देख-देख करके समझा गया, और जी-जी करने के प्रयत्न में हम सोच-सोच करके पहचानी गई। ये सभी होने के बाद ये उद्गार है जो समाधि में हम एकांतवाद कहते हैं, एकांतवाद का अंतिम छोर बताये थे – एकांत नाम की कोई चीज़ का प्रमाण होता नहीं है, हम उसका साक्षी हो नहीं पाते हैं। ये कुल मिला करके मतलब है। तो अनुभवात्मक अध्यात्मवाद नाम इसीलिए रखा – एकांतवाद में अनुभव है कहते रहे, हम कहते हैं – सहअस्तित्व में ही अनुभव है। इसको हम इंगित कराया है। क्या अंतर है, मौलिक अंतर?

²⁰ योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः: पतंजलि के अनुसार चित्त की वृत्तियों को चंचल होने से रोकना ही योग है

व्यापक वस्तु को अध्यात्म नाम दिया है, इसमें दो राय नहीं हैं। तो 'आधारम आत्मानाम यत्रस्य तत्र अध्यात्मः' (सभी आत्माओं का आधार का नाम आध्यात्म है)।

अध्यात्म या यदि हम परिभाषा करते हैं, सभी आत्मा का आधार हो। उसमें हम पदार्थ आत्मा, प्राण आत्मा, जीव आत्मा और ज्ञान आत्मा के रूप में प्रतिपादित किया है। आत्मा को हम मध्यांश को बताया है। परमाणु के मध्यांश को आत्मा बताया है। आत्मा जो है मध्यस्थ क्रिया करता है, इस कारण से आत्मा बताया है। सम विषम का जो बाधा मध्यस्थ क्रिया पर होता नहीं है, इसीलिए आत्मा बताया है। और मध्यस्थ क्रिया के अनुसार यदि आश्रित क्रियाएँ अर्थात् बुद्धि, चित्त, वृत्ति और मन काम करने लग जाते हैं, इसको हम जागृति कह रहे हैं। इस ढंग से होता भी है। मैं स्वयं इसका प्रमाण हूँ। इस ढंग से ये अनुभवात्मक अध्यात्मवाद का प्रस्तुति हुई। तो इसकी सार्थकता को हर व्यक्ति अपने में समझदारी के उपरान्त प्रमाणित करने की पद्धति से, आप देखिये, इसके मूल में अध्ययन नाम की चीज़ आती है। कुल मिला करके अध्ययन वो चीज़ है, स्मरण पूर्वक अनुभव की साक्षी में, अनुभव की रोशनी में, अनुभव के अर्थ में जो स्वीकृतियाँ होते हैं, इसका नाम है अध्ययन।

 [विडिओ संदर्भ देखें: Video 02, time 47:17-1:01:00](#)

अपन लोग ध्यान दिए थे कि स्मरण पूर्वक अनुभव की रोशनी में हम जितने भी स्वीकृतियाँ पा लेते हैं – इसको हम अध्ययन कहा है। अध्ययन का परिभाषा इसी प्रकार से किया है। समझदारी का जो एक ठोर है, समझदारी पर विश्वास करने का ठोर है – वो बोध ही है। ये बोध होना – अर्थ का ही बोध हो पाता है। वस्तु के साथ अर्थ बना रहता है। शब्द के साथ अर्थ बना रहता है। शब्द के साथ जो अर्थ बना रहता है वो वस्तु सहित अर्थ है। वस्तु में निहित अर्थ सहित वस्तु है। ऐसा बनता है शब्द का अर्थ। जैसा नाम – राम एक नाम है, राम कोई वस्तु के रूप में मिल जाता है तो इसका नाम है राम। ऐसा होता है। वो वस्तु में रूप, गुण, स्वभाव, धर्म निहित रहता है। उसका नाम है – वो वस्तु का अर्थ। वस्तु के अर्थ में जाते हैं तो क्या बनता है? रूप, गुण, स्वभाव, धर्म के रूप में हमको प्राप्ति होती है और शब्द का अर्थ को हम ले जाते हैं तो वस्तु के रूप में मिलता है। वस्तु का अर्थ रूप, गुण, स्वभाव, धर्म है और शब्द का अर्थ वस्तु है। ठीक है? ये मुख्य मुद्दा है। इस ढंग से क्या हुआ? प्रमाण क्या होगा – वस्तु होगा की शब्द होगा? इसको यहाँ हम सोच सकते हैं। सोचने पर पता लगता है – वस्तु ही प्रमाण है अस्तित्व में, ना केवल शब्द। शब्द से इंगित वस्तु मिलने पर ही वो प्रमाण है। प्रमाण का स्वरूप वस्तु है, ना की शब्द। ऐसा हमको समझ में आया है।

इस ढंग से एक बहुत अच्छी बात पर सूझ-बूझ शुरू होती है – ये शायद सब को प्यार लगता होगा – तो शब्द को प्रमाण कहें, वस्तु को प्रमाण कहें – किसको प्रमाण कहें? वस्तु में रूप, गुण, स्वभाव, धर्म अविभाज्य है। ये विभक्त होकर, खंड-विखंड हो करके बिखरते नहीं है। कोई भी वस्तु रहेगा, कोई संज्ञा में रहेगा, वो उसी अर्थ को प्रस्तुत किए रहता है। क्या अर्थ को? जो रूप, गुण, स्वभाव, धर्म उसकी होता है। उसको बताने के लिए कैसे हम पा गए? सारे अस्तित्व को चार अवस्था में पाए। एक पदार्थ अवस्था, एक प्राण अवस्था, एक जीव अवस्था, एक ज्ञान अवस्था। ज्ञान अवस्था में मानव को पा करके मानव का रूप, गुण, स्वभाव, धर्म को एक सम्पूर्णता में अध्ययन कराये – शरीर और जीवन के सहअस्तित्व में। उसके बाद जीवन के रूप में पुनः अध्ययन किए। जीवन के रूप में,

जीवन क्या कार्य करता है, उसको भी हम अध्ययन किए, अनुभव किए। और उसके बाद शरीर के रूप में क्या कार्य होता है, क्या कार्य को प्रमाणित करता है, इसको भी अध्ययन किए।

तो इसमें दो काम निष्पक्ष पात्र रूप में कार्य आता है - जो शरीर में क्रियावाही ज्ञानवाही - दो क्रिया होती हैं। ज्ञानवाही क्रिया ही जीवन से सम्पादित होते हैं और क्रियावाही क्रियाएँ सब शरीर की व्यवस्था से सम्पादित होते हैं। हाथ, पैर, नाक, कान - ये सब चीजें क्रियावाही क्रियाएँ हैं - ये सब बना रहता है। किन्तु इसमें होने वाले जो कार्यक्रम हैं, संवेदनाएँ हैं, ये जीवन के बिना होता नहीं। ये जीवन के साथ ही संवेदनाएँ शुरू होते हैं। जीवन शरीर को पहले जीवंत बनाये रखता है और ज्ञानवाही तंत्र पर अपने संकेतों को प्रमाणित, ज्ञापित करता है और संकेतित करता है, फलस्वरूप शरीर में वो-वो संवेदनाएँ प्रमाणित होते हैं, हर व्यक्ति इसको अनुभव करता है। हर व्यक्ति का मादे की चीज़ है ये।

तो उसी क्रम में आपको ये बताया संवेदनशीलता पूर्वक मनुष्य व्यवस्था में जीना बना नहीं। इतने दिन की, हज़ारों, लाखों वर्ष की इतिहास के अनुसार व्यवस्था में जीना बना नहीं। ना तो परिवार व्यवस्था आई, ना समाज व्यवस्था आई। दोनों नहीं आने से पुनर्विचार की आवश्यकता थी। किस विधि से क्या हो गई? संज्ञानशीलता पूर्वक जीना आ जाता है, संवेदनाएँ नियंत्रित होते हैं, फलस्वरूप हम व्यवस्था में जीना प्रमाणित हो जाता है - इस प्रकार से आई। अध्यात्मवाद के अनुसार, आदर्शवाद के अनुसार संवेदनाओं को cyanide दे करके मृत्यु शय्या में सुलाओ, ये कहते हैं। संवेदनाएँ ना हो, ऐसा वो कहते हैं। भौतिकवादी ये कहते हैं - संवेदनाओं में डूबे रहो। बोलिए साहब हम कहाँ जाएंगे? एक कहता है बिलकुल इसको operation करके अलग कर दो, एक कहते हैं उसमें डूबे रहो। अब इसमें कहाँ जाए आदमी? ये सोचने की बात है, ये मुद्दा है। इसमें हमको जो अनुभव हुआ है वो यह है - जीवंत शरीर में संवेदनाएँ होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, एक अलग दल प्रक्रिया नहीं है। ये व्यवस्था के अर्थ में यदि संयत होता है, इसमें कोई मानव परंपरा में अड़चन नहीं है।

यदि व्यवस्था के अर्थ में संयत नहीं होता है, उस समय में मानव परंपरा में सारा परेशानियाँ आई हैं, जो आज भोग रहे हैं। एक प्रकार की जातियाँ ये कहते हैं सब को मार डालें, हमारा जाति पैदा करें। एक बार बहुत पहले Russia में उनका republican day नाम की चीज़ होता है। China एक सन्देश भेजा - संसार में non-communists सब को मार दिया जाए, क्रम से communist प्रजा को पैदा किया जाए। इस प्रकार से वो शुभ सन्देश भेजा था! ये भी प्रयत्न हुआ, सोचा गया, किन्तु वो घटित नहीं हो पाया। इसी प्रकार से मनुष्य में अनेकानेक ऐसा आवेशित उदगार निकलती है - उसको मार दो, उसको काट दो, इसको मिटा दो - इस प्रकार की चीज़ें जाते हैं - ये सब संवेदनाओं का अतिवाद कहलाया गया। उसी भाँति दूसरे ओर गया अतिवाद - हम जो भक्त हो गए, हम रोने लगे। रोने से क्या हो गया भाई, क्या चीज़ मिल गई? रोने से अच्छा अवश्य लगा, हुआ कहाँ है अच्छा? अच्छा लगना, अच्छा होना में दूरी है कि नहीं है? दूरी को पाटना ज़रूरी है कि नहीं है - ये सोचने की मुद्दा बनता है। इसमें से ये निकल करके आया है।

उसमें हम उसको वरा, अच्छा होने को हम वरा। अच्छा लगने को हमने नहीं वरा। इससे क्या हो गई, हमको क्या प्राप्ति हो गई? हमको ये प्राप्त हो गई - संवेदनाएँ नियंत्रित होने का दृष्टा मैं बन गया। कितना छोटी सी बात है! -

भाववेशों से रोना, गाना, नाचना – है ना? और सारा विलाप करना, प्रलाप करना, चीखना, चिल्लाना – है ना? हाथ पटकना, पैर पटकना – ये सब तो हम करके देखें हैं भाई, उससे कुछ भी नहीं निकला। तब हमको ये पता लगा – होना क्या चाहिए? होना ये चाहिए कि हम कम से कम संवेदनाओं का दृष्टा बना रहना चाहिए। इस बात को बुद्ध दर्शन भी शायद उसको तय करता है, निर्देशित करता है या अंगुली-न्यास कहता है, ऐसा मेरा सोचना है। संवेदनाओं को देखते रहने के लिए दृष्टापद वो मानते हैं, ऐसा उनकी सोचने की तरीका है। उनका अष्टांग विधि से ये ही आता है। मेरे अनुसार दृष्टा पद प्रतिष्ठा तभी होता है, तो संवेदनाएँ जो करते हैं उसको हम देखने मात्र से हम दृष्टा नहीं हुए, संज्ञानशीलता में संवेदनाएँ जब नियंत्रित होते हैं, तब संज्ञानशीलता का हम दृष्टा बनते हैं, संज्ञानीयता का हम दृष्टा बनते हैं। जीवन ज्ञान का दृष्टा जीवन ही है – ये बात हम समझे हैं। इसीलिए हम दृष्टा, ज्ञाता, कर्ता, भोक्ता जीवन ही होता है, इस बात को हमने घोषणा किया है।

तो भोगने वाला भी जीवन है, शरीर थोड़ी ही भोगता है दर्द को। जब जीवंत रहता है शरीर, तब तक दर्द, उसके बाद कहाँ दर्द? मरा हुआ आदमी को कहाँ दर्द रहा भाई? जला देते हैं, गाड़ देते हैं, सारा कर्म ही करते हैं। सम्पूर्ण कर्म करते हुए हम देख ही आ रहे हैं। इसलिए जो शरीर को दर्द होता है, ये बात हम को समझ में नहीं आया। पहले हम भी ऐसा ही सोचते थे। जबकि शरीर को दर्द नहीं होता है, जीवन ही दर्द को पहचानता है, फलस्वरूप दर्द से मुक्ति का उपाय खोजता है, ये कुल मिला करके बात आई। उसी क्रम में पहले से हम आयुर्वेद को सोचा है, ज्योतिषी को सोचा है, ये सभी बातों को सोचते हुए चले आए हैं। अभी भी सोचते रहते हैं, कुछ ना कुछ।

इस क्रम में हमारा सोचना ऐसा हुई – संज्ञानशीलता पूर्वक हम संवेदनाओं को नियंत्रित होता हुआ देख पाते हैं, संज्ञानशीलता ही सार्थक होता हुआ, प्रमाणित होता हुआ देखते हैं, यही दृष्टा पद प्रतिष्ठा का मतलब है। ऐसे दृष्टा पद प्रतिष्ठा में जागृत जीवन होना स्वाभाविक है – ये मुख्य मुद्दा यहाँ हुआ – जीवन की वैभव, अनुभव का वैभव यही है। स्वयं को दृष्टा पद में पहचान लेना ही अनुभव का मतलब है। मतलब क्या है? स्वयं को दृष्टापद में पहचान लेना और उसको प्रमाणित कर लेना – ये दृष्टा पद प्रतिष्ठा का मतलब है। जीवन जागृति का मतलब यही है, प्रमाणित होने का मतलब यही है और स्वअनुशासित होने का मतलब भी यही है। इस ढंग से मानव महा उपयोगी, सर्वतोमुखी उपयोगी होने वाला जो बात हुई, जाग्रत मानव में ही आता है।

नहीं तो संकीर्णता, कुछ भाग में – हम उपयोगी होने दौड़ते हैं, वो भी अधूरा हो जाता है, कहीं नाक कटा रहता है, कहीं कान कटा रहता है और भद्गी से भरा रहता है कई कार्यों को, हम संवेदनाओं के साथ जितने भी काम करते हैं, सर्वांग सुंदर तो कोई होता नहीं – ये आपको बताना चाहते हैं। सभी अंग से हम सुंदर रूप में कोई काम कर नहीं सकते, कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर सकते, ना कोई व्यवस्था को हम गढ़ नहीं सकते, ना जी सकते – संवेदनाओं के सीमा में – ये तो बात सही है। वो ही चीज़ आज धरती पर तांडव नृत्य है – कहीं किसी भद्गी, कहीं किसी भद्गी, संवेदनाओं में जीने के लिए जो बाध्य किया है, तो आज तक वो बाध्यताएं इसी बात को प्रमाणित करता रहा – ये आप हम समझने योग्य हैं और इसको मूल्यांकन करने योग्य मानव ही है, वो मूल्यांकन मानव जागृति पूर्वक ही करेगा, भ्रम पूर्वक तो करेगा नहीं। मुख्य बात रहा – दृष्टा पद होने का मतलब में।

तो जो जीवन अनुभव दर्शन के साथ अनुभवात्मक अध्यात्मवाद लिखना और वाद लिखने के बाद शास्त्र लिखना, शास्त्र लिखने के बाद योजनाओं को लिखना - ये कार्य संपादन मैंने किया है। तो किस अर्थ में कर दिया भाई? मनुष्य जो व्यवहार और प्रमाण से लेकर अनुभव तक - इसका लंबाई, चौड़ाई, ऊंचाई इतना है। व्यवहार प्रमाण से लेकर, कर्म प्रमाण से लेकर, विचार में समाधान प्रमाण से लेकर और अनुभव प्रमाण तक आदमी पूरा लंबाई चौड़ाई है। इसीलिए अनुभव दर्शन भी लिखा, व्यवहार दर्शन भी लिखा, अभ्यास दर्शन भी लिखा और कर्म दर्शन भी लिखा। इसीलिए लिखा - कुल मिला करके संज्ञानशीलता संवेदनशीलता के साथ नियंत्रित होता रहता हुआ, संवेदनाएँ नियंत्रित रहता हुआ, देखने की दृष्टि से, समझने की दृष्टि से, समझने के बाद प्रमाणित होने की दृष्टि से इसको ऐसा लिखा। इस ढंग से पूरा दर्शन, विचार, शास्त्र और योजना निष्पन्न हुई। ये पूरा सहअस्तित्व पर निर्भर है। इस सहअस्तित्व में ही हम सभी प्रमाणों को सभी अवस्था में प्रस्तुत कर पाते हैं। अनुभव को भी प्रमाणित कर पाते हैं, न्याय को भी प्रमाणित कर पाते हैं, समाधान को भी हम प्रमाणित कर पाते हैं। इस ढंग से इन तीनों चीज़ों को प्रमाणित कर देना ही, कुल मिला करके, जाग्रत जीवन का रास्ता है। इन जाग्रत जीवन के रास्ता में संवेदनाएँ नियंत्रित होते हैं, व्यवस्था के अनुकूल हो जाते हैं, कोई उद्धमबाज़ी करते नहीं हैं, आराम से जी सकते हैं, सुख से जी सकते हैं, परस्परता में विश्वास निर्वाह हो सकता है। ये बात है।

5. दर्शन, वाद और शास्त्र

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 2, time 59:02-1:14:10](#)

जीवन अनुभव दर्शन के साथ जो अनुभवात्मक अध्यात्मवाद लिखना और वाद लिखने के बाद शास्त्र लिखना, शास्त्र लिखने के बाद योजनाओं को लिखना – ये कार्य संपादन मैंने किया है। तो किस अर्थ में कर दिया भाई? मनुष्य जो व्यवहार और प्रमाण से लेकर अनुभव तक मनुष्य – इसका लंबाई, चौड़ाई, ऊंचाई इतना है। व्यवहार प्रमाण से लेकर, कर्म प्रमाण से लेकर, विचार में समाधान प्रमाण से लेकर और अनुभव प्रमाण तक आदमी पूरा लंबाई चौड़ाई है। इसीलिए अनुभव दर्शन भी लिखा, व्यवहार दर्शन भी लिखा, अभ्यास दर्शन भी लिखा और कर्म दर्शन भी लिखा। इसीलिए लिखा – कुल मिला करके संज्ञानशीलता संवेदनशीलता के साथ नियंत्रित होता रहता हुआ, संवेदनाएँ नियंत्रित रहता हुआ, देखने की दृष्टि से, समझने की दृष्टि से, समझने के बाद प्रमाणित होने की दृष्टि से इसको ऐसा लिखा। इस ढंग से पूरा दर्शन, विचार, शास्त्र और योजना निष्पन्न हुई। ये पूरा सहअस्तित्व पर निर्भर है। इस सहअस्तित्व में ही हम सभी प्रमाणों को सभी अवस्था में प्रस्तुत कर पाते हैं। अनुभव को भी प्रमाणित कर पाते हैं, न्याय को भी प्रमाणित कर पाते हैं, समाधान को भी हम प्रमाणित कर पाते हैं। इस ढंग से इन तीनों चीजों को प्रमाणित कर देना ही, कुल मिला करके, जाग्रत जीवन का रास्ता है। इन जाग्रत जीवन के रास्ता में संवेदनाएँ नियंत्रित होते हैं, व्यवस्था के अनुकूल हो जाते हैं, कोई उद्धमबाज़ी करते नहीं हैं, आराम से जी सकते हैं, सुख से जी सकते हैं, परस्परता में विश्वास निर्वाह हो सकता है। ये बात है। इसीलिए ये शास्त्र लिखा, दर्शन लिखा, योजना लिखा।

दर्शन का मतलब तो आपको समझा दिया – दर्शन का मतलब ही है दृष्टा पद प्रतिष्ठा में जीवन है, सम्पूर्ण नियामत²¹ वस्तु को स्वीकार लेना ही यथावत, माने सत्ता में संप्रक्त प्रकृति को स्वीकारा, सम्पूर्ण क्रियाओं को स्वीकारा, विकास को स्वीकार, विकास क्रम को स्वीकारा, जीवन को स्वीकारा और जीवन और शरीर का संयुक्त स्वरूप में जागृति को स्वीकारा, जागृति को प्रमाणित करने की विधि को प्राप्त कर लिया है, ये ही कुल मिला करके शास्त्रों में विधि को निश्चयन किया गया – किस विधि से हम जागृति को प्रमाणित करते हैं। यदि जागृत हो जाते हैं, हम जागृति को कैसा व्यवहार में प्रमाणित करते हैं, व्यवस्था में कैसा प्रमाणित करते हैं, उत्पादन में कैसा प्रमाणित करते हैं – इसको स्पष्ट रूप में पहचानने के लिए अध्ययन कराया है, अध्ययन के लिए प्रस्तुत किया है।

समझना तो व्यक्ति से व्यक्ति ही समझेगा, वो केवल पठन के लिए ये पुस्तिका होता है, समझने के लिए आदमी होता है। पुस्तक से कोई चीज़, सही चीज़, समझ में आएगा नहीं। कोई आदमी के सम्मुख ही, आदमी के सान्निध्य में ही सही चीज़, सही ढंग से दूसरे आदमी को समझ में आता है। इस ढंग से अध्ययन को हम मनुष्य को हटा करके कोई अध्ययन नहीं करा सकते हैं। सूचना दे सकते हैं, सूचना शब्द होते हैं, उससे उत्साह बढ़ सकता है, जिज्ञासा भी आ सकता है किसी-किसी को। बहुत कम लोगों को जिज्ञासा आएगी, किन्तु सूचना सब को हो जाती है। इसको देखा गया है। इसको हमारे सारे कार्यक्रम के क्रम में इसको मूल्यांकित की गई है। इस ढंग से लिखने का जो ज़रूरत कैसे पड़ी है? दर्शन जागृति को इंगित कराना बहुत ज़रूरी रहा, जाग्रत जीवन ही दर्शक होता है, जीवन का भी दर्शक,

²¹ नियामत : ईश्वर प्रदत्त वैभव, धन-संपत्ति

अस्तित्व का भी दर्शक। ये बनता है, इसलिए दर्शन नाम दिया। दर्शन का मतलब है समझना, समझने की सारा प्रक्रिया मिल करके दर्शन है। उसको वाद में लाये तो तर्क संगत विधि से प्रस्तुत किया।

तर्क संगत विधि से प्रस्तुत करने की बात विज्ञान युग से शुरू हुई। उसके पहले तर्क को entertain नहीं करते थे। तर्क जो है ना उसको वितण्डावाद कहते थे, नास्तिक कहते थे, इस प्रकार से कुछ कह लेते थे। किन्तु विज्ञान युग के बाद तर्क को स्वीकारना, सुनना शुरूआत हुआ। शुरूआत होकर वहाँ पहुँच गया – तर्क ही तर्क रह गया, वस्तु नहीं रह गया। कैसे दुष्परिणाम है, यह देख लीजिये। पहले तर्क को हम स्वागत ही नहीं किए, और उसके बाद जो बड़े लोग कहें- तुम कुछ पूछने का अधिकारी नहीं हो, ईश्वर के बारे में तुम कुछ पूछने का अधिकार नहीं है, यहाँ से तो हम lock किए थे सारा मार्ग को, किन्तु विज्ञान आ करके उसको खोल दिया। तर्क संगत विधि से हम प्रस्तुत होते हैं – ये पहले घोषणा किया। विज्ञान systematic study है, तर्क संगत है। दो बात इसमें है।

इस विधि से जो प्रस्तुत हुआ जन मानस को, तर्क पसंद आई। तर्क करने कि विधि में काफी लोग रंगें और काफी लोग तार्किक हुए भी, बहुत तर्क अभी भी प्रस्तुत करते ही हैं। इस ढंग से तर्क संगत करना भी एक कार्य आवश्यक है, ऐसा मैं सोचा। किस मुद्दे पर? अभी तर्क भौतिकवाद के अनुसार 'द्वन्दात्मक भौतिक वाद' प्रस्तुत किए थे – उसको तर्क संगत विधि से प्रस्तुत किए – संघर्ष उसका केन्द्र बिंदु बनता है, स्वयं के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सब को मिटा सकते हैं – ये अनुमति उससे मिलता है। उस आधार पर सब को मिटा दो, अपने को बनाए रखो – यही अनुमति मिलता है। तो उसमें कोई व्यतिरेक हो तो यहाँ बैठे हैं दिग्गज – आप लोग बतायेंगे। मेरे समझ के अनुसार इतने ही है। तो वो मानव उपयोगी नहीं हुआ – मानव के लिए तर्क संगत भी नहीं हुआ या वो व्यवहार संगत तो होना ही नहीं है।

तर्क सांगत ही जब नहीं होता है तब व्यवहार संगत कब होने वाला है। इसीलिए वो धीरे-धीरे सर्वाधिक लोगों के मन में अस्वीकृत भी हुआ है, ये भी बात हुआ है। करने जाते हैं, जीने जाते हैं, कहीं ना कहीं हस्तक्षेप के साथ ही जीना है, ये बात को भी स्वीकारा है। कोई ना कोई हस्तक्षेप के साथ ही हम जीयेंगे, ये भी बात स्वीकारा है आदमी, भौतिक शास्त्र के अनुसार। इसको लिखा उन्होंने 'द्वन्दात्मक भौतिक वाद', उसके आधार पर हमने लिखा 'समाधानात्मक भौतिकवाद'। ये तो संघर्ष उनका शुरूआत थी, हमारे अनुसार शुरूआत होता है पूरकता से, सहअस्तित्व पूर्वकता, ठीक है ? पूरकता विधि से इसको – 'समाधानात्मक भौतिकवाद' को हम प्रस्तुत किया है। पूरकता विधि से विकास का क्रम, विकास – दोनों मानव को अध्ययनगम्य होता है, इसीलिए उसको लिखा। इस ढंग से 'समाधानात्मक भौतिकवाद' का सार्थकता हमको समझ में आया।

उसके आगे 'व्यवहारात्मक जनवाद'। अभी जो हमारे पास है प्रचलन में, वो है 'संघर्षात्मक जनवाद'। वो ही – संघर्ष करो, तुम जीते रहो, बाकी को मिटाते रहो, बात यहाँ बोलते हैं। हम कहते हैं, सहअस्तित्व में सुख है, शांति है, संतोष है, समृद्धि है, वर्तमान में विश्वास है, सहअस्तित्व नित्य वर्तमान है। इसको मानव परम्परा के रूप में हम अच्छी तरह से अपने को सज सकते हैं, धज सकता हैं, प्रमाणित कर सकते हैं। 'व्यवहारात्मक जनवाद' में यह बताया।

उसके बाद 'अनुभवात्मक अध्यात्मवाद' लिखा। अध्यात्मवाद तर्क संगत से लिखा, तर्क का जो क्या कर दिया हमने – विवेक और विज्ञान – विवेक सम्मत विज्ञान, विज्ञान सम्मत विवेक। विवेक का मतलब है – हम लक्ष्य को

पहचानने की कार्यक्रम, पहचानने की विधि, लक्ष्य की स्थिरता के बारे में पूर्ण विश्वास करने की विधि को तर्क संगत विधि से जोड़ दिया। कौन तर्क है वो? विज्ञान सम्मत विवेक, विवेक सम्मत विज्ञान विधि से जोड़ा है। उसके बाद उसको जोड़ने के पश्चात एक सुगमता बन गई – हम व्यवस्था के प्रति विश्वस्त होने के आधार बन गई। व्यवस्था के प्रति यदि विश्वास होता है, ऐसा तो आप हम सब व्यवस्था को वरते ही हैं, अव्यवस्था को बिल्कुल नहीं वरते है, परिस्थिति पा करके अव्यवस्था में हाथ बटा देते हैं। ठीक है ये? इसमें क्या हो गई? मनुष्य का दोहरा व्यक्तित्व के लिए आधार बन गई। उस परेशानी को मिटाने के लिए हमने लिखा है ‘अनुभवात्मक अध्यात्मवाद’। इसमें क्या होता है – दोहरा व्यक्तित्व की जरूरत नहीं है।

बिल्कुल आराम से, स्वच्छ रूप में, एक ही प्रकार से हमारा सोच समाधान से जुड़ी हुई, लक्ष्य से जुड़ी हुई। समाधान से जुड़ने पर व्यवहार में प्रमाणित हो जाते हैं, लक्ष्य से जुड़ने पर अनुभूत हो जाते हैं। क्या बात है, क्या बात है! लक्ष्य से जुड़कर हम तर्क को प्रायोजित कर देते हैं, अनुभूत हो जाते हैं। वो ही तर्क को हम समाधान से जोड़ते हैं व्यवहार में प्रमाणित हो जाते हैं। इसीलिए ‘अनुभवात्मक अध्यात्मवाद’ व्यवहारिक है, इसको अध्ययन करने की आवश्यकता है, ऐसा हम शुरू किए। पहले जो थी ‘रहस्यात्मक अध्यात्मवाद’ – अध्यात्म जो है ना व्यवहार में प्रमाणित नहीं होता है, वो वहाँ छोड़े थे। हम उसको आगे बताया – अध्यात्म यदि भी कोई वस्तु है, वो व्यवहार में ही प्रमाणित होगी। सबसे ज्यादा विश्वास दायक वस्तु व्यवहार में प्रमाणित होना ही है, इसको हम प्रतिपादित किया। ये शायद मानव कुल को मदद करेगा, ऐसा मेरा सोचना है।

उसके बाद क्या हो गई – ये तो हुआ वादों की बात। उसके बाद शास्त्रों के पास गए। शास्त्रों के पास में गए तो और भी उसमें कई जटिलताएं सुलझ गयीं। जैसा – अभी हमारे पास ‘लाभोन्मादी अर्थशास्त्र’ हमारे प्रचलन में है, अभी शिक्षा संसार में प्रचलित है। उसका मूल सिद्धांत है – आवश्यकताएं अनंत है, साधन सीमित है’। इसी लिए संघर्ष करना जरूरी है, मतलब लूट-पाट करना जरूरी है, यहाँ से अर्थशास्त्र को शुरू करते हैं। हम कहाँ से शुरू करते हैं? ‘आवर्तनशील अर्थशास्त्र’। ‘आवर्तनशील अर्थशास्त्र’ के मतलब में यह बतायी गई है, प्रतिपादन किया गया है – मनुष्य की जागृति के उपरान्त मनुष्य की आवश्यकताएं निश्चित होते हैं, संयत होते हैं, निर्धारित होते हैं, सीमित होते हैं, संभावनाएं अधिक हो जाते हैं। हमारा आवश्यकता पूरा होने की संभावना बढ़ जाता है। हमारा आवश्यकता कम हो जाता है, हम आवश्यकता से अधिक उत्पादन कर सकते हैं, समृद्धि का अनुभव कर सकते हैं।

‘आवर्तनशील अर्थशास्त्र’ में इस बात का प्रतिपादन है। उसके साथ और एक बहुत अच्छी बात कही गई है – श्रम का नियोजन, श्रम का मूल्यांकन की बात कही गई है। श्रम मूल्यों के आधार पर वस्तुओं का आदान प्रदान विनिमय पद्धति के लिए, एक पद्धति को सूचना के रूप में, बोध के रूप में, अध्ययन के रूप में दिया है। वो यदि अध्ययन गम्य हो जाता है, आदमी को स्वीकार हो जाता है, ये चोरी-चमारी सब समाप्त हो गई, कुछ हो ही नहीं सकता। इसको यहाँ से रोका जा सकता है। अभी जो वर्तमान में व्यापार संसार में जो उत्पादन से लेकर व्यापार तक adultration बनी हुई है, ये दूर हो सकता है। अच्छे स्वच्छंद विधि से हम वस्तुओं को निर्मित कर सकते हैं, हस्तांतरित कर सकते हैं, हमारा आवश्यकता के वस्तुओं को सुलभ रूप में प्राप्त कर सकते हैं। उसकी विधियाँ लिखी हुई हैं। तो विनिमय पद्धति भी उसी के साथ लिखी हुई है।

उसके बाद आता है 'व्यवहारवादी समाजशास्त्र'। अभी हमारे पास जो समाज शास्त्र है, वो 'भोगोन्मादी समाजशास्त्र' है। उसके स्थान पर हम 'व्यवहारवादी समाजशास्त्र' लिखा, न्यायिक समाज। समाज शास्त्र का मतलब है - न्याय को प्रमाणित करना। उसमें बहुत लम्बी चौड़ी सिद्धांत कुछ भी नहीं है - संबंधों का पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन, उभयतृप्ति विधि से हम सामाजिक होते हैं। इसका प्रमाण में बहुत सारे models प्रस्तुत किए हैं, उसका अध्ययन से मनुष्य को काफी मदद होगी, आश्वस्त होगा, आगे की पीढ़ी भी अभ्युदय हो सकता है, ऐसा मेरा सोचना है।

तीसरे पक्ष ये रहा कि हमारा 'मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान'। मनोविज्ञान में इस बात को दर्शाने की कोशिश किया है - मानव जो है ना संज्ञानशीलता, संवेदनशीलता - इन दोनों के संयुक्त रूप में संचेतनावादी व्यक्ति होता है। संचेतना में क्या समाहित है? संवेदनशीलता और संज्ञानशीलता - ये दोनों एकत्रित है। संज्ञानशीलता में नियंत्रित संवेदनाओं को यदि हम प्रयोग करते हैं, किस प्रकार से हम व्यवहार कार्य करते हैं, कितने आयामों में करते हैं, कितने कोणों में करते हैं - उस बात को तर्क संगत विधि से, बोधगम्य विधि से, प्रस्तुत किया है।

इस ढंग से दर्शन, विचार और शास्त्र को प्रस्तुत करने की कोशिश किया, उसी के आधार पर तीन योजनाओं को प्रस्तुत कर दिया, वो है - जीवन विद्या योजना, उसके बाद शिक्षा का मानवीयकरण योजना और उसके पश्चात परिवार मूलक स्वराज योजना। इस ढंग से तीन योजनायें आये हैं। इन योजना के बारे में बाद में अपन विचार करेंगे, यदि आवश्यकता हो तो। यही आप लोगों के हाथ में इन योजनाओं का स्वरूप प्रस्तुत है और इसके बावजूद भी आप लोगों को जिज्ञासा होगा तो उसपर हम विचार करेंगे।

जय हो, मंगल हो, कल्याण हो!

6. मानव शरीर रचना

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 3, time 42:24-54:03](#)

हरि हर!

हरि-हर का मतलब किसी भी वस्तु का स्थिति और गति से है। ये देखा गया है अस्तित्व में, हर वस्तु अपना स्थिति गति में ही होना पाया जाता है। इसलिए होने का स्मरण करते हुए, हर कार्य को हम शुरू करते हैं और होने के अर्थ में ही हमारा पूरा प्रस्तुतियाँ हैं।

अभी शरीर होने के बारे में बात शुरूआत करने के लिए शुरू है। पहले भी ये बात का एक सूत्र रूप में कहा गया है कि शरीर का संरचना गर्भाशय में होती है। उसको शिशु-कालीन शरीर हम मानते हैं। गर्भाशय में जितना शरीर रचना, जितना लंबा-चौड़ा हो पाता है, उसको शिशु हम नाम दिया है। ऐसे संरचना के मूल में डिम्ब कोशा के डिम्ब सूत्र और शुक्र कोशा के शुक्र सूत्र - ये दोनों के संयोग वश भ्रूण बनता है, और भ्रूण बनने के उपरांत वो शिशु रचना हो पाता है। ये छोटा सा काम, ये प्रकृति सहज विधि से आदि काल से होते ही आई है। इसके बारे में काफी लोगों ने सोचा, समझा, वो कृत्रिमता²² को मनुष्य अपने ढंग से, अपने प्रयत्नों से इन सब प्रक्रियाओं को साध्य करने के लिए खोजा, सोचा। अंततोगत्वा प्राण कोशा नहीं बना, अभी प्राण कोशा के बिना, अभी ये सोच रहे हैं, चमड़े से, पैर से, हाथ से, चमड़ी निकाल करके और सूत्रों को निकालकर उसको फलित बनाकर, पुष्ट बना करके, उसको गर्भाशय या गर्भाशय के सदृश्य परिस्थिति में रखकर, शिशुओं को तैयार करने के लिए हम सोच रहे है। वो एक भाग है।

उसी के साथ यह भी जुड़ा रहता है कि एक तरफ यह हो-हल्ला हम करते हैं कि धरती पर जनसंख्या बढ़ गई। एक तरफ यह भी करते हैं, एक तरफ ये भी हल्ला, एक तरफ ऐसा प्रयत्न। एक आदमी को करोड़ों में हम बना लें - एक ये हल्ला, और पैसा भर चाहिए। काम इतने ही है। ऐसा अभी की स्थितियाँ बना रहीं है। इसमें बुद्धिमता क्या है? उसको सोचने पर पता लगता है, इस प्रकार की प्रयास की सर्वथा जरूरत नहीं है। अभी जो जितना जनसंख्या धरती पर है, उसी में से जो जितना सिर का दर्द है, वो सिर का दर्द, मनुष्य जाति सहने से अधिक हो चुकी है। उसका भी परिणाम के बारे में भी लोग-बाग सोचते हैं कि आगे ऐसा हो जाएगा, तैसा हो जाएगा, सब मर जायेंगे, ये सभी बात आ ही रही है। इन सब स्थितियों को देख करके लगता यही है कि इस मुद्दे पर बहुत ज्यादा जो मनुष्य की संख्या को बढ़ाने के लिए प्रवृत्ति, वैज्ञानिक विधि से अथवा प्रक्रिया से हम प्रयत्न करने की कोई आवश्यकता दिखता नहीं। व्यापारिक विधि से जो दिखता होगा, दिखता होगा। ठीक है?

व्यापार में तो सभी बात को पैसे में भराना चाहते हैं। वो बात को ऐसे सुना जाता है कि पत्रिकाओं में निकलती है कि हल्दी, बिल्कुल गाँठ, नागपुरी नाम देते है, और उसको १५०० रूपया कुछ भी पैसा लिखे रहते हैं। हल्दी पिंसी हुई, वो १२०० रूपया लिखे रहते हैं। आप ही सोच लो, इसको हर दिन छापा जाता है, उसको सरकार सुनता है, उसको

²² कृत्रिमता : बनावटी या कृत्रिम (नकली) होने की अवस्था या भाव

वैध मानता है। उसके बाद सरकार क्या है, आप ही सोच लो। ये हर दिन के रोजमर्रे की बात है। ये भी नहीं कि एक ही दिन छपता है। हर दिन छपता है ये पेपर्स में। इस प्रकार की चीजें हम देखते हैं। तो पता लगता है व्यापार के लिए शायद आदमी निछावर हो गया है। और व्यापार नहीं तो आदमी को चगुल-चगुल करके खा ले रहा है। दो में से एक हो गया है। तो उसको जाँचने की बात है। व्यापार विधि से जो आवश्यकता होगा हम नहीं जानते। किन्तु इसकी अस्तित्व में, मानव परंपरा के लिए इस प्रकार की प्रयत्न की ज़रूरत नहीं है। इतना भर हमको समझ में आता है।

इसके बाद आता है – शरीर संरचना जब गर्भाशय में तैयार होता है, पाँच मास जब होता है, तब तक मेधस रचना पूरा हो जाता है। मेधस रचना के बाद ही कोई ना कोई जीवन शरीर को चलाने के लिए प्रयत्न करता है। इसका संकेत कैसे मिलता है? गर्भाशय में शिशु अपने आप में घूमने लग जाता है, हरकत शुरू करता है। इसको हर एक माँ बनने वाली महिला पहचानती है। वो ही बच्चे का सिरोभाग दाहिने तरफ यदि रहता है, अंत में वो लड़का के रूप में ही आता हुआ, बांय तरफ रहने पर लड़की के रूप में आता हुआ देखने को मिलता है। इसको सर्वाधिक देखा गया है, सर्वाधिक ऐसे ही प्रमाणित होता है। इस ढंग से इसको गर्भतंत्र में होने वाली प्रक्रिया – भ्रूण से शिशु, शिशु के बाद जो है ना जीवन और शरीर का संयोग, जीवन और शरीर के बाद शिशु का पूरा आकार, प्रकार, स्वरूप और उसके बाद शिशु काल में शिशु गर्भाशय से बाहर होने के उपरांत, वो कितना लंबा-चौड़ा, नस्ल, रंग होना है, उसका पूरा प्रमाणीकरण – ये कुल मिला करके शरीर तंत्र का मतलब बनता है।

शरीर रचना में जो कुछ भी तंत्र बने रहते हैं, वो मेधस तंत्र बने रहते हैं, मेधस तंत्र के आधार पर ही जीवन कार्य करता है, सारे संज्ञानशील प्रक्रियाओं को सम्पन्न करता है, ज्ञानवाही तंत्रों को तंत्रित करता है, संवेदनाएँ पूरा काम करते हैं, संज्ञानशीलता प्रमाणित करता है। इस ढंग से जीवन और शरीर का संयोग में ज्यादा से ज्यादा हमको प्रमाण मिलता है – संज्ञानशील कार्यकलापों में जीवन और शरीर का संयुक्त रूप होना प्रमाणित होता है। मुख्य बात यहाँ से है।

संज्ञानशीलता को पहचानने के बाद ये बहुत अच्छी ढंग से प्रमाणित हो जाता है। केवल संवेदनशीलता के विधि से इस बात को पहचानना बहुत कठिन है, क्योंकि वंशानुशंगी विधि से जीवों में भी संवेदनशीलताएँ व्यक्त हुई हैं। ये मनुष्य को भ्रम में डालता है। भ्रम में डालने के आधार पर जो घोड़ा, गधा, कुत्ता, बिल्ली में भी संवेदनाएँ होते हैं, तो मनुष्य में भी संवेदनाएँ होते हैं, ऐसा जोड़ लेते हैं। ऐसा जोड़ करके मनुष्य को जीव संज्ञा में हमको बताते आए हैं, जबकी जीव संज्ञा में मनुष्य नहीं होता है, ज्ञान संज्ञा में होता है। जब कभी हम ज्ञानावस्था की इकाई होने के कारण हम अपने कार्य-कलापों को संज्ञानशील विधि से संपन्न करना शुरू करते हैं, उसके तुरंत बाद ही जीवन और शरीर का संयुक्त कार्य-कलाप होने का जो प्रक्रिया है, वो अपने में प्रमाणित होना शुरू करता है। इसको अपन पूरा देखा जा सकता है।

प्रश्न : आपने शरीर रचना के संदर्भ में जो बात कही, गर्भ में लिंग का निर्धारण कब होता है? जीवावस्था का शिशु का शरीर रचना और मानव शरीर शिशु का शरीर रचना का गर्भ में क्या फर्क है?

उत्तर : अभी प्रश्न ये है – गर्भ में शिशु संरचना के पूर्व भाग में, माने आदि भाग में, भ्रूण नाम की एक अवस्था होता है। भ्रूण अवस्था तब तक हम मानते हैं, २७ दिन तक भ्रूणावस्था मानी गई। वो भ्रूण का पुष्टिकरण होने के पश्चात, भ्रूण और शिशु रचना की बीच की एक अवधि है, वो ५७ दिन तक बना रहता है। वो ५७ दिन के पहले, ५२ (52)

दिन के बाद, जो कुछ भी परिस्थितियाँ रहते हैं, उसमें लिंग निर्णय होने की अवधियाँ हैं। वो लिंग निर्णय यदि महिला शरीर बनना है, पुरुष शरीर बनना है, वो उन ४-५ दिन में निर्णय हो जाता है। एक बार वो अवधि पार हो जाता है, उसके बाद वो ही बना रहता है, पूरा का पूरा। उसी के आधार पर पाँच महीने के बाद, वो दाहिने तरफ, बाहिने तरफ सर रहने वाले बात है, उसका भी संकेत मिलता है। इस ढंग से जो हम लड़का पेट में है, या लड़की है, इस बात को साधारण रूप में ही पहचान सकते हैं। हर माँ बनने वाली महिलाएँ इसको पहचान सकते हैं। ये ऐसे बनी हुई है।

उस निर्णय के बाद, उस निर्णय को हम कैसे मानते हैं? इस ढंग से मानते हैं, उस अवधि में वांछित लिंग के लिए हम लोग दवाई प्रयोग करते हैं, ऐसा सर्वाधिक हम उपयोग करते हैं। इस आधार पर हम लोग इसको माने रहते हैं। ये कुल मिला करके मतलब है। इसके लिए और कोई बड़ी-भारी मशीन (machine) की ज़रूरत नहीं है, ना कोई बहुत बड़ी-भारी टेस्ट (test) की ज़रूरत है। ठीक है? ये बात ऐसा बना। ये तो हो गई एक मुद्दे की बात। इस ढंग से शिशु संरचना के पश्चात जो संपूर्ण वंशानुशंगी विधि से बच्चों को एक विकास होना चाहिए - बालिका मार्ग, युवावस्था, प्रोढ़ अवस्था इत्यादि अवस्थाएँ होना चाहिए, क्रम से होता हुआ आप हम को पता लगता ही है। ये तो हुई मनुष्य शरीर रचना और उसका पालन पोषण से होने वाली मनुष्य का आकार, प्रकार, नस्ल और रंग के साथ, वो हर जगह में, हर वंश में ये प्रमाणित होता ही रहता है, हर परंपरा में। है। ये हुई मनुष्य शरीर रचना के बारे में।

7. मानव शरीर गुण और नस्लें

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 3, time 54:04-1:04:34](#)

मनुष्य का गुण रचना, गुणों का प्रमाण। ये ऐसे मानी जाती है, शरीर के आधार पर गुणों का प्रकाशन होता है। ऐसा भौतिक शास्त्र कहते हैं क्योंकि रचना के आधार पर गुणों का बात है, ऐसा सोचते हैं। ये सर्वथा गलत है। सर्वथा गलत इस ढंग से है – कोई भी ऐसा नस्ल नहीं है जो कुछ करता हो, दूसरा नस्ल ना कर सकता हो। ऐसा कोई समझ नहीं है, ऐसा कोई कार्य नहीं है, ऐसा कोई उपलब्धि नहीं है, जो कि दूसरा नस्ल वाले नहीं कर पाते हों। ऐसा कोई काम आज तक आया नहीं। कोई जात वाले करते हों कोई काम, वो दूसरा जात वाले नहीं कर सकते हों – ऐसा कोई काम, धाम, समझ कुछ भी नहीं है। हर प्रकार के नस्ल वाले, रंग वाले, जात वाले, संप्रदाय वाले – जो एक व्यक्ति कुछ कर पाते हैं, समझ पाते हैं, पा लेते हैं, वो चीज़ को सभी रंग, नस्ल, जात, जात वाले पा सकते हैं। ये ऐसा हमने देखा है। इस आधार पर क्या हुआ? हमारा कुछ बातें, रंग और नस्ल होना पाया जाता है, ये तो बात सही है। किन्तु रंग और नस्ल अलग-अलग होने मात्र से, हम जो कुछ भी पाते हैं, ये वाले नहीं पायेगा, ऐसा कोई चीज़ को अलग नहीं किया जा सकता।

इसको यह भी देखा गया है कि दूध पीने वाला आदमी भी गाड़ी चलाता है और दारू पीने वाला भी चलाता है। उनके हाथों से भी गाड़ी चल जाती है, इनके हाथों से भी गाड़ी चल जाती है। उनके हाथों से भी बहुत सारे accident होते हैं, इनके हाथों से भी accident होते हैं। ये भी नहीं कि दूध पीने वालों के हाथ से कोई accident ही नहीं हुआ है – ये भी दावा नहीं किया जा सकता। इसलिए ये सभी बातें बहुत अच्छी ढंग से सोचने की काम है – शुद्ध बुद्धि से, कुल मिला करके। इस ढंग से क्या हुई? विशेष नाम की चीज़ कोई जात नहीं होती है, ना सम्प्रदाय होता है, ना रंग होता है, ना नस्ल होता है। इस ढंग की स्वरूप बनी हुई है अस्तित्व सहज विधि से। अब इसका क्या करना है पूछा? तो उसका उत्तर यही मिलता है – हर व्यक्ति, हर नस्ल वाले, रंग वाले, जात वाले – समझदार हो सकते हैं, ईमानदार हो सकते हैं, जिम्मेवार हो सकते हैं, भागीदार हो सकते हैं। और इसमें आप किसी को मना नहीं कर सकते, आप के पास कोई तंत्र ऐसा नहीं है। आप मना कर देंगे, ये होवे नहीं करेगा – ऐसा करने के लिए कुछ नहीं हुआ।

इस ढंग से क्या हुई, पहले से बनी हुई पुरोहितवाद से लेकर जो आरक्षणवाद कहते हैं या और कोई वाद कहते हैं, किसी को भी हम विशेष बनाने के लिए कोशिश करते हैं, वो सब अंततोगत्वा धरती की आदमी जात का छाती का पीपल ही होगा। ये पीपल बन के ही रहेगा, ये अंततोगत्वा आदमी को त्रस्त करके ही छोड़ेगा। क्या त्रस्त करेगा पूछा? मार काट, और कौन सा त्रस्त? लूटमार, जानमार, काटमार – ये ही त्रस्तगी का पहल है। इन पहलों में कोई ना कोई पहल से आदमी त्रस्त होगा ही। इसके पहले वैर-विरोध, गाली-गलौच – ये सब चीज़ें होते ही हैं। इसको अभी यहाँ तक लाये गये, तो भाषणों में भी बहुत सारे लोग, अच्छे-अच्छे लोग गाली दे करके अपने भाषण की हवीसों को पूरा करते हुए देखा गया। इस ढंग से आदमी जात का बहुरंगी, जो कार्यक्रम है, आदमी को कहाँ ले जाएगा, अभी कुछ कहा नहीं जा सकता। जैसा ये अनिश्चयता के साथ चलती हुई भद्रंगी परिस्थितियाँ हैं, ये कहीं ना कहीं दुखद घटना के स्थान पर ही ले जाएगा। ऐसा मेरा सोचना है। क्योंकि परिस्थितियाँ ऐसी बन रही हैं। ठीक है? उसका ये भी एक

लक्षण दिख रहा है, बहुत सारे कट्टरपंती विधि से, या बर्बरता²³ के ढंग से या फिर अतिवाद, नक्सलवाद, वो वाद, आतंकवाद वगैरह बात मानते हैं, तो इसके अनुसार भी, परस्परता में शांति पूर्वक जीने की जो कुछ भी कामनाएँ हैं, उसको काफी धूमिल करता हुआ हम देखते हैं। इन सभी चीजें मनुष्य को याद रखने की बात है। तो दुष्टता में भी सभी नस्ल, रंग, जात वाले शामिल हैं; शांति पूर्वक जीने में भी सभी जात, रंग, नस्ल वाले शामिल हैं; शासन करने में भी सभी रंग, नस्ल, जात वाले शामिल हैं; शासित होने में भी सभी रंग, नस्ल वाले शामिल हैं; और धर्म को मानने में भी सभी अपना-अपना धर्म को मानते आ रहे हैं। अब क्या हुआ? कुल मिलाकरके आदमी को अलग-अलग करने का दो ध्रुव अभी प्रभावशील है - राज्य और धर्म। हम अलग राज्य के हैं, हम अलग धर्म के हैं - ये बात को अलग-अलग करता है। ये ही दो कांटा है, आदमी को चैन से रहने नहीं देना है। क्योंकि धर्म विधि से भी, हमारा धर्म के अलावा दूसरा कोई प्रकार के धर्म वाला रहावे ना करे, ऐसा भी सोचने वाले अच्छे लोग हैं। इस धरती पर सोचते हैं, अपने ढंग से कुछ काम भी करते हैं, स्वयं संकट में फंसे रहते हैं, दूसरों को संकटग्रस्त करने की कोशिश करते हैं, ये सब हम देखते ही हैं।

उसके बाद आता है, दूसरे विधियों में जाने के बाद ये आता है - राज्य विधि से - हमारे राज्य में यही जात रहे, दूसरे जात ना रहे - ऐसा भी सोचने वाले होते हैं। इस ढंग से संकट को घटित करने के लिए बहुत सारे प्रयास चले गए। इसके बावजूद सर्वाधिक आदमी शांति प्रिय हैं, और जो सुख शांति से जीना चाहता है, और समृद्धि से जीना चाहता है, समाधान से जीना चाहता है, ये बात survey करने पर, कहीं भी सर्वेक्षण करेंगे मानव का, यही चीजें निकलती हैं। इसको हम कर सकते हैं, देख सकते हैं, निर्णय कर सकते हैं। ये बात ऐसी बनते है। तो अंत में कहाँ पहुँचे अपन? नस्ल रंग के आधार पर ना तो बर्बरता, हिंसा, डर, जान मारी, सेंध²⁴ मारी - इन सभी में कोई एक जात वालों को पहचाना नहीं गया, अनेक जात वालों को पहचाना गया।

दूसरा - राज गद्दी में बैठने के लिए इच्छुक एक जात वाला, एक रंग वाले की बात ना रह करके सभी रंग जात वाले गद्दी में बैठने की बात को भी पहचाना गया। उसी प्रकार पैसे के बारे में सभी रंग वाले, नस्ल वाले, जात वाले पैसे को प्राप्त किया हुआ देखा गया, और सभी गौरव संपन्न होने के लिए, जो बहुत सारे लोग पैर पड़ रहे हैं, ऐसे व्यक्तियों को सभी रंग वाले, नस्ल वाले, धर्म वाले, गद्दी वाले - सब को देख लिया गया, इस ढंग से सभी जात, धर्म वाले सभी कर्म कर सकते है, इसलिए हम मानव एक ही है, एक ही जात है। उसको हम इस विधि से भी अध्ययन कर सकते हैं। कुल मिला करके ये सब नज़ीरे आप हमारे सम्मुख आ चुका है, इसको अच्छे ढंग से हम ध्यान में लायें तो इससे पता लगता है, मानव जाति मूलतः एक ही है। रंग पर कोई जाति निर्णय नहीं होता है, रंग पर कोई reservation हो नहीं सकती और जाति पर नहीं हो सकती, नस्ल पर नहीं हो सकती, संप्रदाओं पर हो ही नहीं सकती, और केवल हो सकता है ये सभी आदमी जात एक।

आदमी जात एक है, ये बात को यदि हम पहचान पाते हैं, उसी के आधार पर आदमी का धर्म को भी पहचान सकते है। धर्म का मतलब? जो मानव धर्म के बारे में अभी याद दिलाये थे - 'सुख धर्म'। सुखी होने की आशय सब में

23 बर्बरता : बर्बर (वर्णाश्रम विहीन असभ्य मनुष्य) होने की अवस्था/भाव, क्रूरता, असभ्यता; vandalism

24 सेंध : चोर द्वारा चोरी के उद्देश्य से दीवार में किया गया छेद, नकाब

निहित है, सभी रंग वाले के पास, नस्ल वाले के पास, जात वाले के पास, सम्प्रदाय वाले के पास सुखी होने का आशय सब में समान है। इन सभी सुखी होने के विधि को हम पहचान सकते हैं, खोज सकते हैं और उसको लोकव्यापीकरण कर सकते हैं। उसी के आधार पर हम सभी सुखी होने की दिन का इंतजार कर सकते हैं। उसी क्रम में ये कार्यक्रम है। इसका मूल तत्व ही है – 'मानव जाति एक है, कर्म अनेक हैं'। पहला घोषणा यही है। मानव जाति एक होने का आधार पर हम मानव धर्म को पहचानते हैं। मानव धर्म सुख धर्म है, किसी जात-पात संप्रदाय का उसमें कोई रंगड़ा-झगड़ा होते ही नहीं है, सभी आदमी सुखी होने के क्रम में हम समझदारी पूर्वक सुखी हो सकते हैं, इस बात को प्रयत्न किया। समझदारी के आधार पर सुखी होना सभी जात-पात वालों के लिए सुलभ है, उसी के आशय में समझदारी को परिपूर्ण करने के लिए शुरूआत किए।

तो मानव मूलतः एक जात की है। गर्भाशय में नस्लों के आधार पर शरीर आता है, क्योंकि जीवन जो है ना मनुष्य में प्रधान वस्तु है। जीवन सुखी होने के आशय में काम करता है। शरीर जो है ना रंग, नस्लों को ले करके घूमता रहता है। इस विधि से हर मनुष्य सुखी होने के आशय में सनी हुई है। इस आधार पर हम अच्छे दिनों को देखने की काम कर सकते हैं।

अब क्या होना चाहिए? शिक्षा में मानवीय शिक्षा को पहचानने की जरूरत, राज्य में मानव संविधान को पहचानने की आवश्यकता, आचरण में मानवीयता पूर्ण आचरण को पहचानने की आवश्यकता, परिवार में हम समाधान समृद्धि से कैसा जीया जाए, इसको पहचानने की आवश्यकता। इतने ही तो कुल मिला करके काम बनता है। इस पर चलने पर बहुत सारे हमारा समस्याएं हल हो सकते हैं।

8. जीवन और शरीर का सम्बंध

प्रश्न - माँ का जीवन और बच्चे का जीवन का जो व्यवस्था होती है, उसके बारे में बताइये।

उत्तर - ये भी एक मुख्य बात है, एक अच्छे सूझ-बूझ के ही बात है कि पेट में शिशु का रचना काल में माँ का संस्कारों का क्या प्रभाव है वाला बात आती है। उसके लिए बहुत अच्छी बात ये है पाँच महीने के बाद जैसे ही जीवन शरीर को संचालित करना शुरू करता है, जैसे आप हम सुनते हैं, वैसे ही माँ के सारे सुनी हुई बातों को शिशु सुनता ही रहता है। क्या बात है। यही गर्भगत् संस्कार है। गर्भ में शिशु रहते समय में कोई जो संस्कार होता है, क्या होता है? माँ जो कुछ भी बोलती है, करती है, वो शिशु के अवगहन में आता ही रहता है। उसी प्रकार माँ जो कुछ भी सुनती रहती है, वो शिशु भी सुनता रहता है, ये मुख्य बात है। इसको आप हम परीक्षण करने के लिए कोई यंत्र-मंत्र होगा तो कर लें किंतु यही होता है गर्भ में रहते हुए शिशु का संस्कार। इससे क्या हुआ? माँ का जो देह है, यही है, गर्भ में गर्भाशय में जब तक शिशु है, तब तक शिशु में क्या संस्कार डालना है, इसको समझे रहें। इसको समझे रहना होगा तो समझदार ही होना पड़ेगा। दूसरा कोई विधि से होने वाला नहीं है।

प्रश्न : दोनों के जीवन पुंज आपस में किस तरह व्यवस्थित हैं, जो माँ का जीवन पुंज, बच्चे के जीवन पुंज से interact नहीं करता?

उत्तर : माँ का जीवन मेधस तंत्र में, ज्ञानवाही तंत्रों को तंत्रित करने में कोई अड़चन नहीं बनता है, क्योंकि जो जीवन गर्भ तंत्र में ही सीमित रहता है, शिशु का शरीर, उतने में ही दूसरा जीवन शिशु को संचालित करता रहता है। ये माँ के मेधस तंत्र से कोई संबंध नहीं रखता है। इस ढंग से ये दोनों का निश्चित कार्य प्रणाली बन जाती है। इन निश्चित कार्य प्रणाली में ना तो शिशु को माँ के जीवन अपने मेधस तंत्र में कार्य करने में कोई परेशानियाँ या अड़चन नहीं पैदा करता है, वैसे ही शिशु का मेधस तंत्र में जीवन अपने कार्य करने में माँ का जीवन कोई व्यवधान पैदा नहीं करता है। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हो जाते हैं, सुखद् सहवास होता है, फलस्वरूप शिशु, श्रेष्ठतम् शरीर रचना के रूप में धरती को मिलता है और मानव परंपरा को मिलता है, माँ के गोद में होता है। इसको हर दिन हम देखते ही हैं। इस ढंग से बनता है, इसमें कोई किसी का हस्तक्षेप नहीं है। ये हस्तक्षेप वाद से कोई प्रगति होती नहीं संसार में। हस्तक्षेप केवल मनुष्यों को छोड़ करके दूसरे कोई करते भी नहीं प्राकृतिक रूप में, मनुष्य ही हस्तक्षेप करता है।

प्रश्न : जीवन और शरीर के बीच में मेधस द्वारा जो आदन-प्रदान होता है सूचनाओं का, उसको थोड़ा स्पष्ट करें।

उत्तर : संवेदनशीलता के रूप में जीते तक हम भ्रमित होने की संभावना बनी ही है, क्योंकि जीवों के सदृश्य ही मनुष्य भी संवेदनाओं का गणना करना शुरू कर देता है। संज्ञानशीलता पूर्वक जब जीना शुरू करते हैं, हमको संवेदनशीलता का समीक्षा हो जाता है। तब तक ये होने वाला नहीं है, संवेदनशीलता से संवेदनशीलता का कोई मूल्यांकन नहीं होता, ना ही उसका समीक्षा ही हो सकती है। संज्ञानशीलता पूर्वक जीना बन जाता है तब संवेदना का समीक्षा हो जाती है। उसी के आधार पर आपको पहले इस बात को स्पष्ट किया है, संज्ञानशीलता पूर्वक जीने के क्रम में संवेदनाएँ नियंत्रित रहते हैं। नियंत्रित रहने का मतलब ही यही है की व्यवस्था के रूप में व्यवस्था में संयत रहने से ही।

प्रश्न: प्रश्न यह है कि जीवन और शरीर इन दोनों के बीच संबंध किस तरह से स्थापित होता है, जीवन किस ढंग से कार्य करता है मेधस में?

उत्तर: मेधस तंत्र एक बहुत बढ़िया, एक महत्वपूर्ण रचना है। उससे एक प्रकार से सूक्ष्म तंत्र कुछ भी नहीं है शरीर में, सूक्ष्मतम तंत्र के रूप में बनी हुई है। मेधस तंत्र को देखने पर ऐसा लगता है जो मलाई जमा रहता है, उसको पलटा के देखोगे तो कैसा लगता है, वैसा लगता है। और उसमें अनंत कोशाएँ बनी रहती हैं। किस स्वरूप में? तन्तु²⁵ के रूप में। अनेक माने असंख्य तंत्र बने रहते हैं। वो एक रासायनिक जल में डूबता तैरता रहता है पूरा, पूरा float करता है उसमें दोनो तरफ मूँछ जैसी तन्तु निकला रहता है। जब कभी जीवन मेधस तंत्र पर तंत्रित करना चाहता है, वो रासायनिक जल पर अपने तरंग को पैदा करता है, अपने उद्देश्य के तरंग को पैदा करता है। वो जो मूँछ जैसा निकली हुई जो तन्तुएँ होते हैं, उस संकेत को ग्रहण करते हैं। इसमें आश्चर्यजनक बात यही रही, एक स्वाभाविक क्रिया है, चाहे आश्चर्यजनक मान लिया जाए। कम से कम दो मेधस सूत्र जो हैं वो अपने संकेत को ग्रहण करते हैं, कम से कम दो। एक संकेत को कम से कम दो ग्रहण करते हैं, उसके तुरंत बाद उससे संबंधित तन्तु के द्वारा संवेदनाएँ अपने आप से स्पष्ट होने लगती हैं।

मन में सर्वप्रथम संवेदना का स्वीकृति संवेदनशील विधि से तंत्रित करना एक प्रणाली और उसके बाद संज्ञानशील विधि से भी उसी तंत्र से, उसी प्रकार से, संप्रेषित करने की विधि। जीवन जब कभी भी सम्प्रेषित करता है, संवेदनशील कार्यकलाप के लिए, अथवा संज्ञानशील कार्यकलाप के लिए, मेधस तंत्र को तंत्रित करता है, वो मेधस तंत्र में डूबी हुई जो रस द्रव्य है, उसी के ऊपर अपने तंत्र को व्यक्त करता है। उसके बाद पुनः वापस जा करके उसी जल में ये जो मेधस के सूत्र जो प्रभावित हुए थे, वो ही प्रभावशील जो तंत्र हैं, वो जल में वो तरंग को पुनः पैदा करते हैं। उसको जीवन स्वीकार लेता है, पढ़ लेता है। इस ढंग से जीवन और मेधस तंत्र की संबंध स्थापित हुआ रहता है। एक विधि ये हुआ।

उसके अलावा एक और महत्वपूर्ण काम रहता है, जीवन और शरीर के साथ, पूरा शरीर को जीवन्त बनाए रखता है। पहले जीवन्त बनाए रखना और मेधस तंत्र पर ज्ञानवाही क्रिया कलापों को संपादित करना, ये दो काम। शरीर को जीवन्त बनाए रखने का जो काम है, [ये जीवन एक परमाणु है, ये बात पहले स्पष्ट हो चुकी है।] ये परमाणु प्राणकोशाओं में जो ताना-बाना बनी हुई है, जैसा चमड़ा बनी है, उसके अन्दर जो मांस बनी हुई है, मेद बनी हुई है, स्नायु बनी है, खून बनी हुई है, रस बनी हुई है, मज्जा बनी हुई है, ये सभी चीज़ के ताना-बाना जो बनी हुई है, इसके भीतर जो छेद बनी है, वो छेद के अन्दर से पूरा शरीर में संचार करता रहता है, जीवन। पूरा शरीर में संचार करने के फलस्वरूप ही हर भाग जीवन्त रहने के जैसा हमको लगता है।

क्या बात है, क्या बात है! जीवन्त बनाए रखने की विधि ये बनता है, संकेतो को प्रसारित करने की विधि ये रहता है। उसका क्या प्रमाण है? आदमी सोया रहता है, जीवन्त रहता है। इसका net program यही है। सोए रहते समय पर भी शरीर जीवित रहता है। इसको हर व्यक्ति अनुभव कर सकता है, जीवन्त रहने के लिए शरीर के संरचना के जो छलनी है, वो छलनी के अन्दर भ्रमण करना प्रधान वस्तु है, और ज्ञानवाही कार्यक्रम के लिए मेधस तंत्र में अपने

²⁵ तंतु : सूत, तागा

संकेतों को प्रसारित करना और ग्रहण करना प्रधान कार्य है। इस ढंग से जीवन के दो कार्य हैं – शरीर को जीवन्त रखना और ज्ञानवाही तंत्र को तंत्रित करना – ये दो कार्यक्रम हैं। जीवन ये दोनों कार्य को संपन्न किया रहता है, अच्छे स्वस्थ शरीर में और इसको सब व्यक्तियों में आप और हम निरीक्षण कर सकते हैं, परीक्षण कर सकते हैं, उस से तृप्त भी हो सकते हैं। इसका शुद्ध फल मिलता ही रहता है। ये कार्यक्रम से अपने को अच्छे ढंग से समझ में आता है।

प्रश्न : मेधस जो floating हैं, और ऊपर का जो skull है, इन दोनों के बीच में खाली स्थान रहता ही होगा ?

उत्तर : इस तंत्र के पूरा रचना को ऐसे देखा जा सकता है, एक तो बताया मलाई जैसी लगती है पूरा मेधस तंत्र, तंत्र का मतलब इस प्रकार से बना हुआ है, जो रसों के संकेत को ग्रहण कर सकता है, इतना सूक्ष्म तंत्र। उसके बाद उसमें जो एक थक्का जमी हुई है, वो उसका पूरा एक तरफ की मूँछ ऊपर की झिल्ली से जुड़ी रहती है। मेधस तंत्र के ऊपर एक झिल्ली होता है, नीचे एक झिल्ली होता है। ऊपर के भाग की जो झिल्ली है, वो झिल्ली से ये सारे मूँछ छुए रहते हैं। नीचे वाले मूँछ पानी में तैरता रहता है। जब कभी संकेत आता है, कम से कम दो मेधस सूत्र अपने कार्य को संपादित करता है। वो ऊपर की झिल्ली से जुड़ी हुई जो तंत्र है, उसको संकेत को प्रसारित करता है। उसके बाद पुनः एक जल का आवरण है, second floor। उसके बाद एक और झिल्ली है, दो झिल्ली के बाद skull। ये skull और झिल्ली के बीच में सामान्य space रहता है।

प्रश्न : सामान्य space का मतलब ?

उत्तर : सामान्य space माने उस से जुड़ा नहीं रहता है, skull से। खाली स्थान सा रहता है, उस खाली स्थान में cough fibre दौड़ता रहता है, लोचदार बनाए रखने के लिए ये दौड़ता रहता है। इस ढंग से इसकी रचना, जिसको आप नाक में से निकालते हो, कई-कई बार। तो सबकी नाक से निकलती है। ये बना रहता है। खोपड़ी में जो हड्डी की रचना है, उसके नीचे cough, उसके नीचे एक झिल्ली, उसके नीचे एक रस का, एक बहुत अच्छी रासायन जल का व्यवस्था, उसके नीचे और एक झिल्ली, उसके नीचे ये मेधस तन्त्र, ऐसा बनी हुई है।

प्रश्न : मेधस से प्राण, साँस, हृदय, शरीर और शरीर से कार्य व्यवहार, इस पूरी chain को थोड़ा विस्तार पूर्वक समझाइये ?

उत्तर : इसके बारे में जो अभी आपने बोला, मेधस तंत्र से साँस-वाँस की बात, माने ये क्रियावाही कार्य है – साँस लेना, दिल धड़कना, खून बहना – ये क्रियावाही कार्य है। ये कार्य के लिए मूल तत्व है हृदय। हृदय तंत्र से खून संचालित होता है। खून संचालित होने के आधार पर ही फेफड़े की क्रिया स्पंदनशीलता बनता है। फेफड़े के क्रियाकलाप से हम साँस लेना, साँस छोड़ना बनता है।

प्रश्न : हृदय और मेधस कैसे जुड़े हुए हैं ?

उत्तर : हृदय का मतलब है, खून को सब जगह में पहुँचाना। पहुँचाने के बाद वो जितना भी गंदा होकर वापस आता है, वो फेफड़े में शुद्ध होना, पुनः हृदय में पहुँचना। ये क्रियावाही कार्य है, इसमें मेधस को कुछ नहीं करना है, ज्ञान तंत्र को कुछ नहीं करना, जीवन्त रखना पर्याप्त है। जीवन्त रहने की क्रिया करता ही रहता है। इतने में ये संपादित हो जाता है। ज्ञान तंत्र से उसको कहो 'खून बहाओ, खून बंद हो जाओ' ये कहना नहीं है।

प्रश्न : आवेशित होने पर हृदय की गति कम ज्यादा होती है ?

उत्तर : वो तो स्वाभाविक है, आवेशित होने की बात दूसरी हो गई। आवेशित होने के लिए हम को कोई ना कोई ज्ञानवाही तंत्र को बहुत ज्यादा उत्तेजित करना होता है। वो जीवन करता है, क्योंकि जीवन शक्ति अक्षय है, वो अपना गति से जहाँ कहीं भी तन्त्रित किया, अपने से भड़भड़ाना स्वाभाविक है। भड़भड़ाया तो साँस लम्बी हो गई, गर्म हो गई और फिर बेहोश होने लग गए, चक्कर आने लगी। ये सब तो होता ही है, उससे ज्यादा हो गया तो blood pressure बढ़ गई, उससे ज्यादा हो गया तो हृदय अवरोध हो गई। खतम हो गई बात।

अधिक गुस्सा होना, आवेश ही तो हुआ। आवेश होने से आवेश के आधार पर जितने भी ज्ञानवाही तंत्र तन्त्रित होता है, उसके फलस्वरूप में हृदय गति, फेफड़े की गति सब बढ़ जाती है। बढ़ जाने पर वो किसी अवधि से अधिक होने पर मर जाता है। शरीर तो जीवन के गति के अनुसार चल नहीं सकती है। मनोगति से शरीर चलेगा नहीं, आवेशित गति को सहने की, माने जीवन्त रहने की, कुछ अवधि होती है। उतने तक आवेश को सहता रहता है, उससे ज्यादा होने से स्वाभाविक है, कोई ना कोई failure होता ही है।

प्रश्न : जीवन का जो आवेश है, वो मेधस के माध्यम से ही तो transfer होता होगा ?

उत्तर : हाँ ऐसे ही होता है। वो मेधस तंत्र के द्वारा ज्ञानवाही तंत्र में जब तन्त्रित हो पाता है, तभी ये हृदय तंत्र आवेशित होगी, फेफड़े तंत्र आवेशित होगी, दो तंत्र आवेशित होगी।

प्रश्न : ज्ञानवाही तंत्र किस तरह से कार्य करता है, इसका जाल कैसा है ?

उत्तर : संवेदनाशीलताओं को व्यक्त करने के लिए। कोई ना कोई संवेदनाओं के विरोध में क्रोध आता है, पक्ष में आवेश आता है। ये दोनों अतिरिक्त होने की आवश्यकता है, पक्ष में या विरोध में, किसी ना किसी संवेदना की। आप अपने में देख लो। ये अपने आप में संवेदनाओं के यदि विरोध ना हो, या अति प्रलोभन ना हो, आवेशित हो जाए, ऐसा कोई चीज़ आप नहीं पाओगे। अति विरोध, अति सम्मोहन – दो स्थिति में ही मनुष्य आवेशित होता है, इन आवेश के फलस्वरूप हृदय तंत्र परेशान होता है और फेफड़ा तंत्र परेशान होता है, ज्यादा से ज्यादा।

प्रश्न: ज्ञानवाही तंत्र के माध्यम से ?

उत्तर : ज्ञानवाही तंत्र के द्वारा आवेश को show करेगा ही। क्रियावाही तंत्र के द्वारा रोग, रोगों को प्रस्तुत करता है। आवेश को प्रस्तुत करता है, ज्ञानवाही तंत्रों के द्वारा।

प्रश्न : सहज गति में कैसा होता है ?

उत्तर : सहज गति में संज्ञानशीलता में संवेदनशीलताएँ नियंत्रित रहते हैं। मानव का सहज गति यही है, माने प्रलोभन से मुक्त, या विरोध से मुक्त स्थिति में। हम संज्ञानशीलता पूर्वक जीने पर संवेदनाएँ नियंत्रित रहते हैं। इसी में मनुष्य स्वस्थ रहता है।

प्रश्न : मेधस से contact लिए क्या मन जिम्मेदार है ?

उत्तर : सारे बात के लिए जीवन जिम्मेदार है। जीवन मन के द्वारा मेधस को संचालित करता है, ऐसा वाक्य बनता है।

प्रश्न : ज्ञानवाही तंत्र क्या स्नायुतंत्र की तरह ही काम करता है ?

उत्तर : हाँ हाँ, पक्का पक्का

प्रश्न : science से ये पता है कि स्नायु कैसे पूरे शरीर में जाल की तरह फैला हुआ है। ज्ञानवाही तंत्र का जाल किस तरह फैला हुआ है ?

उत्तर : सभी जगह में होता है ज्ञानवाही तंत्र क्रियावाही तंत्र, एक तो ये समझ लो। जो क्रियाओं को संचालित करने के लिए तंत्रणा है, सोते समय भी होता है, बेहोश में भी होता है। उसके बाद जब कभी हम संवेदना और संज्ञानशीलता को प्रमाणित करते हैं, उस समय में ज्ञानवाही तंत्र काम किए रहते हैं। संवेदनाओं को जब कभी भी आपको प्रमाणित करना होता है, ज्ञानवाही तंत्र के द्वारा ही होता है। ये दोनों प्रकार की तंत्र जो पूरा शरीर में फैली हुई होती है। इसको ही हमारे medical science में sensory और motor कहते हैं।

प्रश्न : ज्ञानवाही तंत्र और क्रियावाही तंत्र का सम्बन्ध कहाँ पर है ?

उत्तर : मेधस में इसका सम्बन्ध है। संयोजन, ज्ञानवाहि और क्रियावाहि तंत्र का संयोजन मेधस में ही है।

प्रश्न : क्रियावाही तंत्र को तो जीवन जीवंत रखता है और क्रियावाही तंत्र चलता रहता है ना बाबाजी, तो उसका तो मेधस से कोई वो नहीं होना चाहिए ---

उत्तर : बिना मेधस के चलना चाहिए क्या ? ये रचना अपने में सम्पूर्ण है। इस सम्पूर्णता के अंगभूत एक-एक क्रियाएँ होती हैं। ज्ञानवाही तंत्र के द्वारा क्रियावाही तंत्र को आवेशित करना, इसका नाम है आवेश। जीवन पहले से आवेशित रहने से मेधस के द्वारा आवेश को प्रसारित कर देता है, फलस्वरूप ज्ञानवाही तंत्र क्रियाओं को आवेशित कर देता है, इसीलिए सम्बन्ध होना प्रमाणित होता है। हर आवेश में क्रियाओं को आवेशित करना है। किसके द्वारा ? ज्ञानवाहि तंत्र के द्वारा, काहे के लिए ? किसी संवेदनाओं को विरोध करने के लिए, किसी संवेदनाओं को सम्पादित करने के लिए।

प्रश्न : प्राणवायु के सम्बन्ध में, मेढास में भी प्राणवायु है तो जीवन प्राण वायु का मेधस पर परस्पर प्रभाव, प्राणवायु का रूप में क्या स्वरूप है ?

उत्तर : प्राणवायु का मतलब ये होता है, जो अपने फेफड़े में जा करके सम्पूर्ण प्राणकोशाओं के लिए जो वायु की जरूरत है, उसका नाम है प्राणवायु। सम्पूर्ण कोशाएँ जो श्वास प्रश्वास करते रहते हैं, हर कोशाएँ जो साँस लेने के लिए जो हवा चाहिए, उसका नाम है प्राणवायु। उस प्राणवायु के अलावा और कुछ भी हमारा नाक से, मुँह से जाता है, उसको फेफड़े में छान देता है। छान करके जितना प्राणकोशाओं की जरूरत की हवा है, उसको भेज देता है। भेज करके वो प्राणकोशाएँ हवा को सेवन करते हैं, स्वस्थ रहते हैं, वो हवा ना मिलने से मर जाते हैं। इतनी ही बात है। हवा के बिना प्राणकोशाएँ रह नहीं सकती। उनको जिस प्रकार की वायु चाहिए, वो मिलने का जो प्रणाली है, उसका नाम प्राणतंत्र है। वो प्राणतंत्र फेफड़े से संबंधित हैं। फेफड़े में ही उसके अतिरिक्त बाकी चीज़ों को अलग करता है।

अलग करने के बाद ये प्राणवायु सभी कोशाओं के सुगम हो जाता है, वायु संचार उसको कहते हैं, शरीर में – प्राणवायु संचार विधि। और उसके बाद प्राणकोशाएँ जो हवा को निकालते हैं, वो सब निकल करके बाहर आते हैं, और जो हम खाएँ रहते हैं, उसमें से जो उपयोगी वस्तुएँ हैं शरीर में लगता है, और उससे जो अनुपयोगी वस्तु रहती है, उसे अपान वायु तैयार होता है। प्राण कोशाओं से बाहर आया हुआ और हमारा खाया हुआ तत्वों से अपान वायु तैयार होता है। इस ढंग से प्राण वायु, अपान वायु की पहचान हो पाता है। ये सर्व मानव को विदित होगा। इसको ज्ञान कराने में कोई देर लगेगा ऐसा हमारा सोचना नहीं है।

प्रश्न : जीवन और मेधास के बीच में भी प्राणवायु है ?

उत्तर: मेधास तंत्र में जो प्राणकोशाएँ हैं, उनको भी प्राणवायु चाहिए। वो फेफड़े से ही संचालित है। ये अभी बताया, पुनः पुनः वही पहुँचते हैं। मन को लगाना पड़ता है। यदि मन को लगाया नहीं तो उल्टा सीधा प्रश्न करोगे ना। सिलसिले से करिए, एक ईंटे के बाद एक ईंटा रखा ही हुआ है। व्यवस्था जो है, ना कहीं भी कटा नहीं है, खिड़की नहीं है। वैज्ञानिक बुद्धि ही खिड़की बनाता है, इसीलिए हवा निकल जाता है!

प्रश्न : प्रचलित वैज्ञानिक अवधारणा कहाँ पर fail हो रही है? शरीर के बारे में मानव के बारे में उसमें कहाँ-कहाँ कमजोरी है? जैसे DNA के बारे में।

उत्तर : ये बहुत ही विशाल भी, जटिल भी, ये प्रश्न है। यद्यपि इसके बारे में मेरे निष्कर्ष को मैं आपको बताता हूँ, मैं जो निष्कर्ष निकाला हूँ।

प्रश्न: हम जानना चाहते हैं की जो वैज्ञानिक अवधारणा है शरीर के बारे में, मानव के बारे में, उसमें कहाँ कमजोरी है ? जैसे की कहते हैं की डीएनए को लेकर बहुत हंगामा मचा हुआ है की डीएनए के द्वारा ही मानव के सारे के सारे गुण नियंत्रित होते हैं ?

उत्तर: जो आप सोचते हो उसमें हमारा कोई हस्तक्षेप नहीं है। किन्तु ऐसा होता नहीं, प्रमाणित नहीं होता, इतना ही सम्मान जनक उत्तर है उसका, पहला बात। ये कहाँ से ऐसे हो गया ?

विज्ञान विधि में जितने भी कंकड़, पत्थर अभी तक मिला है, उसमें जीवन को पहचाना नहीं गया। ना पहचान सकते हो, जिस विधि से चल रहे हो, जीवन को आप पहचान ही नहीं सकते। क्योंकि आपको controlled effort

चाहिए। controlled effort में जीवन मिलना चाहिए। वो मिलेगा नहीं, controlled effort जो तैयार किया है, वो जीवन ही किया है। सबसे बड़ी भारी पंचायती यही है। सारा controlled effort को कौन बनाया ? जीवन ही बनाया है। जीवन अपने से छोटे चीज़ को ही बनाता है। छोटे चीज़ में बड़े चीज़ समाता नहीं, छोटे सा काम। तर्क संगत विधि से यदि हम satisfy होना चाहते हैं, वो ये पूरा करता है। नहीं होना चाहते तो उसके लिए आरती रखी हुई है अपने पास। विज्ञान संसार जीवन को पहचान नहीं पाया – नम्बर एक। प्राणकोशाओं का क्रिया को वो जीवन समझता है। इसलिए उसी में मानव का सभी गुणों को व्याख्यायित करना चाहते हैं। ये बहुत समय से हो चुकी, 200 वर्ष बीत चुकी, अभी तक व्याख्यायित नहीं हुआ, ये करोड़ों वर्ष प्रयत्न करे प्राणकोशाओं में हम मानव का गुणों को व्याख्यित करेंगे, ये होने वाला नहीं है। जीवन को समझने के बाद ही मानव गुणों को पहचाना जा सकता है। इसके पहले होगा नहीं। इस ढंग से हम कहीं ना कहीं गिर पड़े हैं। और इसको कैसा जोड़ेंगे – ये RNA में आता नहीं है, DNA में आता नहीं है जीवन। अब क्या कर डालेंगे, बताओ ? इस ढंग से तर्क संगत विधि से इसका जवाब बनता है।

मैंने जीवन को देखा है, प्राणकोशाओं को भी देखा है। अणुओं को भी देखा है, परमाणु को भी देखा है, परमाणु में निहित अंशों को भी देखा है। उसके बाद क्या बचता है ? इस सत्यता को हम स्वीकारते हैं। आगे कुछ अनुसंधान करने के लिए बनता है कार्यक्रम। उसमें ये बहुत जरूरी है जीवन परमाणु को पहचानना। जीवन होने का जो तरीका है और स्वरूप है, उसका कार्यप्रणाली है, लक्ष्य है, इन सभी चीज़ों को पहचानने की जरूरत है। उसके अलावा विज्ञान पूर्ति हो नहीं सकती, ना ज्ञान पूर्ति हो सकती। ज्ञान विधि में भी हम मनुष्य को पहचानने से चूक गए, वो भी केवल जीवन को पहचाना नहीं है। जीवन के स्थान पर और कुछ कल्पना देना चाहा वो प्रमाणित नहीं हुआ। अभी विज्ञान भी जीवन के बदले में DNA, RNA परिकल्पना देना चाहते हैं। ये होगा नहीं। वो आत्मा परमात्मा को देने गए वो हुआ नहीं।

9. मध्यस्थ मार्ग और दर्शन

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 2, time 34:18-37:12](#)

हम जितने भी मेधावियाँ यहाँ उपस्थित हैं, इनके बीच में, मध्यस्थ दर्शन के सम्बन्ध में, जो कुछ भी बातें हुई और शंकाएँ इस प्रकार से उद्भूत हुईं, ये विगत में बुद्ध दर्शन को ये मध्यम मार्ग नाम दिया है। ये मध्यस्थ दर्शन से ऐसा ध्वनित होता है, ये मध्यम मार्ग का तो काम नहीं है? ये मूल शंका ऐसा बना। उसके साथ ये बात स्पष्ट भी किए कि उस तत्काल में जो एक दक्षिणाचार²⁶, वामाचार²⁷ थी, इन दोनों के बीच में एक आचार संहिता को बुद्ध ने प्रणय किया, उसको मध्यम मार्ग नाम दिया। यद्यपि इसका आधार भिन्न है, इसके बावजूद भी आपका ऐसा पूछना है इसका आगे और भी जो दर्शन में प्रतिपादित किए हैं, उन मुद्दे पर ध्यान आकर्षण कराना चाहते हैं। वो यह है – आगे चल करके दर्शन में ये प्रतिपादन हुई है – मध्यस्थ क्रिया, मध्यस्थ दर्शन, मध्यस्थ जीवन, मध्यस्थ बल, मध्यस्थ शक्ति – क्यों प्रतिपादित किया है।

मध्यस्थ जीवन को इस आधार पर प्रतिपादित किया है – सम विषम मध्यस्थ शक्तियाँ होते हैं। मध्यस्थ शक्ति जब जागृत होता है – सम विषम दोनो मध्यस्थ के अनुरूप कार्य करते रहते हैं – इस बात को प्रतिपादित किया है। मध्यस्थ बल का मतलब ये है अनुभव-मूलक विधि से हम व्यक्त होने से मतलब रहा। मध्यस्थ जीवन का मतलब है अस्तित्व जैसी परम सत्य में अनुभूत होकर प्रमाणित करने की क्रिया-कलाप को मध्यस्थ जीवन के नाम से नाम दिया है। ये बात यदि गले से उतरता है, मैं समझता हूँ ये मध्यस्थ दर्शन का सार्थकता आपको भी समझ में आएगी, हमें भी समझ में आएगी। इस बात के लिए धन्यवाद है आप लोगों को जो आप लोग सोचने के लिए अभी तत्पर हैं, आप लोगों में ये गहराई विधि से सोचने के बारे में जैसा अभी व्यक्त किए हैं, इसको बनाये रखेंगे, ऐसा मैं विश्वास करूँगा, हम बारम्बार आपको धन्यवाद देते रहूँ। जय हो, मंगल हो, कल्याण हो!

²⁶ दक्षिणाचार : भद्र आचरण, सदाचार, शुद्ध और उत्तम आचरण

²⁷ वामाचार : तांत्रिक मत का एक भेद, विशेष प्रकार की पूजा पद्धति

10. आहार विहार

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 4, time 0:22-13:42](#)

एक सूत्र हमने लिखा है – आहार, विहार, व्यवहार बराबर व्यक्तित्व। आहार विहार बराबर स्वास्थ्य। आहार, विहार, व्यवहार बराबर व्यक्तित्व। व्यक्तित्व के बारे में लिखा है, ऐसा एक सूत्र लिखा है।

इस सूत्र के अनुसार स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए मानव अपने आहार को पहचानने की आवश्यकता है। ये बात आती है। मानव अभी तक अपने आहार को पहचाना या नहीं पहचाना – पहले उसी को सोच लो। इस बारे में हमारा उद्घोष ये है – मानव अपने मानवीय आहार को पहचाना नहीं है।

कैसा भाई? मानव शाकाहार भी करता है, मांसाहार भी करता है। बात सही है? कुत्ता क्या करता है? (दूध रोटी मांस दोनों खाता है। दोनों करता है बाबा।) आदमी क्या करता है? इन दोनों में क्या अंतर है?

आपको प्रकृति सहज विधि से पूछ रहा हूँ, इसमें हमारा कोई आरोप-प्रत्यारोप की कोई आशंका नहीं है। ना किसी के पक्षधर हूँ प्रति-पक्षधर हों, ऐसा भी नहीं है। मैं इस बात की घोषणा किया – मानव अपने आहार विधि को पहचाना नहीं है। ये बात सच्चाई है। पहचानने की ज़रूरत है कि नहीं है, बाद में सोच लीजिये। उसमें एक उदाहरण प्रस्तुत किया – कुत्ता और मनुष्य। कुत्ता कैसा आहार करता है और मनुष्य कैसा आहार करता है? ठीक है? बात पूरा हो गया? यहाँ सोचने की बनती है – आहार विहार को हम स्वयं यदि नहीं समझेंगे, कुत्ता भी संवेदनशीलता में घूमता ही है और मनुष्य भी संवेदनशीलता में ही घूमता है। उसमें भी कोई अंतर नहीं हुआ। आहार में भी अंतर नहीं हुआ। यदि संवेदनशील विधि को ही हम विहार मानें, कुत्ता के विहार में और मनुष्य के विहार में क्या अंतर होगा? सोचने की मुद्दा है, हमारा कोई इसमें recommendation नहीं है। तुलनात्मक विधि से आपको ये दो comparison के लिए आपके सम्मुख प्रस्तुत किया। ठीक है? संवेदनशील विधि की सीमा में कुत्ते, बिल्ली से और मनुष्य के संवेदनशील विधि से कोई अंतर दिखता नहीं है।

ठीक है? आहार में अंतर दिखता नहीं है। तब क्या किया जाए? मनुष्य अपना आहार पद्धति को पहचाना माना जाए, नहीं पहचाना माना जाए। इसी आहार विधि को भाँति-भाँति विधि से व्यापार में आदमी लगाता है, कुत्ता नहीं लगाता है – यहाँ से deviation हुआ। व्यापार कार्य में भाँति-भाँति विधि से लगाता है आदमी – किस बात को? डब्बा में बंद करके, जंका- मंका करके, इसको व्यापार में लगाता है। किस बात को? आहार को। कुत्ता वो धंधा नहीं करता है। मनुष्य और कुत्ते की अंतर यहाँ से शुरू हुआ। ये बात सही है या गलत है? तो अब क्या किया जाए? अब इस स्थिति में हम क्या घोषणा करें, मनुष्य अपने आहार पद्धति को पहचाना माना जाए, नहीं पहचाना माना जाए? इस गवाही के साथ हमारा निष्कर्ष ये है, हम मानव मानवीय आहार पद्धति को अभी तक ना पहचान पाए हैं, ना ही उसको ठीक से, निष्ठा से हम ले के चलने में ही समर्थ हुए हैं। हम कितने वर्ष पीछे हैं, कितने वर्ष तक हम संभल पाएँगे, आप सोच लीजिये। इस बीच में धरती ही बीमार हो गई, ज़ंझटीय पैदा हो गई। अब क्या करोगे? धरती बीमार नहीं होता, अपन इंतज़ार करते – हाँ भाई, आगे युग में होगा, उसके आगे युग में होगा, उसके आगे युग में होगा।

अब धरती ही बीमार हो गया तो हम कहाँ तक इंतज़ार करें, क्या कर डालें! ये भी एक पुराण पंचांग निकलता है। ठीक हो गई? यदि ये झूठा है तो इसको माना न जाए। सच्चा है तो ये सोचने की मुद्रा है। ठीक है? आहार, विहार को हमको पहचानना ही होगा। उसके पहले हम व्यवस्था में जीना बनवे नहीं करेगा। आदमी व्यवस्था में तो जीएगा नहीं। आहार, विहार में ही विचलित हो गया। उसके बाद कौन सा व्यवस्था में जीएगा भाई? जीवों से भिन्न रूप में जीने के लिए, आहार विहार एक बहुत ही आवश्यक वस्तु है, यदि हम निश्चय करते हैं, निर्णय करते हैं, उसका पालन करना ही पड़ेगा ना? नहीं पालन करने से हो जाता है क्या, निर्णय करने मात्र से होता है क्या? पालन करने से निर्णय किया हुआ का गवाही मिलती है। बात सही है? यदि ये सच्चाई है तब हमको क्या करना चाहिए, ये सोचिये?

इस क्रम में हमारा जो सूझ-बूझ है, हमारा अनुभव है, मेरा स्वयं का अभ्यास है, वो यह कहता है – मनुष्य का शरीर रचना शाकाहारी शरीर के रूप में बनी हुई है number 1, number 2 – मनुष्य की अंतर रचना (शरीर में अंतर रचना होता है) और बाहर में जो है ना – नाखून है, दांत है – ये भी बना रहता है। मांसाहारी जीव जानवरों का दांत और नाखून अलग प्रकार से बनी रहती है और जो शाकाहारी जीव-जानवरों का नाखून और दांत अलग तरीके से बना रहता है। दो हुआ। तीसरा मुद्दा ये है – शाकाहारी जानवर होंठ से पानी पीते हैं, मांसाहारी जानवर जीभ से पानी पीते हैं।

इन तीन जगह की यदि अपन ध्यान दें, यदि इतना उदारता हो, ध्यान दें तो पता लगता है कि मनुष्य की शरीर रचना जो है, वो शाकाहारी जानवरों के सदृश्य है। ये पता लगता है। ठीक हो गई?

इस क्रम में ये निश्चय हम कर पाते हैं, तब हम आहार पद्धति को पहचान सकते हैं। आहार पद्धति को पाने के लिए विधि यही है, अभी तक परंपरा में ये बात तो मदद हो चुकी है, अनेक प्रकार के अनाजों को हम पैदा करने की हैसियत पैदा कर चुके हैं। विज्ञान आने के बाद क्या किया? वो हैसियत को हटा दिया। विज्ञान युग आने के पहले हमारा देश में कम से कम 7,000 प्रकार की धान थे। अभी 700 नहीं हैं, उससे कम हो गई। थोड़े दिन के बाद इनका laboratory में ही रह जाएगा धान और किसानों के पास एक भी बीजा नहीं रहेगा। उसका इंतजाम कर ही रहे हैं।

इस ढंग से विज्ञान मानव का उपकारी हुआ, मानव को बरबाद किया – सोचना पड़ेगा इस मुद्दे पर। माने ये नहीं है – विज्ञान से कोई मदद नहीं हुआ है, ऐसा मेरा कहना नहीं है। जहाँ तक दूरश्रवण, दूरगमन, दूरदर्शन संबंधी जितने भी कार्य साकार हुए हैं, यंत्र उपकरण, इसमें मानव जाति की गति के लिए बहुत उपकार हुआ है। मेरा मूल्यांकन ऐसा है। किन्तु बाकी दिशा में जो क्षति हुई, उसको भी अनदेखी नहीं किया जा सकता। उपकार हुआ है, उसका भी मूल्यांकन होना चाहिए। जो उपकार नहीं हुआ है, हानि हुआ है, उसका भी कहीं ना कहीं समीक्षा होना चाहिए। ऐसा मेरा request है। ठीक है। इन दोनों भाग को ले के चलने पर ये पता लगता है, विज्ञान से बहुत उपकार हुआ है। क्या उपकार? दूरश्रवण, दूरगमन, दूरदर्शन संबंधी बात, विज्ञान युग के बाद तर्क संगत जो वार्तालाप के लिए बहुत सारा खिड़कियाँ खोली। ये बहुत बड़ा भारी उपकार है। दोनों जगह में इसका उपकार हम को पहचानने में आया है।

इसके अलावा बहुत सारी जगह यदि होगा, वो विज्ञानियों से हम पहचानेंगे समय-समय पर। और उसके बाद जो बरबाद की पहचानी हुआ है, ये सच्चाई है। ये बरबादी तो हुआ ही है। क्या बरबादी हुआ? जो बीज विधि और बीज को उन्नत बीज बनाने की विधि से, मनुष्य का ज्यादा उपज पैदा करने के लिए, उन्नत बीज बनाने का जो प्रक्रिया

किया, उसका परम्परा हो नहीं सका। फलस्वरूप जो बनी हुई बीज परंपराएँ ध्वस्त हो गई, समाप्त हो गई, सब हज़म हो गई, अब किसान खाली बैठने के जगह में आ रहा है। इसमें दो ही मुद्दा है – किसान पुनः अपने जागृति को पैदा कर लें, अपने खेत में होने वाली धान, बीजा वगैरह कुछ भी, उसको अपने में संरक्षित करें। ये ही इसका उपाय सूझती है। इन उपायों को यदि नहीं अपनाते हैं, एक दिन जो है ना, अपने को, जो दुकानदार बैठें हैं एक laboratory बना करके, उनसे यदि बीजा नहीं मिला, आप दाना नहीं बोओगे। ये तो बात सच्चाई है। इस जगह में आने वाले हैं दिन। इस पर तो ध्यान देना चाहिए।

दूसरा – जो विज्ञान विधि से हम आहार निर्णय कर नहीं सके। क्या अड़चन हुआ? उसमें भी एक अड़चन पैदा किया। क्या अड़चन पैदा किया, पूछें?

अड़चन का स्वरूप ऐसा देखा गया – मांसाहार, शाकाहार का समानता को विज्ञान ने प्रतिपादित किया। उनकी विज्ञान विधि से मांस को परीक्षण करने पर भी पुष्टि तत्वों का पहचान होता है, इसमें दो राय नहीं है। क्योंकि शरीर में पुष्टि तत्व का उपयोग होता है, मांस के रूप में वो परिणत होता भी है, इसको हम अच्छी तरह से जानते ही हैं। वोही पुष्टि तत्व वनस्पतियों में भी मिलता है, ये भी बात सही है। जो वनस्पतियों को सेवन करते हैं, उनमें भी पुष्टि तत्व रहता है, जो मांसाहार करते हैं, उनके शरीर में भी पुष्टि तत्व हुआ करता है, इसमें तो समानता दिखाई पड़ती है। इसके मूल में जो मूल तत्व है, जीवन और जीवन मानसिकता – मानसिकता के ऊपर है ये। ये अभी आगे की जो कुछ भी हमारा मंतव्य²⁸ है, वो मानसिकता के अर्थ में है। मानसिकता शोषणवादी होना, हिंसावादी होना या नहीं होने के आधार पर है। सम्पूर्ण मांसाहार प्रक्रिया आदमी को शोषण और हिंसा की ओर ही प्रवृत्त करता है। हिंसा और शोषण मानव के लिए अत्यन्त हानिप्रद प्रवृत्तियाँ हैं। ये परिवार में भी हिंसा और शोषण हानिप्रद है, समाज में भी हानिप्रद है और व्यवस्था में भी हानिप्रद है, परस्पर देश के साथ भी हानिप्रद है, परस्पर समुदायों के परस्परता में भी हानिप्रद है। इस बात को अपन अच्छी साधारण मन से ही इसको पहचान सकते हैं।

इसके आधार पर, मांसाहार शाकाहार की पुष्टि तत्व के आधार पर समानता को बताकर एक सिर का दर्द पैदा किया। इसमें मानसिकता का पहचान ना होने का ही फल रही है। विज्ञान विचार से, जीवन शरीर से अलग-अलग कोई चीज़ है, ऐसा कोई सोचने की तरीका ना होने से, इस प्रकार की महानतम गलती कर बैठा। इतने ही बात है।

²⁸ मंतव्य : मत, प्रस्ताव

11. ज्ञानवाही और क्रियावाही तंत्र

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 4, time 13:42-17:45](#)

ज्ञानवाही क्रियाकलाप के बारे में बताया – जो कान का होना, शब्द को सुनना, शब्द जो कान से सुनने वाली बात, क्रियावाही तंत्र है। हाथ में छूना, ये क्रियावाही तंत्र है, मल विसर्जन होना, क्रियावाही तंत्र है। दिल में खून धड़कना, ये क्रियावाही तंत्र है। साँस लेना, ये क्रियावाही तंत्र है। ये समझ में आता है? तो उस संवेदनाओं में प्रवृत्त होना। शब्द, स्पर्श, रूप, रस गंधेन्द्रियों का हम संचालित करना शुरू करना। तो गंध से सुगंध की अपेक्षा रखना, ये ज्ञानवाही तंत्र है। साँस लेना क्रियावाही तंत्र है। कितने अच्छी बात है? जीभ में रूचि देखना, ये ज्ञानवाही तंत्र है। और शब्दों में हमारा सुन्दर शब्दों को सुनने की अपेक्षा होना, ये ज्ञानवाही तंत्र है। ठीक है ना? सुख स्पर्श को अपेक्षा रखना, ये ज्ञानवाही तंत्र है। इस बात को हम सब पहचानते ही हैं। ये ज्ञानवाही क्रियावाही तंत्रों में जो प्रयुक्ति होने वाली बात को बताया, ये भी तंत्रणा सदा बना रहता है, वो क्रियावाही तंत्र भी बना ही रहता है। इसको कहीं भी बंद नहीं किया जा सकता। ये क्रियावाही तंत्र के साथ भी जीवन शरीर को जीवंत बनाए रखने की आवश्यकता बना रहता है, तभी ये तंत्र पूरा संपादित हो पाता है और ज्ञानवाही तंत्र तो जीवन के बिना कोई काम हो ही नहीं सकता। थोड़ा सा भी जीवन ओझिल होता है, ज्ञानवाही तंत्र लुप्तप्राय हो जाता है। क्रियावाही तंत्र जो है ना, ये थोड़ा देर तक चलता रहता है, और उसके बाद वो भी बंद हो जाता है।

प्रश्न : दोनों ही मेधस से controlled है।

उत्तर : दोनों मेधस से तो control नहीं है। क्रियावाही तंत्र मेधस के ज्ञानवाही तंत्र से भिन्न रहता है, फिर भी मेधस से सम्बन्ध रखता है। ठीक है ना? वो शरीर के अनुसार क्रियावाही तंत्र है और जीवन के अनुसार ज्ञानवाही तंत्र है। ऐसा इसको पहचाना गया है। ठीक है? ये दोनों को ऐसे पहचानो। इन दोनों – क्रियावाही तंत्र से क्या-क्या क्रिया होता है वो भी स्पष्ट है, ज्ञानवाही तंत्र से क्या-क्या क्रियाएँ होते हैं, ये भी स्पष्ट हैं। उसी के साथ ज्ञानवाही तंत्र के साथ, न्याय धर्म सत्य को प्रकाशित करना भी, प्रमाणित करना भी तंत्र है। ये ज्ञानवाही तंत्र का सार्थक स्वरूप वो ही है। और प्रारंभिक स्वरूप संवेदनाओं को व्यक्त कर देना ये प्रारंभिक स्वरूप है। ये प्रारंभिक स्वरूप में जीव संसार, मनुष्य संसार की संवेदना में समानता ही रहती है। अभी ये भी बता दिए थे, जो भौतिकवाद के अनुसार मनुष्य को जीव कहते ही हैं, और अध्यात्मवादी भी मनुष्य को जीव ही कहते रहे। इस ढंग से ये काम-धाम जीव जगत की बात अध्यात्मवादी किया और उसी प्रकार ये भी मनुष्य को जीव कहते हैं। ये अभी तक की प्रचलन ये ही है।

प्रश्न : मेधस का मृत्यु होते ही क्रियावाही तंत्र बंद हो जाता है, काम करना बंद कर देता है?

उत्तर : ज्ञानवाही तंत्र बंद होने के बाद क्रियावाही तंत्र बंद होता है। ये बात है। ये इस प्रकार से काम है। तो इन काम को ठीक करने के लिए जो, शरीर में आई हुई रोगों को ठीक करने के लिए, ज्ञानवाही तंत्र भरसक प्रयत्न करता ही रहता है। जीवन ज्ञानवाही तंत्रणा से रोग को ठीक करने के लिए प्रयत्न करता ही रहता है। हर एक शरीर में। ठीक है? तो ये अंततोगत्वा नहीं होता है तो शरीर को छोड़ देता है। बस इतना ही बात है। ठीक है?

12. कामनाओं का विश्लेषण

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 05, time 00:00-28:09](#)

प्रश्न : गायत्री परिवार ने लाखों आदमियों के द्वारा जप करवाया कोई satellite जब गिरने वाला था भारत में, तो हमारे ऊपर ना गिरे। जब कोई बहुत बड़ा अकाल की विभीषिका, कोई महायुद्ध, हमारे सिर के ऊपर ना गिरे। तो जो परम्परा में जो प्रचलित है की जप, तप, दान, पुण्य, परमात्मा से..

उत्तर : वो सब शुभकामना व्यक्त करने की ही प्रक्रिया है, क्यों नहीं मानते हैं बाबा ?

प्रश्न : कितने मात्रा में कारगर होते हैं वो ?

उत्तर : क्या कारगर होता है इससे ? शुभकामना हम करते रहे, वो उसके साथ-साथ और भी factors जुड़ी थीं। जो विज्ञान विधि से उसको कितना टाला जा सकता है, उसका भी प्रयत्न चलती रही। अंततोगत्वा वो टल गई। टल गई, वो समुद्र में गिर गया, बात हो गई। इस बात को हम सुन लिये। तो हम सब शुभकामना करते रहे, वो शुभ में परिणत हो गई। क्या बुरा हुआ ? वो ये धरती पर गिरता या वो ही दिल्ली पर गिरता, वो ही दूसरा कोई गाँव पर गिरता, खेत पर गिरता, और कुछ दुर्घटना हो सकती थी। बात इतनी ही है। गिरा तो सही, गिरने वाली बात में तो कोई कमी नहीं हुआ। तो इस प्रकार से क्या है, तो समय-समय पर जो कोई भी, अभी-अभी जो युद्ध की स्थितियाँ बनती हैं – मंदिर में, मठ में, मस्जिद में – प्रार्थनाएँ की जाती हैं। इसमें क्या शंका है ?

प्रश्न : नहीं बाबा सवाल दूसरा है, कि इस तरह से हमारे द्वारा किये हुए जो प्रयास हैं परंपरा में प्रचलित।

उत्तर : कामना कहो, प्रयास क्या चीज है इसमें ?

प्रश्न : इसको तो प्रयास के रूप में, जैसा हम लोग जप करते हैं, दुर्घटना में हो.. ?

उत्तर : कामना ही हैं महाराज जी ये सब चीजें, उसको बढ़ा-चढ़ा करके, क्या प्रयास है इसमें ? हम कामना करते हैं एक जगह में बैठ के।

प्रश्न : ठीक है ना बाबा, आप उसको कामना शब्द से बोलिए।

उत्तर : हाँ, आपके शब्द से प्रयास है। ठीक है, चलिए, आगे चलिए।

प्रश्न : परंपरा में जो वर्णित है, तो वो सिर्फ हमारे मन का भ्रम है या वास्तव में वो इन दुर्घटनाओं से मानव जाति को या किसी व्यक्ति विशेष को बचाने में कारगर सिद्ध होते हैं ?

उत्तर : हाँ, अब बोलिए – शुभकामना, दुष्कामनाएँ जो है कारगर होते हैं की नहीं होते हैं ? उस जगह में आ जाएँ। ठीक है ना ? मानव के साथ क्या है, ये शुभकामना भी ऐसे होते हैं, जैसा भविष्यवाणी जैसा है। कामनाएँ जो है भविष्य में घटित होने वाले के सदृश्य कामना हो जाता है। दुर्घटना भी वैसे ही है, हम कामनाएँ करते हैं किसी का दुर्घटना के

लिए, वो घटित हो जाता है। तो ये दोनों कामना घटित होने वाली कामनाएँ हो जाते हैं। इस ढंग से घटित माना जाता है।

प्रश्न : महाराज जी मैं एक मनुष्य के लिये कामना करता हूँ कि ये मनुष्य बहुत अच्छा हो जाए, वो अच्छा हो जाता है ये ठीक समझ में आता है। मैं एक पत्थर के लिए सोचता हूँ कि ये पत्थर उठ के वहाँ चल के बैठ जाए या वो पत्थर लुढ़क के गिरने वाला है, वो रुक जाए तो क्या कामना पत्थर को रोक सकता है, मनुष्य पर तो प्रभाव डाल सकता है।

उत्तर : अरे बेकार बात ये सब, कामना, कामना ही है बाबा। जो पत्थर गिरना है वहाँ, जहाँ गिरना है वहीं गिरता है। तो हमारा कामना के अनुरूप हमारा सिर पर नहीं गिरा, इसीलिए हमारा कामना सफल हो गया हम सोचते हैं। यही बात है और दूसरा कुछ बात नहीं है। तो हम आपको ये विदित करना चाहे हैं सच्चाई यही है – हमारा सद्कामना, दुष्कामनाएँ घटित होने वाले के स्वरूप में हो जाता है, यदि वो घटित हो जाता है, हम सोचते हैं कि हमारा कामना था इसीलिए हो गया। ऐसा माना जाता है। होता हमारा कामना से कुछ नहीं है। कर्म से होता है, कार्य से होता है। पहले घाट कहाँ पहुँचा है? कामना और कार्य में अंतर आपको समझ में आता है?

प्रश्न : एक मिनट बाबा, ये मैंने जैसे प्रयास शब्द उपयोग किया, तो वो जो सामूहिक जप करते हैं कोई दुर्घटना से बचें, आपने कहा वो कामना है, तो कामना और प्रयास के बीच परिभाषित कर दीजिए।

उत्तर : कामना और कार्य! कार्य शब्द। कार्य क्या है? भाई कोई एक, अभी आप ही ने बताया था, satellite गिर रहा है। उस समय में जितने भी जो कई missiles को तैनात किया। तैनात करके उसको जो जिस directions में आता रहा, उसको बदलने के लिए Russia भी प्रयत्न किया और America भी प्रयत्न किया। उसमें दोनों sincere attempt किया एक साथ, एक मन से। उसको वो सफल हुआ मानते हैं। इसको हम कहते हैं कार्य। ठीक है? तो हम बैठ करके, ये जो गिर रहा है हमारा सर पर ना गिरे और हमारा देश पर ना गिरे और दूसरे मनुष्य के ऊपर ना गिरे, ये सब एक के साथ एक extend किया, वो हम बैठ करके कामना कर रहे हैं। वो जो गिरने वाला था, उसी जगह में ही गिरा, जिस कार्य की संयोग से, स्वयं की गति की संयोग से जहाँ गिरना था वहाँ गिर गया। उसके साथ हमारा शुभकामना भी फलित हो गई, उनका कार्य भी फलित हो गया, इसमें क्या तकलीफ है?

प्रश्न : हम लोगों ने जप किया कई लाख आदमियों ने, और हम लोगों ने ऐसा माना कि हम लोगों के जप के फलस्वरूप किसी मानव विनाश से बच गये, समुद्र में जा के गिर गया। ऐसा हम लोगों ने माना, तो वो हमारा भ्रम था कि वास्तव में उसमें कोई सच्चाई थी?

उत्तर : वो भ्रम है, उसको यदि पूछोगे तो, ऐसा पूछोगे तो उसका उत्तर वही है। तो ये सही है हमारा शुभकामना करना हमारा फर्ज थी, हमने किया, हमसे जितना बन सकता है शुभकामना की समय दिया, वो हमारा शुभ का एक परिचायक है।

प्रश्न : मंत्र जप और अनुष्ठान को आप कर्म नहीं मानेंगे?

उत्तर : कामना ही हैं। ये जितने भी अनुष्ठान²⁹ करते हैं हमारा शुभ कामना है, अनुष्ठान करते हैं वो माने अशुभ कामना है। अनुष्ठान तो अशुभ के लिए भी किया जाता है, ये करते ही हैं। अच्छा, शुभ के लिए भी करते हैं – हमारा ये कामना है।

प्रश्न : उससे कुछ नहीं होता है ?

उत्तर : कुछ नहीं होता है हम कहाँ कह रहे हैं ? यदि घटित होने वाले जैसा हमारा कामना हो जाए, तो घटना होने पर हम सफल मानते हैं। बता तो दिया आपको।

प्रश्न : नियति क्रम में ऐसा घटित होना था इसलिए हो गया, कि हमारे इस कामना और.. ?

उत्तर : नियति क्रम में होने वाला था, उसी के अनुरूप में हमारा कामना जुड़ गया। इतनी ही बात है। वो हमारा कामना हमारे लिए तो सुख देता है। शुभ कामना हमारे लिए सुख देता है, अनिष्ट कामना हमारे लिए तो दुःख देता ही है। हर शुभ कामना हमारे लिए तो सुख का साधन है, हर अशुभ कामना हमारे लिए दुःख का साधन है। ये तो बात पक्का है।

प्रश्न : इस तरह की जो दुर्घटनाएं हैं, ये दिव्य मानव स्तर के लोग हैं वो इस तरह के दुर्घटनाओं में या इस तरह की जो विपत्तियाँ आने वाली हैं उसमें कोई वो नहीं कर पाते हैं हस्तक्षेप ?

उत्तर : वो (देव मानव) कर ही रहे हैं – आदमी को समझदार बना रहे हैं, दुर्घटना से बचने ही है। हमारा कामनाएँ घटना के अनुरूप कभी-कभी होता है और प्रतिकूल भी होता है। ये मानिए आप। मनुष्य में, सामान्य मनुष्य में। ठीक हो गई, एक बात हो गई। अभी ये चीज़ आदि मानव से लेकर अभी तक हुआ। ठीक हो गई ? अब जो आपने कहा – दिव्य मानव, देव मानव की बात, वो दिव्य मानव, देव मानव बनने के पश्चात तो कोई दुर्घटना की प्रश्न ही नहीं है।

प्रश्न : उनके साथ नहीं घटता औरों के साथ तो घटता ही होगा, उसमें वो क्या कर पाते हैं ?

उत्तर : उनको दिव्य मानव, देव मानव बनाने की काम – अभी कर क्या रहे हो ? भाड़ झोंक रहे हैं क्या ?

प्रश्न : फलित कहाँ हुआ है भाई, हजारों साल के इतिहास में वो लोग क्या कोशिश किये हम को नहीं पता, लेकिन जितनी सारी दुर्घटनाओं को मानव जाति का जो सिलसिला है..

उत्तर : उससे (दुर्घटना से) ज्यादा सद् घटना हुआ है।

प्रश्न : नहीं सद् घटनाएं तो हुई हैं बाबा, दुर्घटनाओं को रोकने के क्रम में..

²⁹ अनुष्ठान : कोई धार्मिक कृत्य ; नियमपूर्वक आरम्भ करना

उत्तर : दुर्घटनाओं को रोकने के क्रम में, दुर्घटना के लिए प्रयत्न अधिक हुआ है, सद् घटना के लिए कम हुआ है। सद् घटना ज्यादा घटित हुआ है, दुर्घटनाएँ कम घटित हुआ है। बात इतनी ही है, समझदारी के बिना रास्ते में चल नहीं सकोगे आप।

समझदार बनाने से अधिक कोई काम नहीं है।

प्रश्न : इससे हम लोग इनकार नहीं कर रहे हैं बाबा, अभी जब तक मानव जाति प्रक्रिया में है, अभी समझदार बना नहीं है, समझदार बनने के क्रम में है, पर इस बीच में जिन दुर्घटनाओं से गुजरता है बेचारा, तो बचने के लिए आकांक्षी है।

उत्तर : बचने के लिए जैसा हम अभी तक प्रयत्न करते रहे, करते रहे।

प्रश्न : वो अभी पर्याप्त नहीं हुआ है न, इसके बावजूद भी व्यक्ति.. ?

उत्तर : हमारा कहना है, देखो महाराज, जो प्रयत्न भी साथ चल रहे हैं, दुर्घटनाओं से बचने के लिए। ठीक है? इसके बावजूद दुर्घटनाएं होते ही हैं। तो हमारा कहना ये है – जितना दुर्घटनाएं हुई हैं, वो सद् घटना के अपेक्षा में कम है। किन्तु मानव का कामना जो है, मानव का प्रयत्न है दुर्घटना के लिए ज्यादा काम किया है और सद् घटना के लिए कम काम किया है। इसको याद करके रखिये। आदमी दोहरा है, दोहरा जात। भीतर कुछ होता है बाहर कुछ होता है, अमानव का यही लक्षण है। इसको ध्यान में रख करके बात करिए। तो अभी जो है मानवता से संपन्न होने की कार्य को संपन्न करना हमारा काम है। उसी से मानव के पास शुभ घटनाओं को घटित कराने की ताकत बढ़ेगी। अभी क्या है – कामना करने की बात तो है ही।

दो बात आपको समझने कि आवश्यकता है। पहला बात ये है – मानव का हैसियत। आगे दूसरा बात है – नियति क्रम विधि। नियति क्रम विधि के अनुसार मानव यदि अपने को ताल-मेल बनाता है, नियति क्रम में कोई भी दुर्घटना नहीं है। क्या-क्या चीज को छोड़ करके? भूकंप हो गई। ठीक है? अभी जितने भी भूकंप हो रहे हैं, उसमें 80%, 90% मानव ने जितने भी धरती के अंदर जो परमाणु विस्फोट को पैदा किया है, उसका परिणाम है। बाकी 20% धरती के स्वभाव गुण है। धरती में भूकंप होगा, भूकंप कभी-कभी होते रहेगा। उसका निश्चित स्थान, निश्चित गति, निश्चित दिशा बनी रहेगी। उसको जागृत मानव पहचान सकता है। उससे बच सकता है। एक बात हो गई।

उसके बाद चक्रवात, झंझावात, ठीक है, ये चीज होगा। ये इस आधार पर होगा, धरती अपने में गतिशील है। धरती की गति के साथ और ग्रह गोलों की जो समीप होना, दूर होना बनता रहता है, समीप होने से धरती पर वायुमंडल का जो दबाव है भिन्न होता है, दूर होने से भिन्न होता है, इस आधार पर झंझावात, चक्रवात होने की सम्भावना बनी रहती है। ये बनेगी, ये दो चीज रहेगी। इसको भी जागृत मानव परंपरा इसको पहचान सकता है, उसका निश्चित दिशा होगी, निश्चित तरीका होगी, निश्चित गति होगी, उसको पहचान करके उससे आदमी बच सकता है। ये इससे बनता है ये-शुभ लक्षणों के लिए। बाकी और कोई भी विधा नहीं है, दुर्घटना का कोई विधि ही नहीं है जो मानव यदि घटित नहीं कराता। बाकी सब मानव ने घटित किया हुआ दुर्घटना है।

जैसा – अभी आप Skylab की बात किए हो। मानव ने आकाश में रखा था। ठीक है, उसका जो है ना क्रम क्या है? वो होना था कब, क्या होना था क्या हो गया? वो आपको एक थोड़ा सा सूचना के रूप में बताना चाहते हैं। आकाश में अभी बहुत सारे satellite मनुष्य की control से बाहर हो चुका है। ये हो चुका है। इसका दो ही विधि है। जैसा Skylab गिरा, वैसा ही गिरे। वो अपना गति को किसी ना किसी direction change होने के पश्चात कोई ना कोई धरती में जा करके गिरेगा ही। जैसा अभी एक धूमकेतु³⁰ जा करके बृहस्पति में विलय हो गया। तो उसी विधि से ये जो जितने भी मनुष्य के control से बाहर हो गई है, उसका दो परिणाम है यथावत जा कर के कोई जगह में गिरे, या नहीं, वो धूलि के स्वरूप में हो जाए। धूलि के स्वरूप में होने के लिए समय ज्यादा लगता है। ज्यादा लगने के क्रम में वो धूलि होने के बाद भी वो गति यथावत बना रहता है। जब कभी वो दिशा परिवर्तन होगा (वो किस आधार पर) – ग्रह गोलों के पास आना, दूर होने के आधार पर दिशा परिवर्तन होगी। उसके आधार पर दिशा परिवर्तन होने के बाद घूमते घूमते किसी ना किसी धरती में विलय हो जाता है – धूलि के रूप होने के बाद। अभी जो धूमकेतु बृहस्पति में विलय हुआ वो धूलि के रूप में ही था। ये होता क्यों है? आकाश में जितने भी छोड़े हो, ये सब ऐसे धूलि के स्वरूप में परिणत होना ही है। उसका एक सिद्धांत है, फटिक सिद्धांत। क्या फटिक सिद्धांत क्या होता है भाई? तो वस्तु शून्य में अवस्थित होने के बाद अपने गति के अनुसार घूमता रहता है। नहीं तो उनको विकसित होना है, नहीं तो हास होना है। दो में से एक ही गति है। तो विकसित होने के लिए उनके पास सामग्री नहीं है। उस स्थिति में धूलि हो जाता है। इसका नाम है फटिक।

हरि हर, जय हो, मंगल हो, कल्याण हो।

प्रश्न : ये जो ज्योतिष संबंधित बहुत सारी चर्चा हुई उसमें ऐसा लगा है की घटनाएं पहले से मनुष्य के साथ निश्चित हैं, जैसे अभी परंपरा में बोला भी जाता है, कि आपके साथ जो घटना होना है पहले से तय है, आप उसमें कुछ नहीं कर सकते। क्या ये बात सही है?

उत्तर : गलत! मनुष्य की प्रवृत्ति के अनुसार घटनाएँ परिवर्तित हो जाती हैं, मनुष्य से घटित करने वाली जितने भी घटनाएँ है। ठीक है, ये समझ में आता है कि नहीं आता है? मनुष्य के प्रवृत्ति के अनुसार मनुष्य घटित करने वाली क्रियाएँ बदलते जाते हैं। ये समझ में नहीं आता है? होता है? ठीक हो गया। तो ये मनुष्य की घटना क्रम में बताया। मनुष्य घटित करना चाहता है जितनी भी वो उसके बारे में ये हो गया आधार। मनुष्य का प्रवृत्तियों के आधार पर घटनाओं को design करना, घटित कराना बनता है। इसको करते ही आया है। आदमी जात करते ही आया है कि नहीं करते आया है आपके अनुसार?

प्रश्न : जैसे मृत्यु है, शरीर का छूटना?

उत्तर : मनुष्य जो घटित कराता है कह रहे हैं, पुनः वो ही बात! घटित कराने के लिए जितने भी design बनाता है, घटित कराते आया है कि नहीं आया है? आप जो घटित कराने के लिए जो design बनाया, जो घटित करा पाया, आप ही घटित कराये कि नहीं कराये? [कराए] बस इतने से मतलब ही है, और काहे के लिए इतना पुराण-पंचांग?

³⁰ धूमकेतु / comet : सौरमण्डलीय निकाय जो पत्थर, धूल, बर्फ & गैस से बने हुए छोटे-छोटे खण्ड

तो आदमी जात की प्रवृत्ति के आधार पर घटना की design है। ये बात समझ में आता है? ये घटनाएँ मनुष्य घटाते आया, घटते ही आई और उसका परिणाम होते ही गया। उसी क्रम में धरती का बीमार होना भी हम पा रहे हैं। ठीक बात है ये? अब उसके बाद होता है, जो धरती की कार्य विधि में घटित होने वाले काम। उसको दो बात बताया – एक तो भूकंप बताया और दूसरा चक्रवात वगैरह बताया, तीसरा हो सकता है ज्वालामुखी। तीन बात हो सकता है। ये तीन बात घटित हो सकता है। तो इन तीनों बातों से जागृत आदमी बच सकता है।

प्रश्न : जैसे एक बच्चा अभी पैदा नहीं हुआ है, उसको इतनी-इतनी उम्र में इस-इस तरह का रोग की संभावना बनती है। बच्चा के जन्म के पहले ही, वो बच्चा इस तारीख तिथि को पैदा होगा, तो इस तरह के रोग, इस तरह की बीमारी, इस तरह की घटनाएँ, इस तरह की पत्नी होगी, उसकी जो भविष्य वाणी करते हैं और जिसको आगे जा कर सही उतरते भी देखा गया है, वो किस आधार पर है?

उत्तर : वही ब्रह्माण्डीय किरणों के आधार पे है।

प्रश्न : तो घटना का निश्चित होना वही तो है? इस आधार पे, अभी तो उसकी प्रवृत्ति को हम को मालूम नहीं है कैसा प्रवृत्ति होगा?

उत्तर : वो ठीक है भाई, उस लग्न में बच्चे को मत बुलाइये, लग्न को बदलिए। आप ही से तो घटित होता है, बच्चा आना। काहे के लिए उसमें सर कूटी? अपन फ़ालतू बातों में फँस गये। मनुष्य ही बच्चा पैदा करता है, ये बात सही है या गलत? सही समय में पैदा करिए, एक ही उत्तर। उसको ज्योतिषी बताता है, हम बताते हैं। कोई ज्योतिषी नहीं बताता है तो हम बताते हैं। नहीं करना है तो, करिए जैसा करना है।

प्रश्न : लग्न के आधार पे, यदि बच्चे के पैदा होने के समय के आधार पे उससे जुड़ी हुई घटनाएँ तय होती हैं, तो घटना के लिए किसी आदमी के जिन्दगी में ग्रह-नक्षत्र का प्रभाव हो गया, हर आदमी के जीवन में जो अलग-अलग शुभ, अशुभ घटना घट रही हैं, उसका मामला ग्रहों से control हो गया? जीवन का इसमें क्या role है?

उत्तर : इसको अच्छे से समझो, ये जो बात है रोग-राटा शरीर की बात कर रहे हैं अभी, बाकी बातों को ताक में रखो। निरोगी बच्चा चाहिए, उसके लिए हम समय बताते हैं, पैदा करिए, निरोगी बच्चा होगा, खतम हो गया बात। ठीक है? आपके अनुसार रोगी भी होगा, निरोगी भी होगा – ऐसा बात random में चलती रहती है, अभी वैसे ही चल रहा है। सभी रोगी हो गये ऐसा भी नहीं हैं, सभी निरोगी हो गये ऐसा भी नहीं है। ये भी सच्चाई है – निरोगी अधिक हैं, रोगी कम हैं। आज के तालिका में।

प्रश्न : मानव की जिंदगी में घटने वाली घटनाओं का उसके लिए उसकी पूर्व शरीर यात्राओं का भी कोई भागीदारी है कि ये उससे बिलकुल स्वतंत्र है?

उत्तर : देखिए इसमें जितने भी बात, अभी जो आप जिस नबज की बात कहे, उसमें से हम लोग संस्कार को पहचानते हैं। संस्कार समझदारी के आधार पर ध्रुविकृत है। नासमझी का कोई संस्कार होता नहीं। इसको ऐसा हम गणित को बताते हैं। नासमझी का कोई भी संस्कार नहीं होता है, बेवकूफी का कोई संस्कार होता नहीं है, और ईमानदारी,

बुद्धिमानी का ही संस्कार होता है। आज तक इतना ही है। जितना हम पहले समझदार थे, उसका हमारे इस शरीर यात्रा में उपकार करता ही है। इसी के प्रमाण में हम पहले मानव से आज तक जितने भी विकसित हो पाए हैं, जागृति क्रम में, वो हमारे सम्मुख रखा ही है, तालिका बनता है उसका।

प्रश्न : पिछले शरीर यात्राओं से समझदारी, संस्कार की जो पूंजी मैं ले के आया हूँ, ये एक स्थिति हो गई। घटनाओं का जो घटने का क्रम है, उसमें भी क्या हम पिछले शरीर यात्रा में जो जी कर आए हैं, उसका कोई link इसमें जुड़ता है, कि उससे कोई link नहीं है?

उत्तर : सारे दुर्घटना, घटना के रूप में शरीर गत जितने भी शरीर के साथ घटने वाली घटनाएँ हैं, ग्रह, नक्षत्रों का योग रहता ही है। मनुष्यों का प्रवृत्ति का पुट चाहिए, दोनों एकत्रित होने से घटनाएँ घट जाती हैं। शरीर के ऊपर घटने वाली बात। शरीर के साथ जीवन होता ही है। शरीर जब बेकार हो जाता है तो शरीर को जीवन छोड़ देता है। बात ये हो गई, एक खाता ये पूरा हो गया। अब रह गया जो कुछ भी पूर्व जनम से हम लाये रहते हैं – समझदारी – वो कोई दुर्घटना घटाने के आधार पर आता नहीं है। जो कुछ भी शरीर यात्रा जहाँ से शुरू करते हैं, वहीं से दुर्घटना घटाने का कार्यक्रम शोध कार्य शुरू हुआ रहता है। उसका ज्वलंत उदाहरण है विज्ञान। जितना भी दुर्घटना को घटाना है, विज्ञान विधि से सफल हुए हैं। अच्छा सद् घटनाएँ घटाने में क्या सफल हुए हैं? उसका भी सवेरे तालिका में बता दिया। आपको बताये थे की नहीं? दूरश्रवण, दूरगमन, दूरदर्शन सम्बन्धी साधनों को निर्मित कर पाए, ये विज्ञान का देन है। धरती को रोगी बनाया, ये विज्ञान का देन है।

13. अखण्ड समाज व्यवस्था

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 06, time 02:50-10:18](#)

जीवन शुभ चाहता ही है, इसी आधार पर अनुसंधान सम्पूर्ण होता है, जागृति तक पहुँचते हैं। इसके लिए प्रधान स्थली परिवार है। परिवार और बहुत सारे परिवारों के साथ ही एक परिवार जीना, देखने को मिल रहा है। इन सभी परिवारों के साथ शिक्षा संस्कार कार्य एक परंपरा है। उसी के साथ-साथ ये समझदार होना, नहीं होने वाला बात घटित होता है। अभी तक की मनुष्य को समझदार बनाने का कोई शिक्षा संस्कार की व्यवस्था नहीं हो पाई थी। अभी अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन के अनुसार ये स्वाभाविक रूप में आती है। इस आधार पर यदि हम सोचना शुरू करते हैं, अपने में एक बहुत अच्छी शुरुआत ये हो सकता है, हम अच्छे ढंग से, अनुसंधान को, शोध को, कार्य को शुरू कर सकते हैं। हमको जागृत होना है, ये उद्देश्य बनता है। जागृत होने के लिए, वस्तु को जैसा है, वैसा वस्तु को समझने की बात आती है। ऐसे समझदारी विकसित होने के उपरान्त ही, हम जागृति पथ पर चलना शुरू करते हैं। ऐसे मुद्दे को पहले अपन तय कर लिए हैं – अस्तित्व को पूरा समझने पर सहअस्तित्व के रूप में समझदारी होती है, जीवन को समझने से समझदारी होती है, मानीवयता पूर्ण आचरण को समझने से समझदारी होती है। इन तीनों मुद्दा यदि समझ में आती है, तब हम समझदार हो पाते हैं, इसके पहले नहीं हो पाते हैं। इससे ज्यादा हमको आवश्यकता नहीं बनती है।

इतने में हम समझदार हो करके एक परिवार में हम प्रमाणित होना शुरू कर देते हैं। क्या प्रमाणित होते हैं? परिवार व्यवस्था में हम प्रमाणित होते हैं। परिवार के समाधान, समृद्धि में भागीदारी कर पाते हैं। फलस्वरूप हम आगे समाज के भागीदारी करने के लिए व्यवस्था में भागीदारी करने के लिए तत्पर हो जाते हैं। समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने के क्रम में ही हम सम्पूर्ण अपने जागृति को प्रयोग कर पाते हैं। और बाकी जगह में सम्पूर्ण जागृति प्रयोग नहीं हो पाता है। समग्र व्यवस्था में भागीदारी करना ही परिवार मूलक स्वराज व्यवस्था का मतलब है। इस विधि से हम बहुत जल्दी-जल्दी अपने को जागृति पूर्ण होकर हम स्वस्थ परिवार के रूप में जीकर समाधान, समृद्धि को प्रमाणित करते हैं, साथ ही उपकार कार्य करते हैं। उपकार के रूप में शिक्षा देते हैं, संस्कार देते हैं और न्याय को परस्परता में ध्रुविकरण करते हैं, प्रमाणित करते हैं, इस ढंग से उपकार कार्य शुरू होता है। न्याय पूर्वक जीने से उपकार है, समाधान समृद्धि पूर्वक जीने से उपकार है और समझदारी को बारंबार हम आगे पीढ़ी को अर्पित करने में उपकार और स्वायत्त रहने से उपकार और स्वावलंबी रहने से उपकार। इस ढंग से मनुष्य की उपकार की एक सऊर, एक आबरू अपने आप में बनता है। इसमें जी करके ही आदमी अपने को सुखी होना पाता है और दूसरों को सुखी करना पाता है। यही मुख्य मुद्दा है, परिवार का। ऐसे अनेक परिवार एक गाँव में होते हैं, ऐसे अनेक गाँव या देश धरती मिल करके एक समाज होता है।

प्रश्न : मूल्य मूल्यांकन उभय तृप्ति को स्पष्ट करें।

उत्तर : परिवार में तृप्ति का जो स्रोत है, वो बात पर ध्यान देना आवश्यक है। परिवार में सम्बंधों का पहचान एक आवश्यक है, सम्बोधन तो रहता ही है, पर सम्बन्धों को पहचानने के बाद मूल्यों को निर्वाह करने की बारी आती है।

इन मूल्यों को निर्वाह करने के क्रम में विश्वास सबसे पहला मूल्य है, विश्वास को निर्वाह करना एक आवश्यकता बन जाती है। परिवार के परस्परता में, परिवार में जितने लोग रहते हैं, उनके परस्परता में कोई ना कोई संबंध का संबोधन रहता ही है। चाहे भाई हो, बहन हो, माता हो, पिता हो, दादी हो, दादा हो – इस प्रकार के कोई ना कोई नाम से हमारा संबंध संबोधन रहता ही है। ऐसे संबोधन के साथ-साथ मूल्यों को निर्वाह करने वाली बात आती है।

बड़े बुजूर्गों के साथ सम्मान सहित विश्वास को निर्वाह करना होता है और साथियों के साथ विश्वास को निर्वाह करना होता है और अपने से छोटों के साथ भी विश्वास निर्वाह करना होता है। विश्वास निर्वाह करना प्राथमिक काम है, प्राथमिक मूल्य है। साम्य मूल्य केवल विश्वास ही है। इस आधार पर विश्वास को हम निर्वाह करना बन जाता है, बाकि मूल्य अपने आप से निर्वाह होना बनता है। इस क्रम को अपने को अपनाने की आवश्यकता है। ऐसा करने पर मनुष्य में एक बहुत बड़ी भारी ताकत जन्मती है – हम संबंधों को निर्वाह कर लिया, मूल्यों को निर्वाह कर लिया और मूल्यांकन किया, उभयतृप्ति पा लिया और साथ में इससे समाधान सिद्ध हो गई और इसके साथ समृद्धि को सिद्ध कर लिया। हम उपकार किए बिना रह ही नहीं सकते। हर व्यक्ति उपकार करने के योग्य हो जाता है।

उपकार करने के क्रम में ही हम समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने के लिए योग्य हो जाते हैं। ऐसे क्रम अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था के रूप में, समाज जो है मानव का अखण्ड समाज मानव जाति एक होने के आधार पर अखण्ड समाज की परिकल्पना आती है और अखण्ड समाज में सार्वभौम व्यवस्था ही एक मात्र व्यवस्था है। उसमें और कुछ व्यवस्था हो भी नहीं सकता। वो परिवार मूलक स्वराज व्यवस्था ही होता है, जिसमें आराम से आदमी व्यवस्था को पा लेता है। उस व्यवस्था के अनुसार हमारा जो भागीदारी की मुद्दा आती है, तो न्याय सुरक्षा में भागीदारी करना बनता है। हम आसानी से कर लेते हैं और उत्पादन कार्य में भागीदारी करना होता है, उसको भी पूरा करते हैं। विनिमय कार्य में भागीदारी करते हैं, उसको भी हम पूरा करते हैं। स्वास्थ्य संयम कार्य में भागीदारी करते हैं, इसको भी हम पूरा करते हैं।

उसके बाद सबसे अच्छी बात, शिक्षा संस्कार कार्य में भागीदारी करते हैं, इसको हम पूरा करने पर हमको अपना जो समझदारी का प्रमाण प्रमाणित होता हुआ दिखाई पड़ती हैं, परिलक्षित होता है, मूल्यांकित होता है। स्वयं का तो तृप्ति होती ही है, जिस समुदाय में, जिस बच्चों के बीच में हम प्रमाणित करने गया हूँ, उनमें भी उतने ही उत्सव और उत्साह जगता है, वे सब हमारे जीने के तरीका को देखकर उसमें बहुत आश्वस्त हो जाते हैं, विश्वस्त हो जाते हैं, अरमान को पैदा करते हैं, इससे इतने ही अच्छे ढंग से जीना चाहिए, इससे ज़्यादा अच्छे ढंग से जीना चाहिए, इस ढंग से एक प्रवृत्ति बनती है।

ऐसे उत्सव से मानव में प्रगति होना स्वाभाविक है और कहीं भी गलती अपराध करने वाली प्रवृत्तियाँ अपने आप से दूर होगी, अखण्ड समाज प्रवृत्ति में हम सर्वथा सभी का सभी सुखी होने की रस्ता बनती है। ये अखण्ड समाज के बारे में मूल मुद्दा आती है।

सार्वभौम व्यवस्था के बारे में मूल मुद्दा इतने ही है। इसको आसानी से हम पूरा कर सकते हैं, माने सुगम रूप में पूरा कर सकते हैं।

14. परमाणु - 1

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 06, time 33:53-1:11:44](#)

चार प्रकार की अवस्थाएँ पहले बतायी गयी हैं - पदार्थावस्था, प्राणावस्था, जीवावस्था, ज्ञानावस्था। ये अंतर संबंध बाह्य संबंध बना हुआ है। ये सब एक साथ हैं, ये अलग-अलग कोई भी नहीं होते हैं। ये धरती नहीं होता है तो पदार्थ ही नहीं है। पहली बात तो यही है। धरती अपने में है, इसी के आधार पर सम्पूर्ण पदार्थ भी है। पहला ज्ञान तो यही है। पदार्थ ही मृद, पाषाण, मणि, धातु के रूप में उपस्थित है। इसका मूल रूप परमाणु ही है। इन परमाणु में विविध प्रकार के प्रजाति के परमाणु, परमाणु का अंशों के संख्या भेद से, प्रमाणित होना पाया जाता है। इन आधार पर विविध प्रजाति के परमाणु, अस्तित्व में होने के आधार पर, धरती समृद्ध होता है और रासायनिक क्रिया कलाप में परिवर्तित हो जाता है।

रासायनिक क्रियाकलाप का मतलब ही है, कम से कम दो प्रजाति की अणुएँ मिलकर, अपने-अपने आचरण को त्यागकर, तीसरे प्रकार के आचरण में प्रवृत्त हो जाने से है। जैसा पानी है, पानी में दो पदार्थ होता है, वो है जलने वाला और जलाने वाला। ये दोनों मिल करके अपने प्रवृत्ति को, अपने आचरण को परिवर्तित कर दिया, परिवर्तित करने के बाद ये पता चला, इसमें प्यास बुझाने वाली गुण पैदा हो गया। प्यास बुझाने का गुण जैसे ही पैदा हुआ, वो पानी का स्वरूप अलग दिखने लग गई, जलने वाला जलाने वाला स्वरूप से भिन्न हो गयी। ये दोनों चीज़ अलग हो गए, स्वरूप में भी परिवर्तन हो गया, गुण में भी परिवर्तन हो गया। इस ढंग से जल एक रासायनिक वस्तु है, मूल रसायन है, जल के बिना धरती में कहीं भी और कोई प्रगति हो ही नहीं सकती।

जल के बाद ये अम्ल और लवण रसायन पैदा होता है, तैयार होता है, फलस्वरूप इन सब के योगफल में विभिन्न प्रकार के रासायनिक द्रव्य होना पाया जाता है। इसी क्रम में अनेक प्रकार की प्रजाति की रस उपरस होना शुरू होता है। इन रासायनिक रस उपरस के आधार पर ठोस, तरल, विरल रूप में रासायनिक द्रव्य होना पाया गया, ठोस द्रव्य ही कुल मिलाकर के प्राणकोशा के रूप में अपने काम करना शुरू कर दिया। इस ढंग से पदार्थावस्था से ही प्राणावस्था का संबंध जुड़ा हुआ, अपने को समझ में आता है। यही प्राणावस्था के वस्तुएँ जब कभी मर जाते हैं, माने सूख जाते हैं, वो सब खाद हो करके धरती में मिल जाते हैं।

प्रश्न : परमाणु अंश परमाणु में कैसे परिणत होता है?

उत्तर : परमाणु अंश इसलिए परमाणु के रूप में गठित होता है - परमाणु अंशों में स्वयं प्रवृत्ति रहती है व्यवस्था में भागीदारी करने का, वो स्वयं स्फूर्त है। किस आधार पर? सत्ता उसमें पारगामी रहने के आधार पर, ऊर्जा सम्पन्न होने के आधार पर स्वयं स्फूर्त रहता है। उसी के आधार पर एक परमाणु अंश दूसरे परमाणु अंश को पहचानता है, फलस्वरूप कम से कम दो परमाणु अंशों से एक परमाणु का गठन होता है, वो व्यवस्था को प्रमाणित कर देते हैं। जिसमें श्रम, गति, परिणाम भावी हो जाते हैं, उसके बाद विकास क्रम शुरू होता है। विकास क्रम में यही होता है - श्रम के लिए विश्राम, गति के लिए गन्तव्य और परिणाम के लिए अमरत्व। ये तीन चीज़ भावी हो जाता है। उसमें से

विकास क्रम में चलते-चलते परमाणु एक गठनपूर्ण स्थिति में आता है, तब तक कई प्रकार के परमाणुओं का अवतार के बाद गठनपूर्ण परमाणु होना बनता है। इन तीन परमाणुओं में से कम से कम 60 प्रजाति के परमाणुओं को नाकने³¹ के बाद ही एक गठनपूर्ण परमाणु गठित होने का संभावना बनता है। तो यद्यपि हम देखा है, भूखे परमाणु 60 होते हैं, अजीर्ण परमाणु 60 होते हैं। बीच में एक परमाणु होता है, तृप्त परमाणु, उसी को हम जीवन परमाणु कहते हैं। तो ऐसे तृप्त परमाणु में जो है, कुल मिलाकर के 122 क्रियाएँ हम देखे, परावर्तन प्रत्यावर्तन रूप में। उसके पूरा का पूरा विश्लेषण 'मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान' में प्रस्तुत कर दिया है। इस विधि से 'मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान' इस बात का द्योतक है, जागृत जीवन जागृति के बाद क्या-क्या कर पाता है, मानसिक रूप में क्या-क्या करता है, वो व्यवहार में उतरने पर क्या-क्या होता है। वो सबको पूरा का पूरा उल्लेख दिया है, उसमें जितना तालिकाएँ चाहिए वो भी दिया है, अब उसको अपन देख सकते हैं। ठीक है।

प्रश्न : आपने बताया कि 60 परमाणु जीर्ण और 60 परमाणु अजीर्ण है। एक परमाणु गठनपूर्ण है। तो क्या गठनशील परमाणु में ही गठनपूर्ण बनने की संभावना रहती है, अगर रहती है तो किस स्तर में गठनशील परमाणु, गठनपूर्ण परमाणु बन जाता है?

उत्तर : परमाणु अंश बदलना ही गठनपूर्ण, गठनशील है। गठनपूर्ण में परमाणु अंश घटता नहीं है ना बढ़ता है, इसी का नाम है गठनपूर्ण। सभी गठनशील परमाणु गठनपूर्ण होना है, ऐसा कुछ नहीं है। अपना जो मानसिकता ऐसा दौड़ता है ना, उसको बंद कर देना चाहिए। सभी अवस्थाएँ रहेंगे, इस पर अपने को आश्वस्त होना है। कोई एक अवस्था में सब परिवर्तित हो जाएंगे ऐसा कुछ होता नहीं है - पदार्थावस्था भी रहेगा, प्राणावस्था भी रहेगा, जीवावस्था भी रहेगा, ज्ञानावस्था भी रहेगा। ठीक है? क्रम से ये कम मात्रा होते ही जाता है, ज्ञानावस्था में कम से कम मात्रा है, उससे अधिक जीवावस्था में है, उससे ज्यादा प्राणावस्था में है, उससे ज्यादा पदार्थावस्था में मात्राएँ हैं। मात्रा का मूल रूप परमाणु ही है। इस ढंग की बात है ये। इसलिए हम ये सोचने लगे कि सब परमाणु एक दिन जीवन बन जाएगा, इस प्रकार से अपने सोचते हैं। अस्तित्व में सभी अवस्थाएँ रहेंगे। ये मेधस तंत्र बनते हुए, हाथ, पैर, नाक सब मेधस तंत्र बन जाएगा, इस प्रकार की सोचने की विधि बनती है, ऐसा कोई काम नहीं होता है। प्रकृति में अपने में नियति विधि से सब व्यवस्थित रूप में रहता है। उसमें अपना मनमानी या hierarchy काम नहीं करता है। ठीक है।

तो अपने मनमानी से सोचना एक अलग चीज़ है, अस्तित्व में जो है, उसको देखना, समझना, उसके अनुसार जीने के लिए योजना बनाना, ये अलग चीज़ है। मेरे अनुसार अस्तित्व में जो चीज़ है, जैसा है उसको वैसा समझना चाहिए, समझने के बाद उसी क्रम में मनुष्य अपने को जीने की कला को विकसित करना चाहिए। उस प्रकार से विकसित करने जाते हैं, तब हम व्यवस्था में जीने के लिए बाध्य हो जाते हैं, तैयार हो जाते हैं, स्वीकृत हो जाते हैं, सब कुछ हो जाता है।

प्रश्न : जैसा आपने बताया सब का सब गठनशील परमाणु सब का सब गठनपूर्ण बने इसकी कोई आवश्यकता नहीं है, इनका एक निश्चित अनुपात रहता होगा हर एक अवस्था में। उनका अनुपात अस्तित्व में किस तरह से है?

³¹ नाकना : लांघना; दौड़, प्रतियोगिता में आगे बढ़ जाना

उत्तर : अस्तित्व स्वयं में निश्चित करता है इसको। उसको कितने कि बात नहीं होता, संख्या गणित से नहीं बनता वो। अस्तित्व स्वयं इस अनुपात को निश्चित करता है, कितना परमाणु पदार्थ अवस्था में रहता है, इसको आप गिन नहीं सकते। कितना परमाणु प्राणावस्था में रहेगा इसको गिन नहीं सकते। गिनना ये बनता है – प्राणावस्था रहता है, पदार्थावस्था रहता है, जीवावस्था रहता है और ज्ञानवस्था भी रहता है। ज्ञानावस्था में हमको क्या सार्थक होना है उसको सोचने की बात है, बाकि सभी चीज़ अपने में सार्थक है ही है। उनको कोई सिखाने की जरूरत नहीं है, हम उसी को सिखाने जाते हैं। अभी जैसा धरती को प्यास सिखाने गये हैं, बुद्धिमान लोग! सब मिलकर के धरती को प्यास सिखाने गये। धरती पानी पीना नहीं जानता है, अभी हम पानी पीना सिखाते हैं।

सिखाओ भई! इस ढंग से शेखचिल्ली महाराज लोग हैं, इस ढंग से काम निकलता है तो, निकाल लें। इसमें कुछ निकलने वाला नहीं है। तो धरती में जो गुण हैं, वो अपने में, स्वयं में, व्यवस्था के रूप में विद्यमान हैं। उसके लिए आप हमको कुछ करना नहीं है। इसका क्या मतलब हुआ? पदार्थावस्था को आपको कुछ पाठ सिखाना नहीं, प्राणावस्था को कुछ सिखाना नहीं, ना जीवावस्था को सिखाना है और स्वयं मनुष्य को जो सीखना है, वो सीखना बनवए नहीं किया है। अभी कल बताया, अभी इसके पहले बताया, आहार को निश्चय नहीं कर पाया, इतना विज्ञान, ज्ञान सब हो गया, इतना सिद्ध हो लिया। सब यती, सती, संत – सभी हो गए इस धरती पर, और उसके बाद विज्ञानियों का एक से एक – क्या prize कहते हैं, प्राप्त किया हुआ लोग हजारों हो गए, सैकड़ों हो गए, इसके बावजूद भी हमको ये पता नहीं लगा कि मानव का आहार क्या है! इतने अच्छे लोग तो हम विज्ञानी होते हैं, इतने अच्छे लोग तो ज्ञानी होते हैं, इतने अच्छे मानव होते हैं हम – ये अभी तक के इतिहास की बात ये ऐसे ही खड़ा हुआ है। अब इसमें हम कहाँ तक खड़े हैं, कहाँ तक हमारा कमर टूटा है, आप ही अंदाज़ा लगाइए।

इस ढंग से चलने पर बनता है, तो अस्तित्व जैसा है, उसको वैसे ही समझने की आवश्यकता है। समझने पर यही बनता है, सभी अवस्थाएँ रहेंगे। ठीक है?

सभी अवस्थाएँ रहते हुए सभी एक दूसरे के साथ पूरक विधि से व्यवस्था में जीना है। अभी मनुष्य जी नहीं पाया है। उसके लिए हम एक तरीका उपलब्ध करने के बारे में आप हम अभी सोच रहे हैं। उसमें अस्तित्व सहज विधि से हम अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिंतन को शुरू किए। शुरू करके उसमें से दर्शन, विचार शास्त्र – सब चीज़ों को हम एक प्रकार से उसकी उपयोगिता के विधि को स्पष्ट कर दिए। स्पष्ट करने के बाद अभी हम यहाँ पहुँचे हैं मनुष्य जो है अपने में व्यवस्था के रूप में कैसे जिएगा। कैसे जिए के बारे में परिवार के बारे में बताया। परिवार में सम्बन्धों को पहचानना होता है, मूल्यों को निर्वाह करना होता है, मूल्यांकन कर उभय तृप्ति पाना होता है। ये ध्रुविकृत हुआ – एक तरफ़ सम्बंध ध्रुव है, एक तरफ़ उभय तृप्ति ध्रुव है। ये दोनों मिलता है तो हमारा परिवार में, सम्बन्धों में व्यवहार ठीक। यदि ये दोनों चीज़ मिलते नहीं हैं, उस स्थिति में हम अभी और भी कुछ सीखना, सोचना आवश्यक है। ऐसा बना रहता है। इस विधि से पुनः समाज के पास जाते हैं, अखण्ड समाज मानव जाति एक होने के आधार पर है। मानव जाति होने के आधार पर मानव के जाति के बारे में हम निर्धारित कर पाते हैं। मानव जाति एक ही होने के रूप में हम निर्धारित करने के बाद अखण्ड समाज के ओर हमारा प्रवृत्ति हो पाता है। अनेक परिवार अनेक समुदायों के रूप में जीते हुए कौमी विधि से हम शांति पूर्वक इस धरती पर तो जिएँगे नहीं। कौमी जाति समुदाय विधि से हम इस धरती पर शांति पूर्वक जीने का कोई हक नहीं है।

ये अपने आप से हक मिट जाती है। तो हम शांति चाहते ही हैं। शांति समाधान आप चाहते हैं, हम भी चाहते हैं, सभी चाहते हैं, इसी लिए शांति समाधान मिलने के लिए सम्पूर्ण मानव को एक जाति में पहचानने की आवश्यकता और उसी के आधार पर व्यक्तित्व को निर्धारित करने के बाद, व्यक्तित्व निर्धारित करने के लिए समझदारी की बात, समझदारी के आधार पर ही व्यक्तित्व निर्धारित होगा। समझदारी के आधार पर व्यक्तित्व जब निर्धारित होगा, और हर परिवार में समाधान समृद्धि पूर्वक जीने वाली बात प्रमाणित होती है, व्यवस्था में अखण्ड समाज व्यवस्था में भागीदारी करना भी बन जाती है। ये भागीदारी के क्रम में ही हम सभी आयामों में अपने वर्चस्व को हम प्रायोजित, नियोजित करते हैं, जो मनुष्य परम्परा के लिए जरूरत है। वो है पाँचों आयाम बताया, स्वास्थ्य संयम, शिक्षा संस्कार, न्याय सुरक्षा, उत्पादन कार्य, विनिमय कोष। इन पाँचों में हम भागीदारी करने पर हमको भी संतुष्टि मिलती है और दूसरों को भी संतुष्टि मिलती है। इस ढंग की बात है।

प्रश्न : अंश वस्तु के रूप में क्या है? अंशों की प्रकृति क्या है?

उत्तर : अंशों का मतलब कुछ नहीं निकलता, परमाणु अंशों का पूछना चाहिए। परमाणु स्वयं में एक वस्तु होता है, वस्तु का मतलब है – वास्तविकता को प्रकाशित किया रहता है। वास्तविकता ये है, हर एक परमाणु व्यवस्था के रूप में है, श्रम, गति, परिणाम के रूप में व्यवस्था को अपने में सम्पूर्णता के साथ व्यक्त किए रहते हैं हर परमाणु। उसका अंश के बारे में आप पूछ रहे हैं।

तो अंश अपने में स्वतंत्र रूप में कहीं भी अस्तित्व में रहना बहुत मुश्किल है। वो कोई भी अकस्मात्³², अवांतर³³ वश, परमाणु विघटित होकर अंश के रूप में अस्तित्व में कहीं होता होगा, तो होता होगा, अन्यथा मनुष्य ही उसका मूल कारण है, अंश के रूप में परिवर्तित करने के लिए, एक मात्र मनुष्य ही है। मनुष्य यदि परमाणु के साथ अत्याचार ना करें, परमाणु अंश, अंश के रूप में अस्तित्व में मिलना होते ही नहीं है, बहुत ही कठिन और बहुत अपवाद³⁴ रूप में कहीं एकाध अंश मिलता होगा तो मिलता होगा। इस ढंग से इसको समझना चाहिए।

परमाणु अंशों में क्या विशेषता है? तो परमाणु अंश में भी सत्ता पारगामी है, सत्ता पारगामी होने की कारण से परमाणु अंश भी स्वयं स्फूर्त है व्यवस्था में भागीदारी करने के लिए। इस आधार पर एक परमाणु अंश, दूसरे परमाणु अंश को पहचानता है, ये दोनों मिल करके व्यवस्था को समीकरण कर देते हैं। व्यवस्था को समीकरण करने के क्रम में श्रम, गति, परिणाम ये तीन चीज क्रिया के रूप में व्याख्यायित होना देखा गया है।

प्रश्न : अंशों की स्थिति, गति, आचरण व अंशों का स्रोत क्या है?

उत्तर : अंशों का स्रोत कुछ नहीं होता है, परमाणु ही विघटित हो करके अंशों के रूप में होना पाया जाता है। अंशों का कोई स्रोत नहीं होता है, कि अंश बनता हो, कोई विज्ञानी बनाता हो, कोई बेवकूफ बनाता हो, पंडित बनाता हो, ऐसा कोई चीज नहीं है। परमाणु ही विघटित हो करके अंशों के रूप में कहीं हो सकता है, दूसरा कोई विधि इसकी है

³² अकस्मात् : परिस्थितिवश, संयोग से; suddenly

³³ अवांतर : मध्यवर्ती, बीच का, गौण; interval

³⁴ अपवाद : बदनामी, लांघन; exception

ही नहीं। परमाणु अंश अपने आप में कोई तैयार होने वाली बात नहीं है। यदि परमाणु अंश विखंडित होता है, मनुष्य के प्रयास से, दूसरे के प्रयास से तो होता नहीं है, वो परमाणु, विखंडित परमाणु अंश भी, अनेक खंड में विघटित यदि हम मनुष्य करते हैं, पुनः वो एक संगठित हो करके परमाणु अंश के रूप में आ ही जाता है। वो स्वाभाविक है, उसमें घूर्णन गति होती है, उस घूर्णन गति में ये प्रवृत्ति समायी रहती है, परमाणु के रूप में भागीदारी करने का, उसके लिए एक से अधिक परमाणु अंशों को पहचानना का जरूरत रहता है, ऐसा संयोग पा कर के परमाणु में भागीदार करने के लिए प्रवृत्त हो जाता है। वो किसी ना किसी परमाणु में घुस जाता है, या एक से अधिक यदि परमाणु अंश मिलते हैं, परमाणु के रूप में गठित हो जाते हैं। इस ढंग की काम है।

प्रश्न : अंशों के परमाणु के रूप में गठन का प्रयोजन, प्रक्रिया और प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले तथ्यों के बारे में स्पष्ट करें।

उत्तर : प्रयोजन व्यवस्था में होना। व्यवस्था के रूप में प्रवृत्ति रहती है। एक से अधिक परमाणुएं एकत्रित हो करके व्यवस्था को प्रमाणित करते हैं। हर एक परमाणुएं श्रम, गति, परिणाम के रूप में क्रियाशील रहते हैं। अपने में सम्पूर्ण हैं, उसका आचरण निश्चित रहता है, दो अंश की परमाणु का आचरण निश्चित रहता है, जबकि आदमी का आचरण अभी निश्चित नहीं हुआ है।

प्रश्न : केन्द्र में एवं परिवेशों में निश्चित संख्या का आधार क्या है?

उत्तर : निश्चित संख्या का आधार यही है, परमाणु विकसित होने के आधार है। विकसित होने के आधार में क्या होती है, पहले बाह्य परिवेश में परमाणु अंश बढ़ता है, बढ़ करके वो उसके आगे की परिवेश में जाता है, उसके आगे की परिवेश में जाता है। इसमें एक परिवेश ही नहीं है, एक से अधिक परिवेश भी होते हैं, किसी-किसी परमाणु में, किसी परमाणु में एक ही परिवेश होता है। एक परिवेश जब तृप्त हो जाता है, उसके बाद दूसरा परिवेश शुरू हो जाता है। इस ढंग से विकास की स्थितियाँ हैं ये। परमाणु अंश जैसे-जैसे बढ़ते हैं, उस को विकसित परमाणु माना जाता है और उस में स्थिरता और बढ़ जाती है, उसमें भार बढ़ जाती है। इस ढंग से होते-होते ये धरती जैसी इकाई बनने के लिए आधार बन जाता है। धरती जैसा आधार बनने के पश्चात इसमें बाकी विकास होने की संभावना उदय हो जाता है। जैसा प्राणावस्था इससे आगे की विकास है पदार्थावस्था से और उसके आगे की विकास है जीवावस्था, उसके आगे की विकास है ज्ञानावस्था। इस प्रकार से विकसित होने की सम्भावना बनती है।

प्रश्न : केन्द्र में अंशों और परिवेशों में अंशों का आचरण और परस्पर प्रभाव की व्याख्या?

उत्तर : केन्द्र के जो अंश होते हैं, वो मध्यस्थ क्रिया करती रहती है। परिवेशों में जो रहते हैं, सम, विषम कार्यों को करते रहते हैं। जब कभी भी मध्यांश से निश्चित दूरी से अधिक दूर भागने की स्थिति में मध्यस्थ क्रिया अपने प्रभाव को डाल करके पास में बुलाता है और वो ही चीज़ यदि पास में आ जाता है, अपनी निश्चित अच्छी दूरी से, यदि पास में आने की स्थिति में, वो ही मध्यस्थ क्रिया प्रभाव डाल करके, उसको निश्चित अच्छे दूरी में स्थित कर देता है। इस ढंग से व्यवस्था को संतुलित बनाए रखने में मध्यस्थ क्रिया अर्थात् नाभिकीय अंश जितने भी रहते हैं, वो सब

के सब काम किए करते हैं। नाभिकीय अंशों का जहाँ तक बात है, परिवेश में जितना अंश होता है, उतना ही होते हैं, किसी-किसी परमाणु में अधिक भी होते हैं।

प्रश्न : कम और अधिक का आधार क्या है ?

उत्तर : कम और अधिक का आधार है जो अंशों का जो अपनाने की आधार पर है वो। परमाणु जो है ना भूखे परमाणु और अजीर्ण परमाणु बताया है। भूखे परमाणु अंशों को अपनाने में लगे रहते हैं, लगते समय में मिल गया तो दो तीन ज्यादा भी ले लिया। इस ढंग से काम है ये।

प्रश्न : केन्द्र के अंशों का सभी अंशों के आवेशों को स्वाभाविक गति में लाने का कार्य किस प्रकार संपादित होता है ?

उत्तर : मध्यस्थ बल का प्रयोग से ये स्वाभाव गति में आते हैं। उसके आवेश यही दो ही बताया आपको – दूर भागना और पास में आना। इसको निश्चित अच्छी दूरी में प्रवर्तित बनाए रखना ये मध्यस्थ क्रिया का प्रयोजन है। ये इसके अपने प्रभाव को डालता है, वो निश्चित अच्छी दूरी में आप स्वयं ही पदस्थ हो जाते हैं।

मध्यस्थ बल का मतलब ये है – सम, विषम आवेशों को सामान्य बनाने की प्रक्रिया, समावेश होने से, विषमावेश होने से। जब कभी भी सम आवेश होता है, तो वो जो पास में आ जाता है, प्यार से, सारे अंश। तब वो ज्यादा प्यार होना भी ठीक नहीं है, उसको निश्चित अच्छी दूरी में पदस्थ करता है। कभी-कभी रूठ करके, थोड़ा सा मुरझा करके दूर भागने लगते हैं, पुचकार करके पास में बुला देते हैं।

प्रश्न : ये रूठते और प्यार क्यों करते हैं ज्यादा ?

उत्तर : इसीलिए प्यार करते हैं, ये परिवेशों की आधार है इसका – परिवेशीय दबाव। अकेले परमाणु तो हैं ही नहीं सह अस्तित्व में, बताया गया अनंत परमाणुओं के बीच में एक परमाणु काम करता रहता है, इन अनन्त परमाणुओं का दबाव किसी एक परमाणु के ऊपर अधिक आने से वो केन्द्रीय अंशों के पास में पहुँच जाते हैं। उसी में यदि परिवेशीय अंशों का यदि आकर्षण बढ़ जाती है, दूर भागना चाहेंगे, इस ढंग से होकर दूर भागता रहता है तभी भी मध्यस्थ बल जो है उसको पास में बुला करके अवस्थित कर लेता है, यदि मध्यस्थ क्रिया के पास में आने की स्थिति में उसको निश्चित अच्छी दूरी में व्यवस्थित कर अपने में सुरक्षित हो जाता है।

प्रश्न : क्या नाभिक में अंशों का होना ही मध्यस्थ क्रिया कहलाया ?

उत्तर : मध्यस्थ क्रिया कहलाया, उसमें मध्यस्थ बल, मध्यस्थ शक्ति दोनों समाहित रहते हैं। वो शक्ति का प्रयोग तभी होता है जब अतिवाद में आते हैं परिवेशीय अंश। अतिवाद का दो ही भाव होता है उसमें – एक पास में आना, एक दूर भागना। इतने ही होता है। तीसरा प्रकार का कुछ भी उत्पात नहीं होता है।

प्रश्न : किसी गठनशील परमाणु में अधिकतम कितने अंश हो सकते हैं ?

उत्तर : गठनशील परमाणु में अजीर्ण परमाणु में ज्यादा परमाणु अंश होते हैं, भूखे परमाणु में कम होते ही हैं। परमाणुओं के बड़ी विलक्षण³⁵ तरीके की इसका रचना भी है, तो एक ही प्रजाति की परमाणु, दो तीन प्रकार से प्रस्तुत हो जाते हैं, जैसा दो परिवेश में 200 अंश काम कर रहे हैं, मध्य में 200 से अधिक ही अंश हो जाते हैं। इस ढंग से 400 हो जाते हैं। वही चीज़ यदि तीन परिवेश में हो जाते हैं, चार परिवेश में हो जाते हैं, ये भी होते हैं, दो ही परिवेश में बहुत सारे परमाणु अंश भी होते हैं।

प्रश्न : परिवेश में अंशों की संख्या तो निश्चित है ना बाबाजी - 2, 8, 18, 32 ?

उत्तर : वो तो दूसरी बात है वो, तृप्त परमाणु की बात है वो। वो कहाँ से लाओगे, सब जगह में वो कहाँ से आने वाला है? गठनशील में दो परिवेश भी होता है, चार परिवेश भी होता है, छः परिवेश भी होता है।

प्रश्न : परिवेश में अंशों की संख्या निश्चित नहीं हैं?

उत्तर : उसमें घटता बढ़ता रहता है ये निश्चित है, इसलिए जब कार्य करते समय में निश्चित संख्या में ही रहते हैं, उसका आचरण निश्चित होने के अर्थ बनता है। इसका मतलब है, निश्चित आचरण करता रहता है, वो बदलता नहीं है, ऐसा बात नहीं है। वो बदल जाता है तो दूसरा प्रजाति होता है, वो आचरण ही वो करेगा। ये भी निश्चित है।

प्रश्न : विज्ञान के अवधारणा के अनुसार तो जो orbits हैं, इनमें अंशों की maximum संख्या निश्चित है, 2, 8, 18, 32 क्रम से, जैसे बाबाजी ने कहा की दूसरे, तीसरे परिवेश में अंशों की संख्या 200 भी हो सकती है?

उत्तर : जो परिवेशों में, दो परिवेश का भी परमाणु हो सकता है, चार परिवेश का भी हो सकता है, पाँच का भी हो सकता है, छः का भी हो सकता है - ये बताया। ये ठीक है? इसमें एक परिवेशों में 200 अंश भी हो सकते हैं, उससे ज्यादा भी हो सकते हैं। ये जितने भी अंश परिवेशों में काम करते हैं, उतने ही अंश या उससे अधिक अंश मध्य में हो जाते हैं, उससे कम नहीं होते हैं।

प्रश्न : प्रथम परिवेश में अधिकतम संख्या दो हो सकती है, विज्ञान के अनुसार, दूसरे में 8, 18, 32 ?

उत्तर : ऐसा कुछ नहीं हैं, प्रथम परिवेश में जो तृप्त परमाणु जो होता है, या तृप्त परमाणु भले ना हो, जो अतृप्त रहा हो, ऐसा भी हो सकता है उसमें, तृप्त परमाणु में मध्य में एक ही अंश होता है। वो जीवन परमाणु होता है। मध्य में यदि परिवेश के समान यदि अंश हो जाते हैं, तब वो जीवन परमाणु नहीं होता है, भौतिक परमाणु ही होता है। अच्छा ऐसे परमाणु में भी, हो सकता है ऐसा कोई प्रजाति, यदि दो ही अंश पहले परिवेश में होना है, तब तो उसमें मध्य में एक ही होना आवश्यक बनता है।

³⁵ विलक्षण: लक्षणरहित, अनियमित, अनिश्चित, अनोखा, विचित्र; singular, eccentric

प्रश्न : विज्ञान के हिसाब से केन्द्रों में तो उतने ही अंश होते हैं, जितना सारे परिवेश से मिलाकर होते हैं, या उससे कम या ज्यादा, दोनों हो सकते हैं। प्रथम परिवेश में दो हो सकते हैं, दूसरे में अधिकतम 8 हो सकते हैं, तीसरे परिवेश में 18 हो सकते हैं, चौथे में 32 हो सकते हैं। ऐसा $2n^2$ हिसाब से चलते हैं।

उत्तर : वो किसी एक प्रजाति के परमाणु हुआ ना।

प्रश्न : सभी प्रजाति के परमाणुओं में ऐसा ही होता है, इसमें ज्यादा नहीं होना चाहिए, उससे कम हो सकते हैं। ऐसा हो सकता है, कि तीसरा परिवेश में पूरा नहीं हुआ, उसके बाद भी चौथा परिवेश शुरू हो गया।

उत्तर : ठीक हैं, इससे ज्यादा होने से तो आजीर्ण परमाणु हो जाते हैं ना, इससे कम होने से भूखे हो गये।

प्रश्न : विज्ञान के हिसाब से अजीर्ण में भी संख्या का क्रम चलता ही है, उससे ज्यादा नहीं हो सकते, लेकिन जो उसमें अंशों की स्थिति होती है, वो इतना loose होता है कि वो निकलकर बाहर जाते रहते हैं।

उत्तर : ठीक है न, बाहर निकलने का तो आखिरी orbit ही आती है, वो ठीक है। परमाणु अंशों की संख्या सभी orbit में जितना होता है, उसके समान में या उससे अधिक बीच में होना ये हर भौतिक परमाणुओं का ये स्वाभाविक बात है। इसमें तो कोई शंका नहीं है, अब रह गया हर प्रजाति की परमाणु में, दो अंश रहता है तो कहाँ रहता है ये परमाणु? कैसे लाओगे, दो ही अंशों का जो परमाणु है फिर कहाँ से लाओगे? तो फिर ये 2, 8, 18, 32 सिद्धांत कहाँ गया?

प्रश्न : प्रथम परिवेश में दो से ज्यादा नहीं हो सकते, दो से कम तो हो सकते हैं।

उत्तर : ऐसा उनका सोचना है। हमारा सोचना ऐसा है, अजीर्ण परमाणु में अधिक होते ही हैं, सभी परिवेशों में अधिक होते ही हैं। भूखे परमाणु में कम होते ही हैं, भूखे परमाणु का मतलब ही होता है, कम होना।

प्रश्न : अजीर्ण का जो आखिरी परिवेश है, उसमें अंश इतने कम होते हैं कि उस आखिरी परिवेश को बनाए रखना मुश्किल होता है। कम या अधिक जो भी होते हैं, आखरी का orbit में रहते हैं, उसके पहले के orbit पूरे हो जाते हैं।

उत्तर : ठीक है, इसको ऐसे मान लेते हैं। इसका मतलब है, 61 अंश से ज्यादा नहीं होना चाहिए।

प्रश्न : उससे ज्यादा हो सकते हैं, orbit की संख्या बढ़ सकती है।

उत्तर : जितना orbit बढ़ता है, उतना ज्यादा अजीर्ण होता है। जैसा भी हम orbits बढ़ाने जाते हैं, मध्यांश उसको manage करने में असमर्थ होता जाता है। उसको manage करना तकलीफ जाता है, वातावरण का दबाव बढ़ जाता है, ये बिखर जाता है, कुछ भी हो करके परिणाम घटित हो जाता है। इस ढंग से परमाणुओं के जो अंशों की संख्या के बारे में बहुत ज्यादा अपन निर्भर करने लगे, इतने ही संख्या में रहेगा ऐसा कोई जरूरी नहीं हैं। अधिकतम, न्यूनतम – न्यूनतम तो अपने को पता लगता ही है, कम से कम दो होना, ये तो पता लगता है। अधिकतम होने के

लिए पुनः जो एक सौ बीसवे परमाणु में माने - भूखे परमाणु 60, अजीर्ण परमाणु 60, एक सौ बीसवे परमाणु में कितने orbits हो जाएंगे, कब वो कितना loose हो जाएगा, कितने क्षण में वो होगा, कितने काल में होगा, ये सब सोचने की मुद्दा बनता है।

प्रश्न : वो भी बाबा जी अगर चार परिवेश मान रहे हैं तब, अगर चार परिवेश हैं तो, पाँचवा परिवेश हो गया तो और बढ़ गया वो।

उत्तर : हाँ वही तो बोला, जबकि जीवन परमाणु में चार परिवेश होता ही है। उसी में पूरा का पूरा विधि बनता है, बीच में एक होने से, प्रथम परिवेश में दो होने से, द्वितीय परिवेश में आठ होने से, तीसरे परिवेश में 18 होने से और 32 होने से, ये पूरा 61 क्रियाएँ हुईं। इन 61 क्रियाएँ परावर्तन प्रत्यावर्तन पूर्वक 122 क्रियाएँ हुईं, इसको हम count कर लिया हमारे जीवन में।

प्रश्न : तो जीवन के बारे में तो आपका confirmation है, लेकिन गठनशील परमाणु के प्रथम, द्वितीय जो परिवेश हैं, उसमें संख्या के बारे में वैज्ञानिक और आपके मत में ये difference है कि आपका कहना है कि उसमें 200 भी हो सकते हैं।

उत्तर : हाँ होते ही हैं, 200 अंश नहीं होते हैं आपके अनुसार? दो परिवेश ही समझ लो, चार ही होता है क्या? वो कोई ना कोई संख्या में सीमित होगा कि नहीं होगा? तो उसी प्रकार चलते-चलते ये 100 भी होते हैं, 200 भी होते हैं, 400 भी होते हैं, अजीर्ण बनने के लिए ये जितना ज्यादा से ज्यादा हो सकता है, होते जाते हैं, वो टूटते भी जाते हैं। ज्यादा अंश बढ़ते-बढ़ते एक स्थिति में वो टूटने की जगह में भी आते हैं। तो उसके बारे में बताया, मध्यांश की- जो इन सारे आश्रित³⁶ अंशों को एक अपने निश्चित अच्छी दूरी में अवस्थित करने की कार्य करते-करते वो कहीं भी यदि loss हो जाते है, माने कर नहीं पाता है, उस जगह में अब परमाणु अंश बिखर करके अलग हो जाते हैं। वो दूसरा कोई प्रजाति के परमाणु ही बनाते हैं, या दूसरे कोई परमाणु में घुस जाते हैं,

दो में एक होते रहते हैं। इस ढंग से परमाणु अंशों का स्वतंत्र रूप में कहीं भी बहुत ज्यादा समय तक स्थिर रहना पता नहीं लगता। इस ढंग से कहाँ पहुँचे अपन, तो जो आप लोग जो परमाणु अंशों के बारे में, जितने भी गठनशील परमाणु में, अजीर्ण और भूखे परमाणु को पहचाने होंगे, बहुत अच्छी बात है। उसमें से अंशों का स्थिरता - अजीर्ण परमाणु में जल्दी बदलती रहती है, जितना जल्दी उसमें बदलता है, उसी प्रकार से दूसरा प्रजाति के परमाणुएँ बनते रहते हैं, और दूसरे प्रजाति के परमाणुएँ बनते-बनते परमाणुओं की संख्या बदलती रहती है, घटती रहती है, बढ़ती रहती है, अंशों की संख्या। ये ही ना बात होती है। इतना पर्याप्त है कि नहीं है?

प्रश्न : विज्ञान अंशों के रूप में नहीं देखता, आवेशों के रूप में देखता है। और वो विपरीत आवेश के रूप में देखता है, केन्द्र में धनात्मक और परिवेशों में ऋणात्मक, उनके प्रकार अलग-अलग हैं।

³⁶ आश्रित: टिका हुआ, सहारा दिया हुआ; dependent, subordinate

उत्तर : गति को हम यदि आवेश माने, हमारे अनुसार हम जो देखा हूँ, उसके अनुसार आवेशित गति, स्वभाव गति ये दोनों है। स्वभाव गति में आचरण निश्चित है। आवेशित गति में आचरण निश्चित नहीं है। कोई भी परमाणु, जीवन ही आवेशित होता है मान लो, और जीवन आवेशित होने पर जीवन का आचरण निश्चित नहीं है, क्या आचरण कर डालेगा। उसी भाँति यदि भौतिक परमाणुएँ यदि आवेशित रहते हैं, उनका निश्चित आचरण नहीं होना चाहिए।

प्रश्न : positive charge & negative charge - particle के रूप में देखते हैं वो परमाणुओं के अंशों को, उसका देखना आवश्यक नहीं है। charge के रूप में अध्ययन तो करते नहीं, अध्ययन हमेशा प्रभाव के रूप में करते हैं। प्रभाव को अंशों के आधार पर भी अच्छी तरह से explain किया जा सकता है।

उत्तर : प्रभाव जो है ना परमाणु के सभी ओर डली रहती है। प्रभाव क्षेत्र परमाणु के जो मात्रा रहती है, उससे बाहर में भी फैली रहती है, हर इकाई का प्रभाव। ठीक है। तो इन प्रभाव, जो फैला रहना स्वाभाविक बात है ये, इसमें तो स्वभाव गति विधि से आगे की विकास व आचरण की निश्चयता दोनों बना रहता है। विकास की संभावना, आचरण की निश्चयता, दोनों एक साथ बनी रहती है हर एक स्थिति में। इसी आधार पर अस्तित्व में अवस्थाएँ चार अवस्था में हो चुके हैं। इसका गवाही ये ही है। चारों अवस्था में यदि मूल में देखेंगे तो परमाणु ही है। मूल में यदि देखा जाए तो परमाणु ही है और दूसरा कोई चीज़ है ही नहीं है।

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 07, time 00:00-03:24](#)

प्रश्न : विज्ञान ने जब उसका अध्ययन करने गये तो अंशों को परमाणु से हटा के या कोई अंश को परमाणु में प्रवेश करा के, उसका जो प्रभाव पड़ता है, उसका अध्ययन किया है। उसके अध्ययन के आधार पर आवेश charge, positive या negative charge, चार अलग-अलग प्रकार के हैं ऐसा प्रतिपादित करने का प्रयास किया है।

उत्तर : वो ठीक किया होगा, वो भाग में हमारा कुछ कहना नहीं है। आवेश होता है तो आचरण निश्चित नहीं होगा। आचरण निश्चित होगा, यदि निश्चित मानते हैं आप, दस अंशों की परमाणु का आचरण निश्चित यदि मानते हैं, वो स्वभाव गति में ही होगा।

प्रश्न : विज्ञान के आधार पर जो charge explain करना चाहते हैं, ऐसा explain करना आवश्यक नहीं है। अंशों के आधार पर इन सारे, जो भी घटना घट रही है, प्रभाव, आचरण को explain किया जा सकता है, अंशों के आधार पर ही। charge को लाने की जरूरत नहीं।

उत्तर : देखो charge को आप लाना चाहते हैं। आप विदेशी शक्ति को impose किए बिना charge आपको पता लगेगा नहीं। आवेशित किए बिना आपको charge पता लगने वाला नहीं है। मनुष्य जब अँगुली किए बिना, मनुष्य हस्तक्षेप किए बिना, विकृत बनाए बिना परमाणुओं को नापना संभव नहीं है। परमाणुओं का गति, परमाणुओं का nature को explain करना इतना संभव नहीं है। उसको ऐसे ही माना जाए - ज्यादा सुखद, सुन्दर और शुभदायक हमको लगता है, जैसा है। क्या है? मूल में परमाणु है ये ज्ञान हो गया। विज्ञानियों को हो गया, अज्ञानियों

को भी समझा ले गये, ये बात बहुत अच्छा काम हुआ। काहे के लिए अच्छा काम हुआ ? जीवन को एक परमाणु के रूप में स्वीकारने में सहायक हो गया। इसके लिए ये मदद हो गया। और कोई मदद हुआ है, ऐसा कुछ नहीं है।

और कोई मदद के लिए तो यही- परमाणु bomb बनायेंगे, ये बनायेंगे, वो बनायेंगे, ये मनुष्य का सहायक वस्तु नहीं है। सबसे बड़ी सहायक वस्तु ये हुई, इतना दिन परमाणु-परमाणु का चिल्लाने से अज्ञानी, ज्ञानी, विज्ञानी सब को परमाणु की स्वीकृति हो गई है। इतनी ही सुगमता हुई। जीवन को परमाणु के रूप में कहने से irritation नहीं हुआ। ये जो mass basis पर मैंने कहा। वास्तविक रूप में क्या है - परमाणु होते ही हैं, वो स्वीकारना ही पड़ेगा। ये बात यहाँ तक तो शुभद हो गया।

15. परमाणु - 2 (आचरण)

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 7, time 03:25-20:48](#)

अब आगे की जो बात है, किसी परमाणु को आवेशित कराने की बात आती है। आवेश को नापने की बात आती है, नापने की बात के लिए, हम कोई आवेश करने वाली चीज़ को प्रयोग किए बिना आवेश को नाप नहीं पायेंगे। आवेशित करा करके हम आवेश को नापते हैं। इसमें reality क्या हुई, सच्चाई क्या हुआ? वास्तविकता कहाँ पता लगा। हम स्वयं हस्तक्षेप करके।

प्रश्न : निश्चितता तो पकड़ में नहीं आती है, आवेशित करा के अध्ययन करेंगे, तो आवेशित गति में ही करेंगे।

उत्तर : उसका reality कहाँ से हमको पता लगा, इसलिए हम गुमराह हो जाते हैं शायद, उसको आप लोग अच्छी ढंग से समझते हो।

प्रश्न : हस्तक्षेप करके उसका अध्ययन करते हैं क्या हस्तक्षेप हो गया, तो हस्तक्षेप का अध्ययन हो पाएगा, जबकि परमाणु का अध्ययन नहीं हो पाएगा।

उत्तर : हाँ बस ऐसा ही तो हो गया।

प्रश्न : प्रथम परिवेश से प्रारम्भ करके, द्वितीय, तृतीय परिवेश में संख्याओं की कोई निश्चितता होती है या नहीं, अधिकतम संख्या कितना है?

उत्तर : इसमें हमारा कहना है, कितने भी संख्या की जो परिवेशों में जितने भी संख्या होती है, उतना ही संख्या या उतने के थोड़ा सा ज्यादा कम वाला केन्द्र में जो अंश होते हैं, उसके साथ-साथ एक आचरण निश्चित है। वो आचरण बदलता नहीं, उतना संख्या में। संख्या बढ़कर के उस संख्या में आँवें, तो भी वही आचरण करेगा। संख्या घटकर के उस संख्या में आएगा, तभी भी वही आचरण करेगा।

प्रश्न : निश्चित व्यवस्था अगर बन गई अंशों की, तो उसका एक निश्चित आचरण होगा।

उत्तर : हाँ बस इतना ही। ये तो बात हो गई। अब ये कैसा? स्वभाव गति की प्रतिष्ठा है ये। स्वभाव गति प्रतिष्ठा आचरण की स्थिरता है, ये स्वभावगति प्रतिष्ठा में ही मानव भी अपना स्वभाव गति माने आचरण को, निश्चित आचरण को देगा। नहीं तो आदमी निश्चित आचरण को देने वाला नहीं है, जब की जड़ परमाणु में निश्चित आचरण होता है। यद्यपि प्राणकोशाएँ परमाणु के रूप में काम नहीं करते हैं, अनेक परमाणुएँ उसमें होते ही हैं, प्राणकोशाओं के आचरण निश्चित हैं। उसका रचना विधि उसमें लिखा रहता है, जैसा अपने को कहते हैं ना कि तुम्हारा तकदीर में लिखा हुआ है, वो प्राणसूत्रों में उसका तकदीर लिखा रहता है। वो प्राण सूत्र में रचना विधि उसमें उभरा ही रहता है। वो ही रचना करेगा वो, दूसरा नहीं करेगा। कितना स्थिर आचरण है, आप सोच लो।

और उसके बाद आया वंश के अनुसार हर जीव अपना आचरण को करते ही हैं। तो मनुष्य ही बना हुआ है अभी cartoon, क्या आचरण कर देगा! कहाँ से इसको निश्चय करोगे, इस ढंग से बना। और ये निश्चित आचरण नहीं हो सकता है, इस बात को प्रतिपादन करने के लिए, सबको अस्थिर, अनिश्चय बताना शुरू किया। उल्टा टोपी, ये कहना शुरू किया साहब! और खोपड़ी को उल्टा किया तो ऐसा होने लगा। जबकि है ही ऐसा, हर एक परमाणु अपने निश्चित आचरण सहित है, स्वभाव गति में। यदि आवेशित गति हो तो उसका आचरण निश्चित नहीं रहता है। आवेशित किए बिना परमाणु का आचरण को हम देख नहीं पाते हैं। उसके बाद कहते हैं हम पंडित हो गए! अब क्या किया जाए, आप बताओ? तो वस्तुएँ हैं, निश्चित है, हमको दिखता है, हमको समझ में आता है। ये परमाणुओं का आचरण निश्चित है, इसीलिए वस्तुएँ अपने आचरण को बनाए रखें हैं। इतना पर्याप्त नहीं है क्या? लोहे का परमाणु निश्चित है, इसीलिए लोहे के पिण्ड का आचरण निश्चित है। इतना पर्याप्त नहीं है?

प्रश्न : हर orbit में जो अंशों का अधिकतम संख्या है, वो बाबाजी ,आपके अनुसार, निश्चित है या नहीं है, ये तय नहीं हुआ है अभी।

उत्तर : हर एक परमाणु में निश्चित संख्या होते ही हैं।

प्रश्न : नहीं, निश्चित संख्या होते ही बाबा पर जैसे एक परमाणु में मान लीजिए पाँच orbit हैं, तो पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे orbit में कोई maximum संख्या निर्धारित है कि नहीं?

उत्तर : व्यवस्था में ये है महाराज जी, जैसा 200 अंशों से पाँच orbit बनी हैं, मान लो, या तीन orbit बना है, या चार orbit बना है, कुछ भी बना है। उसमें क्या हुआ रहता है, चार orbit होने की स्थिति में संख्याएँ भिन्न होते हैं, और तीन orbit होने में और कुछ होते हैं, पाँच orbit होने में और कुछ हो जाते हैं, 200 अंश के परमाणु बनते ही हैं। orbit यदि स्थिर हो जाता है, तभी भी उसका आचरण स्थिर है। इसमें ये भी आप consider करके रखिए, यदि एक परमाणु में तीन orbit है, उसमें 200 अंश हैं, समझ लो, उसका आचरण निश्चित है। चार हैं, 200 हैं, तभी भी उसका आचरण निश्चित है।

प्रश्न : वैज्ञानिकों के अनुसार $2n^2$ के अनुपात में ही orbit में परमाणु अंश होते हैं।आपके हिसाब से ऐसा नहीं है, अधिकतम तय है, प्रथम orbit में 2 दूसरे में 8, तीसरे में 18, चौथे में 32। 200 अंशों के परमाणु में पाँचवें में 50, छठवें में 72 ऐसे orbit की संख्या बढ़ती जाती है।

उत्तर : आप लोगों का कहना ये हुआ, आपके जो measurement के अनुसार, आप लोग अभी तक ज्ञानार्जन किए हैं उसके अनुसार, orbits में जो कुछ भी शुरूआत है, पहला orbit, वो हर एक प्रजाति के अंश में वो 2 ही होता है (2 या 2 से कम, अधिकतम 2)। इस प्रकार से आप गिने हो। ठीक है, यदि ये निश्चित हो गयी है, इसमें क्या अपत्ति है? प्रस्थापन, विस्थापन की जो बात है, वो आपको पकड़ में आया है कि नहीं? प्रस्थापन में कोई अंश आकर के उसमें जुड़ने की जरूरत है, विस्थापन में कोई अंश अपने में से टूट कर के बाहर होने की आवश्यकता है। तो उसमें क्या आप लोगों का सोचना, जब टूटता है, उसके बाद उस परमाणु में परिवर्ती जो आचरण आता है, वो स्वयं में आश्वस्त होता है ये मानते हो कि आवेशित होता है ये मानते हैं? [आश्वस्त होता है] वो एक अपने आचरण

में वो आश्वस्त हो जाता है, अपने ढंग की। [एक निश्चित तरह का परमाणु बना जाता है] वो ठीक है, ये भी ठीक हो गई। अब जो जिसमें प्रवेश होता है उसको आप क्या मानते हैं, आवेशित होता है मानते हैं? [वो भी स्वभाव गति में ही आता है। लेकिन अगर वो इस में शामिल नहीं होता है और अंश रूप में पड़ा होता है, तब तक वो आवेशित होता है।] वो तो आवेश के बिना रह ही नहीं सकते [और उस आवेशित स्थिति में ही जो तोड़-फोड़ जितना होता है उसका आधार वही आवेशित अंश।] आवेश का मतलब ही है तोड़-फोड़। आदमी भी वैसे ही तो करता है – जो पागल होने के बाद तोड़-फोड़ करता ही है। इसको ऐसा माना जाए। परिवेश और अंश के बारे में ये निर्धारण हो चुकी है, आप observe किए हैं, उसमें हमारा कोई अपत्ति नहीं, हम उसको मानने के लिए तैयार हैं। [निष्कर्ष ये है कि परिवेश की संख्या कितने भी हो सकती हैं।]

प्रश्न : क्या सभी अंश एक ही जैसे होते हैं?

उत्तर : हाँ अंश एक ही प्रकार के होते हैं सभी।

प्रश्न : अभी अलग माना जाता है, positive, negative, neutral तीन प्रकार के अंश तो मानते ही हैं, अंश बोला जाए या आवेश बोला जाए।

उत्तर : देखो जगह के आधार पर आप नाम देते हो तो उससे हमारा कोई लेन-देन नहीं है। जगह के आधार पर, जैसे प्रथम परिवेश है, मध्यांश है। मध्यांश का तो अलग नाम तो हम भी देते हैं, आप भी देते हैं।

प्रश्न : बाबा science के अनुसार नाभिक में 2 प्रकार के अंश रहते हैं, proton और neutron, यदि स्थान के आधार पर बोलेगें तो, आवेश के साथ, charge का, बिना charge के ऐसा एक concept उन्होंने बनाया है। वो तो समझ में आता है वो manage ही नहीं कर पा रहे हैं इस concept को, ये जो neutron और proton का जो concept है, उसमें ये होता है कि जितने अंश हैं मध्य में उसको अगर charge कहेंगे तो manage नहीं हो पाता, तो फिर कहते हैं कुछ charge हैं कुछ बिना charge के हैं। और जो mathematical जो model बनाते हैं तो संख्या, atomic number जो set करना पड़ता है, जो weight set करना पड़ता है उसके हिसाब से neutron को बढ़ाते-घटाते रहते हैं। अच्छा उसमें दूसरी बात ये भी है अगर positive और negative को देखते हैं तो परमाणु हमेशा आवेशित गति में रहेगा फिर, क्योंकि या तो अजीर्ण रहता है या फिर भूखा रहता है।

उत्तर : भूखा रहना और आगे अंशों को बढ़ाने की अवसर की बात है। अजीर्ण का मतलब है, परमाणु अपने अंशों को घटाने की प्रवृत्ति की बात है। ये दोनों को ऐसा हम अध्ययन कर सकते हैं। ये दोनों को भाषा इस प्रकार से हम दिए, बीच में तृप्त परमाणु के अपेक्षा में ही अजीर्ण और भूखे की नाम आता है। उस आधार पर उसका नाम रखा, नाम तो आप भी कई ठो रखे हो, वो किस अर्थ में रखे हो, वो पता लगने पर सोचा जाए। मध्य में अंश होते हैं, उसका आप एक नाम रखते ही हो, हम भी एक नाम तो रखते ही हैं, स्वाभाविक है। परिवेश में अंश होते हैं, हर एक परिवेश के अलग-अलग आप नाम रखे होंगे। हम तो परिवेशीय अंश ही कहते हैं, प्रथम परिवेश, द्वितीय परिवेश, तृतीय

परिवेश ऐसा हम कह देते हैं। इसमें हम समझता हूँ, ये नाम रखना कितना ज़रूरी है, ज़रूरी नहीं है, आप लोग consider करेंगे उसको।

प्रश्न : विज्ञान में नाम के अलावा, अंशों की प्रकृति भी अलग-अलग होती है, ऐसा बताया गया है, जैसे electron, proton, neutron। एक positive charge रहता है, एक negative charge रहता है अंश और एक neutral charge।

उत्तर : neutral charge तो मध्य में ही होता है। तो जो कुछ भी तुम positive, negative कहते हो, उसका meaning क्या कहते हो? परमाणु में positive, negative का कहने का मतलब हमारा ये है – मध्यांश के पास दौड़ना, मध्यांश से दूर होना, ये दो action में हम positive, negative बताते हैं। आपका आशय दूसरा होगा, उसको स्पष्ट करो।

प्रश्न : केन्द्र में जो रहते हैं, उसमें 2 तरह के अंश रहते हैं – एक positive charge रहता है और एक neutral charge रहता है और जो परिवेशीय अंश में रहते हैं, उसमें केवल negative charge के अंश रहते हैं – ऐसा विज्ञान बोलता है। और उनमें भार नहीं होता।

उत्तर : परिवेशीय अंशों में भार नहीं होता, वो ठीक है। वो भाग ठीक है। जो भार जो है, मध्य में जो अंश रहते हैं, उसी का भार मिलता है। जो कुछ भी परमाणु में भार है, पिंड में भार है, वो भार मध्य में जो रहता है, उन्हीं अंशों का भार है।

लेन-देन के समय में negative positive होता होगा, बाकि समय में neutral रहता ही होगा।

हमारे अनुसार मध्यांश के पास दौड़ने पर कोई नाम दिया जा सकता है, मध्यांश से दूर भागने पर उसको एक नाम दिया जा सकता है। कुछ भी आप नाम रख लिए, हम सम, विषम का जो नाम दिया है, वो इसी आधार पर दिया है। परमाणु के मध्यांश में, मध्यांश के पास में यदि आश्रित अंश, माने की orbital motion जितना भी रहता है, वो यदि पास में आने लगते हैं, मध्यांश उनको अच्छी दूरी में प्रतिष्ठित करता है। वही चीज़ दूर भागने लगते हैं, तो भी अच्छी दूरी में बुला कर बैठा लेता है। इस ढंग से परमाणु अपने में निश्चित कार्यक्रम करता ही रहता है।

16. परमाणु - 3 (मध्यस्थ बल व प्रजाति)

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 6, time 10:18-33:52](#)

परमाणु व्यवस्था में, जिस-जिस प्रकार का कार्य विन्यास करना है, वो परमाणु में निहित है, पहले इस सिद्धांत को समझो। एक तो बात समझो कि परमाणु ऊर्जा सम्पन्न है, आपके अनुसार कुछ नहीं है। एक तो झंझट पट जाती है ये हमारे अनुसार।

प्रश्न : नहीं बाबा ऐसा नहीं है। विज्ञान में भी जो प्रतिपादन करते हैं, उसको ठीक से अध्ययन करें तो ऊर्जा सम्पन्नता से ही बात शुरू करते हैं, जैसा electrons हैं, हमेशा अपना orbit में ही घूम रहे हैं, spin movement भी है उसमें, ये सब ऊर्जा सम्पन्नता के आधार पर ही है।

बाबा जो मूल अंतर हो जाता है, सत्ता में भीगे होने के कारण हर अंश क्रियाशील है, उसके कारण घूम रहा है मध्यस्थ दर्शन के अनुसार। विज्ञान के अनुसार एक positive charge है, एक negative charge है।

उत्तर : इन दोनों के खींचातानी से होता है।

प्रश्न : electron अपने आप में जो घूम रहा है, उसका spin orbit है। उसको positive charge से कोई लेना-देना नहीं है। उसको अपने आप में प्रतिपादित करना पड़ेगा। वो अपने आप में घूम रहा है। एक पूरा परिवेश में घूम रहा है। अपने आप में जो घूम रहा है, उसको कोई भी लेना-देना positive charge से नहीं है। तो उसकी ऊर्जा सम्पन्नता तो है ही ?

उत्तर : अभी जो अपन कह रहे हैं, ऊर्जा सम्पन्नता उसके साथ बता रहे हो कि originally बता रहे हो, ऊर्जा को क्या मानते हैं वो ? वो बात आती है ना ?

प्रश्न : energy कहते हैं जिसको वो ?

उत्तर : क्या चीज़ है energy ? क्रियाशीलता से ही energy है, उनका आशय है वो। क्रियाशीलता कहाँ से आ गई ?

प्रश्न : क्रियाशीलता से energy है, उनका आशय वहाँ है।

उत्तर : क्रियाशीलता कहाँ से आ गई ? कहाँ से आ गया भले ही ना करे वोही बात है, पहले कोई एक धक्का दे दिया, इसीलिए एक शुरू हुआ, दूसरा शुरू हुआ – ये सब कहाँ चला गया ? और उसके बाद खींचातानी करते रहे ये – सब कहाँ चला गया ? उसके बाद कोई चीज़ आ गई ? खींचातानी, धक्का-मुक्की से छूट के क्या कोई और चीज़ आ गई मूल क्रिया के लिए ? पहले ये बताए हैं, ये हम सुने हैं क्रिया के लिए एक परमाणु दूसरा परमाणु को धक्का दे दिया। वो पहला परमाणु धक्का देना कैसा बन गया पूछा तो उसको चुप हो गए – पहली बात। उसके बाद खींचातानी से होता है

बोला - ये उसको खींचता है, ये इसको खींचता है इसीलिए सब गतिशील हैं - ऐसा वो कह रहे हैं बताते हैं। ये क्या चीज़ सही है? या इसके इलावा और कोई चीज़ बताते हैं?

प्रश्न : पूरी consistency maintain नहीं हो पाती। बहुत सारे सिद्धांत वो बहुत टुकड़े-टुकड़े में दिखाई पड़ते हैं। उसको अगर आप logically प्रश्न पूछने जाएंगे कि इसका स्रोत क्या है, तो वहाँ जा के वो चुप हो जाते हैं।

उत्तर : कुल मिला करके यही बात बनता है, सत्ता में सम्पृक्त रहने वाला concept नहीं आया है। बात इतने ही है ना?

प्रश्न : सत्ता में सम्पृक्त रहने वाला और उसके आधार पर सहअस्तित्व के रूप में होने का जो सिद्धांत है, जैसे अंशों को हम सहअस्तित्व के रूप में है, ऐसा कह कर बात को explain करते हैं। अंश सहअस्तित्व में है, ये एक मूलभूत प्रतिपादन से शुरू करते हैं। उनके लिए उसको explain करना है, अंश क्यों परस्परता में हैं? उसको explain करने गये, तो बताया विपरीत आवेश में हैं, विपरीत आवेश परस्पर आकर्षण करते हैं। विपरीत आवेश परस्परता में क्यों आकर्षित करते हैं, तो जवाब नहीं मिलता, और आवेश भी क्यों है यह भी जवाब नहीं मिला।

उत्तर : इसमें ये सुविधा हो गई, सहअस्तित्व विधि से, परमाणु में हर अंश व्यवस्था में भागीदारी करने का प्रवृत्तिशील है ही है, इसीलिए जहाँ उसको स्थान मिलता है, उस जगह की काम कर लेता है। मध्य में काम करने के लिए स्थान होता है, मध्य में काम कर लेता है, परिवेश में यदि स्थान होता है, उसमें काम कर लेता है, उसमें अपना आचरण को प्रस्तुत कर देता है। ऐसा ये बनता है। प्रत्येक अंश सत्ता में सम्पृक्त होने के आधार पर ये सब चीज़ आती हैं।

प्रश्न : मध्यस्थ बल का स्रोत के बारे में थोड़ा बता दीजिए? मध्यस्थ बल का स्रोत ये ही है कि परमाणु के केन्द्र मध्यांश में एक ही अंश जिम्मेदार होता है या सभी अंश?

उत्तर : ये बहुत बढ़िया! तो देखिए महाराज जी जीवन परमाणु में एक ही अंश जिम्मेवार है। भौतिक परमाणु में एक से अधिक अंश भी जिम्मेवार होते हैं। वो सभी अंश में इस प्रकार से आचरण है, वो पूरा का पूरा spin motion में रहते हैं, चाहे दो हो, दो सौ हो, वो सारे अंश, बीच में जो जमा रहते हैं, वो ज़खीरा³⁷, वो सब का सब, एक-एक spin motion में रहते हैं, घूर्णन गति में रहते हैं। जो परिवेश में रहते हैं, वो घूर्णन गति में भी रहते हैं, परिवेश में भी घूमते रहते हैं। ये दोनों गति वो करते हैं, उसको हम ये धरती के रूप में देख सकते हैं। धरती घूर्णन गति भी करता है और motion भी करता है - आगे सरकता भी है। इन दोनों के फल स्वरूप कंपनात्मक गति है। कंपनात्मक गति वस्तुलात्मक गति - दोनों चीज़ सिद्ध हो जाता है। ठीक बात है। इस ढंग से बनता है। कंपनात्मक गति total सौरव्यूह के साथ जुड़ता है। उसी भांति एक परमाणु में सभी अंश मिलकर एक परमाणु हैं, उन परमाणु में कंपनात्मक गति है। केवल एक अंश में कंपनात्मक गति की बात नहीं आती है, सब मिलकरके कंपनात्मक गति को प्रस्तुत करते हैं।

परमाणु as a whole में कम्पन्न है। ऐसा बात है। मध्य में रहते हैं वो, circular में रहते हैं वो - सब मिल करके एक कम्पनात्मक गति की शुरुआत रहती है। ये बढ़ते जाता है। (परमाणु में तीन गतियाँ होती है) परमाणु में वर्तुलात्मक

³⁷ ज़खीरा - कोष; ढेर, राशि

गति है ही, मध्यांश के चारों ओर घूमने वाला बात है ही, साथ में घूर्णन गति और कम्पनात्मक गति। सम्पूर्ण परमाणु में ये तीनों गतियाँ हैं पर्याप्त।

मध्यस्थ बल में पहले आपको निवेदन किया, किसी भी परमाणु में मध्य में जितना अंश हैं, वो सब का सब घूर्णन गति में रहते हैं। ठीक है। इनके परस्परता में जो प्रभाव रहती है, गति का तो प्रभाव क्षेत्र बनता ही है, उन प्रभाव क्षेत्र का नाम है मध्यस्थ बल। मध्यांश के जो अंश हैं, उनके घूर्णन गति है, उसके प्रभाव को मध्यस्थ बल कह रहे हैं। ठीक हो गया उसका नियोजन दो ही जगह में जाता है – पास में आ जाने से या दूर भागने से ये मध्यस्थ बल दौड़ करके, उनको समझा-बुझा करके, अच्छे दूरी में अवस्थित कर देता है। Technically यही होता है, निश्चित दूरी में रहना पड़ेगा।

प्रश्न : पास आने से दूर कैसा जाता है, दूर जाने से पास कैसा आता है, उसका mechanism क्या है ?

उत्तर : उसका विकर्षण रूप में अपना बल को परिवर्तित करके प्रभाव डालता है, फलस्वरूप दूर हटता है। ये आकर्षण बल को बढ़ाता है, तब जा करके पास में आ जाते हैं। कैसे बाबा ? मध्यस्थ बल में ये दोनों चीज़ें निहित रहते हैं, आवश्यकता अनुसार उपयोग करो। मुख्य बिन्दु यही है। वातावरण के दबाव से पास दूर आते हैं, उसके आस-पास सब है ना सहअस्तित्व में। किसी को आकर्षण बल ज्यादा होने से दूर भागने की नौबत आती है, किसी का विकर्षण का बल ज्यादा बढ़ जाने से पास में आने की नौबत आती है, ये स्वाभाविक क्रिया है। ऐसे स्थितियाँ बन सकती हैं, ऐसे स्थिति को ठीक से सटीक अपने अस्तित्व को यथा स्थिति को बनाए रखने के लिए मध्यस्थ बल प्रयोजित होता है। अब अगर कोई आकर्षण बल लगाता है, परमाणु अंशों के ऊपर, मध्यांश क्या करता है ? उससे ज्यादा आकर्षण बल लगा करके वो अपने स्थान में बैठा देते है।

प्रश्न : mechanism क्या है ? परिवेश की निश्चित दूरी है, उससे यदि वो पास आ रहा है, तो विकर्षण बल हो जाता है। उसका आधार क्या है ?

उत्तर : आधार यही है, जो अच्छी निश्चित दूरी, जिसमें व्यवस्था के रूप में होना निश्चित रहती है, व्यवस्था को पैदा करने के लिए पास आ गया, और उसी को व्यवस्था में अवस्थित करने के लिए बल प्रयोग होता है। अंतर बल प्रयोग। व्यवस्था को प्रकाशित करने के क्रम में अंतर बल का प्रयोग होता है।

प्रश्न : मध्य है, केंद्र है, केन्द्र से प्रथम परिवेश की एक निश्चित दूरी है, द्वितीय परिवेश की एक निश्चित दूरी है, यही परमाणु में व्यवस्था का स्वरूप है। उसको वो बनाए रखता है। उससे कम करेंगे तो अव्यवस्था होने लगती है, विकर्षण पूर्वक दूर करेंगे। उससे दूर करेंगे तो अव्यवस्था, तब आकर्षण बल को लगाना पड़ेगा।

उत्तर : इस प्रकार से जो परमाणु व्यवस्था के अर्थ में मध्यस्थ बल, आकर्षण विकर्षण पूर्वक अपने व्यवस्था को बनाए रखने में सक्षम हैं। व्यवस्था के अर्थ में ही ये व्याख्यायित हो पाता है। व्यवस्था स्वाभाविक चीज़ है, वांछित चीज़ है।

प्रश्न : गठनशील परमाणु की प्रकार की संख्या क्या निश्चित बताई जा सकती है ?

उत्तर : ये 121 हो सकता है।[इसका आधार क्या है।] इसका आधार ये है, भूखे परमाणु के अंत तक 60 होता है, 61 में वो अजीर्ण परमाणु होता ही है। 61 orbit में होने से, मध्य में पुनः 61 होने से (पाँचवा orbit शुरू हो जाता है), ये हो गया अजीर्ण परमाणु। ऐसा परमाणु हो सकता है अस्तित्व में। उस प्रकार orbit में पूरा कर पूरा 61 परमाणु अंश हो, ऐसे परमाणु आपको मिल सकता है। तो उतना ही बीच में भी होगा, ऐसा वाला मिलेगा, वो जड़ परमाणु कहलाएगा। वो चैतन्य परमाणु नहीं होगा। इस प्रकार से क्या हुआ ? 121 हुए। ज्यादा से ज्यादा 60 अजीर्ण परमाणु हो सकता है। अभी इस धरती पर कितने अजीर्ण परमाणु को नाप पाए हैं, पहचान पाए हैं, वो आप स्वयं सोच लो।

प्रश्न : इसमें 4 परिवेश हैं, तब ये कहना ठीक लगता है कि 121 प्रकार के परमाणु हैं। 4 परिवेश से ज्यादा परिवेश अगर हों, तो फिर और परमाणु की संख्या बन सकती है ?

उत्तर : अजीर्ण परमाणु, ठीक है। इस प्रकार से 121 से अधिक प्रजाति होगा नहीं। अजीर्ण वाले जो है और टूटते रहते है। अजीर्ण होने से कितने भी टूटेंगे, जितने में आएंगे उसका निश्चित कार्य है, वो गलत कार्य नहीं होगा। कुछ भी अंश में हैं, उसमें 20 टूट गया मान लीजिए, तो बाकी अंशों की जो परमाणु का आचरण है, वो निश्चित है, वोही आचरण करेगा। वो कोई ना कोई संख्यात्मक परमाणु ही रहेगा।

अजीर्ण परमाणु 121 होने के बाद वो अस्थिर हो जाएंगे। 121 के ऊपर वाले जितने भी अजीर्ण परमाणु होंगे, वो जल्दी-जल्दी क्षरणशील हो जाएंगे, ये तो बात सच है, यदि होते हैं तो। होना कोई उद्देश्य नहीं बनता है। अस्तित्व के उद्देश्य में उसका उपादेयता नहीं के बराबर हो जाता है, क्योंकि पुनः टूटकरके कोई ना कोई 121 के अंदर ही रहना है। ऐसा बनता ही रहता है। कोई एक निश्चित परिणाम के आधार पर या निश्चित उष्मा दबाव के अनुसार 121 परमाणु प्रजाति संख्या होते हैं। उसमें निहित होने वाले अंशों का संख्या ज्यादा होते ही है।

ज्यादा समय तक अपने यथा स्थिति को बनाए रखने में भूखे परमाणु ज्यादा जूझते हैं और अजीर्ण परमाणु कम जूझ पाते हैं। ऐसे बातें बताई चुकी है, counting हो ही चुकी है। वो भी 122 से यदि अधिक हो गया, वो दिन में चार बार टूटेंगे।

प्रजाति के बारे में 121 बताया। परमाणु अंशों के बारे में जो होता है, वो 121 से ज्यादा होते ही हैं।

अजीर्ण परमाणु में जो प्रजातियाँ हैं 61 तक पहुँचने तक, अंशों को बढ़ाते-बढ़ाते 61 तक पहुँचते हैं। इधर 60 से घटाते-घटाते दो तक पहुँचते हैं, 60 परमाणु। दो अंश से कम कोई परमाणु होता नहीं। बस ऐसा बनी हुई है।

17. परमाणु - 4 (अंश और जीवन परमाणु)

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 7, time 36:56-1:16:16](#)

जय हो, मंगल हो, कल्याण हो!

कल के दिन परमाणुओं के सम्बंध में आप हमारे संवाद कुछ हुआ। उसमें एक संकेत आप लोगों ने हमें बताया है – परमाणु में मूलतः रचना के रूप में आपका सोच हमारा सोच भौतिक रासायनिक परमाणुओं के बारे एक जगह में एक ही सा लगा। वो है परिवेशों में जितना अंश होते हैं, उतने ही या उससे ज्यादा ये मध्य में होते हैं। इस बात पर अभी तक विज्ञानियों का दृष्टिकोण हमारा दोनों एक जगह में मिली। उससे हमको बहुत अच्छा लगा, ऐसा लगा सिलसिले से सिलसिलेवार यदि कोई चीज़ समझने की कोशिश किया है कोई आदमी, उनको सहअस्तित्व में जैसा एक व्यवस्था है, वैसे ही बोध हुआ है, ऐसा मैं समझा हूँ।

दूसरे बात ये आई, तो वो भी काफ़ी हमको अच्छी लगी, कि जीवन एक परमाणु है, परमाणु गठन में मैंने ये देखा है कि मध्य में एक ही क्रिया होता है, जिसको आत्मा नाम दिया है। परिवेशों में जो क्रियाएँ होते हैं, उनका नाम क्रम से बुद्धि, चित्, वृत्ति और मन नाम दिया है। इन परिवेशों में क्रम से ऐसे ही संख्यात्मक क्रिया देखी गई है – बुद्धि में 2 क्रिया, चित् में 8 क्रिया, वृत्ति में 18 क्रिया और मन में 32 क्रियाओं को मैंने देखा।

उसका परावर्तन, प्रत्यावर्तन प्रक्रियाओं को मैं मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान में प्रस्तुत करने की कोशिश किया है, और ग्रंथों में भी समय-समय पर जितना आवश्यकता पड़ती रही वैसा प्रस्तुत किया है। आप लोगों ने ये भी बताया कि परमाणुओं का मूल रचना भौतिक रासायनिक परमाणुओं में यही विधि है – 2, 8, 18 के रूप में रहता है। मध्य में इन सबके बराबर अंश या उससे अधिक अंश समाहित रहती हैं, ऐसा आप लोगों ने बताया। आप लोगों से ऐसा उद्गार सुन करके हमको बहुत अच्छा लगा। यदि विधिवत ये बात देखें हैं, इसमें आप लोगों को, अर्थात् विज्ञान संसार को, व्यवस्था में भरोसा ना होने का क्या कारण? अव्यवस्था पैदा करने का क्या कारण? दो प्रश्न होते हैं। उसका उत्तर आप लोगों से पाना है, कोई इसका उत्तर देगा कोई माई-बाप होगा तो उनसे उत्तर समझता रहूँगा। एक तो बात ये हुई। ये भी मुद्दा हमको बहुत अच्छी लगी।

उसके बाद आता है कि ये जो अजीर्ण परमाणु और भूखे परमाणु का बात तृप्त परमाणु के अर्थ में ही हम समझा। नाम देना होगा यदि भूखे परमाणु और अजीर्ण परमाणु, एक तृप्त परमाणु के आधार पर ही हम भूखे को बता सकते हैं और अजीर्ण को बता सकते हैं। उस आधार पर हम शुरू किया दो परमाणुओं के स्वरूप में, जो आधारों पर ये किया, अंशों का परिवर्तन होने की बात को हम स्वीकारा है। अंशों का परिवर्तन जब तक होता है, यही भूखे और अजीर्ण परमाणुओं के रूप में रहते हैं। ये शुद्ध भौतिक रूप में भी सहवासीय विधि से या तात्त्विक विधि से प्रदर्शित होते रहते हैं, और वोही परमाणुएँ जब कभी यौगिक हो जाते हैं, वो दूसरा प्रकार से आचरण को प्रस्तुत करते हैं, वो भी निश्चित है, जो रसायन संसार कहलाता है। इसमें हमको कोई तकलीफ़ दिखाई नहीं पड़ती है।

मूल में ऊर्जा - ऊर्जा के बारे में हमने देखा हुआ है, सम्पूर्ण अस्तित्व सत्ता में सम्पृक्त है। सत्ता स्वयं में ऊर्जा है, व्यापक वस्तु सत्ता के रूप में विद्यमान है, ये सर्वत्र एक सा विद्यमान है, समान रूप में विद्यमान है, एक ही स्वरूप में विद्यमान है, ना ज्यादा-कम का कोई आरोप उसमें बनता नहीं। ऐसी विद्यमानता के आधार पर ये हर परमाणु अंश से लेकर परमाणु तक, परमाणु से ले करके अणु तक, अणु से लेकर अणु रचित पिण्डों तक ये सत्ता पारगामी के रूप में मैंने देखा है। फलस्वरूप ये सभी वस्तुएँ ऊर्जा सम्पन्न होना मुझको समझ में आई है, ऊर्जा सम्पन्नता ही बल सम्पन्नता और चुम्बकीय बल सम्पन्नता के रूप में प्रमाणित होता हुआ देखा है। और इसी का समर्थन में अणु, अणु रचित पिण्डों के रूप में होना, और परमाणु अंश परमाणु में भागीदारी करने के लिए प्रवर्तित रहना ये देखा गया।

इसका प्रमाण यही है, परमाणु में हर परमाणु अंश अपने भागीदारी को निर्वाह करने के लिए प्रवर्तित होते हैं, परमाणु गठित होते ही हैं, और परमाणु अंश अपने स्वरूप में जो प्रकृति में होना बहुत कम है। इन्हीं परमाणुओं यदि प्रकृति में स्वतंत्र रूप में होने के लिए आवेशित रहना आवश्यक है क्योंकि बहुत आवेशित होने के पश्चात परमाणुओं में समाने के लिए परेशानियाँ निर्मित हुआ रहता है, वो शनैः शनैः, कहीं ना कहीं, किसी-किसी योग संयोग वश आवेश सामान्य होने की भी व्यवस्था अस्तित्व में रखी हुई है, क्योंकि हर आवेश सामान्य होता हुआ देखा गया है। इसी प्रकार परमाणु अंश का भी आवेश कहीं ना कहीं किसी योग संयोग में सामान्य होगा ही ऐसा मेरा विश्वास। आवेश सामान्य होने की स्थिति में परमाणु अंश किसी परमाणु में भागीदारी करता हुआ हमें मिलेगा ही, इस सत्यता को लेकर सम्पूर्ण अस्तित्व अपने में एक व्यवस्था के अर्थ में ही कार्यरत है, इसको मैंने देखा है। ये बात हो गयी।

उसमें ऊर्जा सम्पन्नता के बारे में, परमाणु के क्रियाशीलता के बारे में जो कुछ भी आप लोगों से सुना है, खींचा-तानी के रूप में, दो अपने-अपने प्रबल शक्ति को, प्रबल चुम्बकीय बल को एक दूसरे के ऊपर प्रभावित करते हैं, फलस्वरूप ये खींचा-तानी से चलते रहते हैं, ऐसा आप लोगों का सोचना है। इसको सुधार लेने की आवश्यकता है, हर परमाणु अंश भी ऊर्जा सम्पन्न है, इसका सुधार होना चाहिए। तो ऊर्जा सर्वत्र, सर्वदा सभी वस्तु को प्राप्त है। किस विधि से? पारगामी होने के आधार पर। सत्ता पारगामी होने के आधार पर हर वस्तु को, हर स्थिति को, हर गति में सत्ता प्राप्त वस्तु के रूप में विद्यमान है।

इसी आधार पर दूसरा आता है - अस्तित्व ना घटती है, ना बढ़ती है, अस्तित्व में घटना-बढ़ना है ही नहीं। उसके बाद जो आप हम व्यवस्था को ना स्वीकारने का क्या कारण रह गया, अव्यवस्था को पैदा करने के लिए मानसिकता कैसे पैदा हो गई, ये बात प्रश्नचिन्ह में आता ही है। उसको धीरे-धीरे समझने की बात, सुधारने की बात में आते हैं।

कल के परमाणुओं के रचना और उसके कार्य के जो स्वरूप है, उसमें जो 2, 8, 18, 32 के बारे में जो आपने कहा है, क्या सभी परमाणु इतना में रहना था? कम भी होते हैं, ज्यादा भी होते हैं - ये आप भी स्वीकार रहे हैं, हम भी स्वीकार रहे हैं। हमारे अनुसार परमाणु अंशों का परिवर्तन जब होता है, मध्य में भी परिवर्तन होता है और परिवेश में भी परिवर्तन होता है। ये परिवर्तन होने के लिए जब कभी जो 2, 8, 18, 32 की आप और हम बात करते हैं, ये स्थिर रहना नहीं हो पाता है। तभी परिणाम होना सिद्ध होता है। इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि स्थिर हो जाता है, उसके बाद बदलना नहीं चाहिए। बदलने वाले को आपने यही होता है, ऐसा कैसे कहा? ये भी एक प्रश्न

का मुद्दा बनता है। तो ये हो गयी, जो आपके हमारे संवाद के बीच में जो कुछ भी सम्भावना प्रश्न की बनता है, वो विनय पूर्वक ये प्रस्तुति है। हमारे अनुसार हम जो परमाणुओं को देखे हैं, हर परमाणु व्यवस्था में ही रहती है।

प्रश्न : बाबाजी कल चर्चा हुई थी उसी संदर्भ में एक प्रश्न आता है, कि आपके अनुसार अस्तित्व में कितने परमाणु हो सकते हैं, कितने प्रकार के? जैसे आपने कहा 120 प्रकार की गठनशील परमाणु और एक गठनपूर्ण परमाणु। विज्ञान की अवधारणा के अनुसार अभी तक 108 प्रकार के तत्व पाए जाते हैं।

उत्तर : ठीक है, आगे चल करके और भी पा सकते हैं, इसको आशा रखा जाए। जैसा है अस्तित्व, उनके अनुसार तृप्त परमाणु का जो स्थिति है, 61वें नम्बर में है। उससे कम में नहीं है, उसके पहले नहीं है। तो हर तृप्त परमाणु जीवन रूप में जो प्रमाणित है, उसमें 61 क्रियाकलाप होते ही हैं। इसमें खूबी यही है, जो मध्य में एक ही अंश होता है, तृप्त परमाणु में। भौतिक परमाणुओं में क्या है विशेषता? विशेषता ये है परिवेश में जितना अंश होते हैं, उतना ही या उससे अधिक अंश बीच में होते हैं। बीच में अंश परिवेश के बराबर या उससे अधिक होना ही भार बंधन का सूत्र है। भार इसलिए बात आती है। भार के साथ ही एक परमाणु दूसरे परमाणु के साथ संयोजित होते हैं। भार को यदि व्यक्त नहीं कर पाते हैं, उस स्थिति में संयोजित होना होते ही नहीं। इस आधार पर हर एक परमाणु भार बंधन सम्पन्न है।

कल ये भी प्रश्न आई थी, बीच में एक होना या दो अंश की कोई परमाणु हो बीच में एक ही होगा। किंतु वो भार बंधन मुक्त हो गया ऐसा नहीं है, क्यों नहीं है? दो ही अंश है तो, एक अंश का भार उसमें निहित है ही। तृप्त परमाणु में क्या चीज़ है, परिवेशों में 60 अंश होते हैं, बीच में एक होते हैं, तो ये 60 अंशों का जो भार मुक्त स्थिति है, वो एक को वहन कर लेता है। एक को भार मुक्ति दिला देता है। सहअस्तित्व का ये पहला सिद्धांत यहीं वर्तमान होता है।

परिवेशों में 60 क्रियाओं को मैंने देखा है, उसको 60 अंश माना जा सकता है, कोई तकलीफ नहीं है। 60 क्रियाओं के चलते बीच में एक ही क्रिया होता है, जिसको आत्मा मैंने नाम दिया है। आत्मा एक ही क्रिया है, उसका परावर्तन में एक आचरण है, प्रत्यावर्तन में एक आचरण है। प्रत्यावर्तन में अनुभव आचरण है, परावर्तन में प्रमाण आचरण है। इस ढंग से आत्मा की क्रिया को देखा गया। परमाणु अंश एक ही होते हुए, परावर्तन विधि से, प्रत्यावर्तन विधि से, दो प्रकार के आचरणों को देखा गया। उसको यथावत हम एक documentation करने की भी काम किया है। उसको मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान में काफ़ी अच्छे ढंग से बताने की कोशिश की। परमाणु का विकास का अध्याय जो समाधानात्मक भौतिकवाद में जो उल्लेख है, उसमें भी परमाणुओं के बारे में अपने ढंग से बताने की मैं कोशिश की है। उसमें कितना विज्ञानी संतुष्ट हो पाते हैं, नहीं हो पाते हैं, वो आगे की बात है। किंतु मैंने जैसे देखा है, समझा है, उसको वैसे ही मैंने लिखा है। एक बात ये हो गयी।

इस विधि में जो प्रजाति के बारे में जो बात हुई, एक परमाणु का ज़्यादा से ज़्यादा 120 प्रजाति हो सकते हैं। 120 प्रजाति में से जितना हम पहचानने में आई है, वो पहचानने में आई है। ये भी हम सुनते हैं कि क्रम से कुछ संख्या तक पहचान हुई, उसके बाद और कुछ संख्या तक पहचान हुई, उसके बाद और कुछ संख्या तक पहचान हुई, ऐसा ही हम सुनते हैं। यदि यही कथा है, आगे चल करके और भी पहचान में आएंगे, ऐसा तो आशा रखा ही जा सकता है। इस ढंग से 120 एक प्रकार से तर्क संगत विधि से ये आता है, क्योंकि भूखे परमाणुएं तृप्त परमाणु के पहले कहलाता है, वो 60 निश्चित है। उसमें कोई भी hotchpotch नहीं है। कम ज़्यादा नहीं है। उसके बाद कितना हो सकता है

अजीर्ण परमाणु? कहा जाए तो इसी के समान हो सकता है। जितना भूखे, उतना अजीर्ण। इस ढंग से तर्क है। तो इसका जो प्राप्ति, सम्प्राप्ति, पहचान, ये तो आप लोग कर ही रहे हैं। उसमें से कुछ दूर तक पहचान हो चुकी होगी और बाकी पहचान जो होना है, वो भी हमारा प्रयास यदि शुभ के लिए बना रहेगा, शनैः शनैः समझ में आएगा। हमारा कहना ये है शुभ के लिए मतलब, विज्ञान जो है ना व्यवस्था के निरंतरता के अर्थ में अपने को अर्पित करने की आवश्यकता है। जबकि इस रास्ता को विज्ञान छोड़ चुका है। उसका प्रधान प्रमाण, सर्वप्रथम धरती बीमार होना। व्यवस्था के खिलाफ ही धरती के साथ विज्ञान सारा क्रिया कलाप प्रस्तुत किया और इससे धरती बीमार हो गई।

प्रश्न : 60 अजीर्ण परमाणु आप कहते हैं और 60 भूखे हैं, किस आधार पर आप ऐसा कहते हैं?

उत्तर : अजीर्ण और भूखे, नाम है एक प्रकार से। इसको ऐसा समझना चाहिए, ये मानव संवेदना से जुड़ी हुई भाषा है। ये यंत्र और भौतिक रासायनिक तत्व के आधार पर जुड़ी हुई भाषा नहीं है। मानव संवेदना से जुड़ी हुई भाषा है ये। इन शब्द का अर्थ यही है, क्रम से हम यदि संख्या लगाते हैं, 2 अंशों का परमाणु से लेकर 61 अंशों तक ले जाते हैं, उसमें 60 पीछे होते ही हैं। बहुत ही आसान गणित है, इसमें कौन सा बड़ी भारी सोचने की बात है! और जितना भूखे रह गए, भूखे के बाद एक तृप्त परमाणु की स्थान बनी, वो मध्य होना चाहिए, इस आधार पर बाकी 60 बाद में भी होंगे अजीर्ण परमाणु। अजीर्ण परमाणुएं 60 होने के आधार पर ही, ये 60 वो 60, दोनों मिल करके 120 होता है। इस आधार पर 120 प्रजाति के परमाणु होने की संभावना अस्तित्व में रखी हुई है।

ये भी नहीं है, इस धरती पर 120 प्रमाणित होना है, ये भी आप ना जाइये। हो सकता है, इसमें से 1, 2 कम भी प्रमाणित हो जाए। क्या आपत्ति हो गई? यदि ये धरती का विकास में जितना परमाणु प्रजातियाँ होना चाहिए, धरती की ही कार्यकलाप में निहित है ये संख्या। ये आप हमारे पुरुषार्थ से कोई चीज़ निहित नहीं है। धरती अपने विकास को प्रमाणित करने के लिए कितना प्रजाति के परमाणु चाहिए, वो सब को संपादित कर चुका है। उसके बाद ही ये सभी चारों अवस्थाओं के विकास आप हमारे सम्मुख ज्वलंत उदाहरण के रूप में प्रस्तुत हुआ है। इसको अपने को ध्यान में लाने की आवश्यकता, इसी में हम शुभ विधि से कुछ प्रवर्तन को शुरू कर पाएँगे। अभी तक क्रूरतम विधि से पहले ये सुनने में आयी थी, प्रकृति पर हम विजय पाना है। वो धीरे-धीरे वो ध्वनि दब करके, प्रकृति को दोहन करना है, इस जगह में आ गया।

दोहन का मतलब यही है, जैसा गाय में दूध दुहते हैं, ऐसा अर्थ निकलता है। इसका शुद्ध रूप देखने पर आता है, प्रकृति को शोषित करना है। कार्य रूप में तो यही दिख रहा है, प्रकृति का शोषण। शोषण विधि से शोषण करने वाला स्वयं शुष्क हो जाएगा, उसी का ये संकेत है, ध्वनि है, घंटी बजा रहा है, धरती बीमार होना। आदमी बरबाद होने का पहला घंटी यही है। ये किसी अंश तक अभी बीमार है, ये अपने में स्वस्थ होने के लिए अवसर पैदा करना चाहिए, शुभ मानसिकता यही है। अवसर कैसा दोगे भई? हम जितने भी दुष्ट कर्म कर रहे हैं, धरती के साथ, उसको रोके।

दुष्ट कर्म का essence part क्या चीज़ है, पूछा गया? उसको हमने ये देखा है, जो ईंधन संधान है, ये गलत हो गया। ईंधनों को हम जैसा संधान किया है, कोयले के रूप में, खनिज कोयला, खनिज तेल के रूप में जो संधान किया है ईंधनों को, उसी से ये धरती का वातावरण बिगड़ गई और धरती रोगग्रस्त भी हो गयी। इसका होने का कारण भी पूछा जाता है। उसको मैंने समझा है कि ये जो जितने भी ईंधन के रूप में खनिज, कोयला और तेल है, ये उस अवस्था

में तैयार हुआ है, इसका पूर्व रूप, जब मनुष्य जाति नहीं रहा। और जीव जाति भी रहा होगा वो विषाक्त, हवा से जीने वाले ही रहे। विषाक्त हवा से ही जीने वाले झाड़ पौधे रहे। उस समय में झाड़-पौधा तैयार हुआ, जीव-जानवर तैयार हुआ।

वो जब एक भूकम्प या भूमि का पलटने वाली विधि से जब ये पूरे जंगल, पहाड़ दब गयी, उस के आधार पर ये कोयला बनना अनुभव किया जा सकता है। इस कोयले की ही जो रस है वो petroleum के रूप में, खनिज तेल के रूप में आप-हम को उपलब्ध हो रहा है। इसका तैयारी ही विषाक्त हवा खा करके बनी हुई वस्तु से हुई है। अब क्या होता है ये? ईंधन का अवशेष जो बतायी, उसको हम ईंधन रूप में हम परिवर्तित करते हैं, वो विषाक्त हवा ही बनता है वो। मनुष्य मनुष्य के प्राण हनन के आधार बन जाता है। उसी भाँति अभी जो वनस्पतियाँ हवा को सेवन करते हैं, उसके लिए भी अजीर्ण हवा हो गई है। इस विषाक्त हवा को वनस्पति भी पूरा हजम करने में असमर्थ होते जा रहे हैं। ये धरती के वातावरण में बढ़ती जा रही है जिससे मनुष्य के लिए एक प्रश्न चिह्न तो बनता ही है कि मनुष्य को इस धरती पर रहने के लिए ये सब काम कर रहे हैं या इनको धरती से उठने के लिए काम कर रहे हैं। इस प्रश्न चिह्न तो बनता है। उसका उत्तर देने वाला कोई माई-बाप होगा उस से हम सुनता रहूँगा।

जय हो!

अभी यहाँ आयुष्मान संकेत ठाकुर यहाँ उपस्थित हैं, उनका एक प्रश्न है कि परमाणुओं में कितना प्रजाति होती है, उसका उत्तर हमने दिया। उसके ऊपर आपका पुनः एक जिज्ञासा है, इन परमाणुओं में कितना-कितना अंश होता है। क्योंकि विज्ञान विधि से अंशों का संख्या को पता लगाने के लिए एड़ी से चोटी तक जोर लगाएँ हैं, उससे कुछ आप अपने ढंग से तालिका बना के रखे हैं। उसके आधार पर आप हम से उस बात को सुनना चाहते हैं।

मैंने अभी ये बताया प्रजाति के बारे में हमारे पास पूरा संगतिकरण तर्क है, अंशों को गिनने की आवश्यकता मुझको नहीं बनी। मुझको आवश्यकता यदि बन जाती है, कोई चीज़, उसका सार्थकता यदि व्यवस्था के अर्थ में उपकारी है, वो सभी कार्य हम कर डालूँगा। हमको व्यवस्था के रूप में हर परमाणु जब अपने को प्रस्तुत किया है, जिसको हम व्याख्यायित किया है, हर एक-एक अपने त्व सहित व्यवस्था है, समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने के लिए उन्मुख है, प्रवर्तनशील है, इस बात को हम व्याख्यायित किया है। अभी व्यवस्था के अर्थ में हमारा व्याख्या पर्याप्त हम को दिखता है। ये व्याख्या में कोई कमी होगा तो उसका उत्तर देने के लिए मैं हूँ, मैं उसका ज़िम्मेवार हूँ, व्यवस्था के अर्थ में जितने भी प्रश्न होगा। तो एक बात पुनः याद दिलाना चाहता हूँ, परमाणुओं में संख्याएँ कितना-कितना है, उसको गिनने की आवश्यकता मुझको नहीं बनी। मुझको आवश्यकता जो महसूस नहीं हुआ, उस कार्य को हम करेंगे कायको? इतना तो हम सत्य रूप में देख लिया है और व्यवस्था के रूप में हर एक परमाणु अपना कार्य को संपादित करते हैं और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करते भी हैं।

उसका एक ज्वलंत प्रमाण है, इस धरती में जितने भी प्रजाति के परमाणु रचित हो चुके हैं, वो सभी भागीदारी कर रहे हैं। कोई एक कर रहे हैं, एक नहीं कर रहे हैं, ऐसा कुछ नहीं है। सबका भागीदारी से ही ये सम्पूर्ण प्रकाशन है, इस धरती पर जितने भी प्रकाशन है। कोई एक भी परमाणु ऐसा नहीं है, जो कि अपने भागीदारी से वंचित हो गया हो,

ऐसा आप नहीं बता पायेंगे। हर एक परमाणु का भागीदारी है ही है। इस ढंग से हम देखा है, इससे हम तृप्त हो गये। जो 60 के बाद 61वें परमाणु होता है, तो उस परमाणु में अंशों का संख्या कितना होता है, उसको गिनो भई! जब व्यवस्था में हमको समझ में आता है तो काहे के लिए अंशों को गिने? जब व्यवस्था में होना हमको समझ में आता है, आपका कितना हाथ है, कितना पैर है, कितना लम्बी नाक है, कितना चौड़ी कान है, इसको नापने की जरूरत है क्या? हमने ये पता लगा लिया, संकेत ठाकुर अपने में एक व्यवस्था है और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है।

उसी भाँति एक से अधिक अंशों से गठित हर परमाणु व्यवस्था में होता है, समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है, इस अर्थ को भले प्रकार से हम समझा, उसी आधार पर हम ये कहते हैं, धरती स्वयं में व्यवस्था है। ये धरती सौरव्यूह के साथ अपना भागीदारी को निर्वाह कर ही रहा है। इसको आप तो नकार नहीं पायेंगे और ये धरती की 700 करोड़ आदमी भी कुछ नहीं कर पाएगा। इस प्रमाण के साथ तृप्त होना है। इसी आधार पर हम व्यवस्था में जीने में विश्वास करता हूँ, और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने में विश्वास करता हूँ, इस विश्वास के साथ हम सुखी होना पाता हूँ, स्वयं में। और इसी ताकत से दूसरों को सुखी बनाने में हम सफल होता जाता हूँ। इसको हम सही माने या बाकी बात को – हम अंशों को गिन लिया, अंशों को तोड़ा कैसे जाए, उसके पश्चात बरबाद कैसे किया जाए – ये सब बात के लिए हमारा सोच नहीं है। क्योंकि आप का अंतिम सोच यही है, धरती को कैसे बरबाद किया जाए, कितने बार बरबाद किया जाए।

अभी सुनते हैं जितने भी बरबादी की जो स्थितियाँ बना करके रखते हैं आप लोग, आप लोग का माने विज्ञान, ये धरती को 21 बार बरबाद किया जा सकता है। ऐसा सुनते हैं, पेपरों में। आपका जकीरा कैसा बना है बर्बादी का, उसको हम को जाँचना नहीं है। बरबादी हमारा स्वीकारा नहीं हैं, आबादी हमारा स्वीकार है। कैसे हमको स्वीकार हो गया? क्योंकि नियति स्वयं आबादी की ओर प्रवर्तनशील है। नियति, नियति का मतलब –संसार में अस्तित्व, अस्तित्व में विकास, विकास क्रम में जो कुछ भी अभिव्यक्तियाँ है, ये सब का सब व्यवस्था के पक्षधर है। ये अव्यवस्था के पक्षधर नहीं है। हमारा घंटी बजाना यही प्रमुख बात है। व्यवस्था के अर्थ में हर वस्तु जब काम कर रहे हैं, हम उसको शंका करने का क्या अधिकार होता है? उसमें हस्तक्षेप करने की कौन सा अधिकार होता है, हस्तक्षेप करके किया क्या गया, कौन सा व्यवस्था को बुलंद किया? उसको भी तो कोई माईबाप बतावें। या बरबादी को आप विकास मानते हो तो आपके साथ मंगला आरती करने को हम बैठे हैं! पाँच बत्ती जला करके हम ऐसे में हैं।

प्रश्न : ये ठीक है कि अंशों को गिनने के आधार पर बहुत सारा विध्वंस हुआ है। लेकिन जो उसकी संरचना है, परमाणुओं के अंशों के रूप में, उसको समझना उपयोगी भी है। communication के जितने भी तरीका बनाये गये, computers बनाया गया, सबको बनाने का जो आधार है, ये है कि जिस मटेरियल से ये बनते हैं, उनके संरचना को ठीक-ठीक समझ पाते हैं। उसको उतना ही diffuse कर पाते हैं, diffusion का प्रक्रिया कर पाते हैं, इतने इलेक्ट्रान होंगे, तो वो इस प्रकार से behave करेगा, इस प्रकार का आचरण होगा, ऐसा वो तय कर पाते हैं, उस आधार पर करीब-करीब 1 square inch पर 10 लाख प्रकार के transistor बना पाते हैं। उस आधार पर करीब 1square inch के area में ये सारा function पैदा कर पाते हैं। इस तरह का उपयोगिता तो है ही, अगर हमको परमाणु के संरचना ठीक-ठीक समझ में आ जाए, अंशों का जो विभाजन है, विभिन्न परिवेशों में वो समझ में आ जाए, उसके आधार पर उसका आचरण की निश्चितता है समझ में आ जाए, वो व्यवस्था के अर्थ में ही है ये

स्पष्ट रहे। अभी क्या है, हमको ये स्पष्ट नहीं है कि व्यवस्था के अर्थ में है। हमको ऐसा लगता है कि उससे हम कुछ भी कर सकते हैं। कुछ भी कर सकते हैं, ये सोचना गलत है लेकिन वो व्यवस्था में है, और उसका एक निश्चित व्यवस्था है, उसका जो विभाजन है, केन्द्र में और विभिन्न परिवेशों में, ये बात हमको अगर स्पष्ट हो तो उनका हम सदुपयोग कर सकते हैं, मानव उपयोगी बनाने में।

उत्तर : ये स्वागतीय बिंदु है। मैं समझता हूँ, आपको भी संतुष्टि मिलता होगा, और औरों को भी संतुष्टि मिलेगा। व्यवस्था के अर्थ में विज्ञान जितना काम किया वो स्वागतीय है बताया, और पहले भी इस बात को हमने स्वीकार है, दूरदर्शन, दूरगमन, दूरदर्शन संबंधी उपलब्धियाँ विज्ञान विधि से हमको प्राप्त हुआ है, ये उपकार है, और नाश के लिए जितने भी किया वो प्रकृति विरोधी है, इस बात को हम स्पष्ट किया। आपने अंशों को समझने के आधार पर जो कुछ भी उपकार कार्य किया है, वो तो संसार सदा-सदा के लिए स्वागत करेगा ही। वो उपकार को कोई भूलेगा नहीं। भूला हुई बात को जोड़ने की आवश्यकता मेरे पास थी, वो आवश्यकता को हम पूरा किया है। उसका उत्तरदायी मैं ही हूँ। उसमें हम प्रमाणित हूँ। मनुष्य व्यवस्था के रूप में जीने की आवश्यकता है, मनुष्य व्यवस्था के रूप में जीने के लिए जितना ज्ञान चाहिए, किसका? परमाणु का, अजीर्ण और भूखे, तृप्त, उसको हम प्रस्तुत किया है। तृप्त परमाणु ही जीवन रूप में हर मनुष्य में काम कर रहा है।

इसको हम बोध कराना चाहते हैं, उसमें हम प्रयत्नशील हैं, आंशिक रूप में हम सफल भी हैं। ये दूसरे भाग है। ये इस अर्थ में है, मनुष्य जीवन को समझने के बाद, जीवन एक व्यवस्था के रूप में बोध होने के बाद जीवन से ही जीवन का जीवन में बोध होना है, ये प्रक्रिया यदि मानव के गले से उतर जाता है, मानव व्यवस्था में जीयेगा। ये मेरा विश्वास है, जब मैं समझा, उसके बाद मेरा व्यवस्था में जीना सुगम हो गया। उसके पहले हमारे पास व्यवस्था में जीना सुगम नहीं था। यदि सुगम होता वेद को पढ़ायन करके, शास्त्रों को पढ़ करके और उपनिषदों को याद करके, हम ब्रह्म सूत्रों को रट करके, व्याकरण सूत्रों को रट करके यदि हमको ये ज्ञान होता, व्यवस्था में जीना होता, तो अमरकंटक आने की हमारा कोई आवश्यकता नहीं होती। हम इस सब में से गुजरा हुआ व्यक्ति हूँ।

ये सब में गुजरने के बाद भी हम को व्यवस्था में जीना बना नहीं, और व्यवस्था के प्रति हम विश्वास करना भी बना नहीं। वो कहाँ से ये फूट पड़ा? जब संविधान बना, भारतीय संविधान, उसके लिए जो वैदिक चिंतन के विधि से क्या सूत्र होगा संविधान में आचरण का, वो दीजिये बोलने से कुछ भी नहीं निकला। कुछ भी नहीं निकाला तो हम ये अपने को अनुभव किया ये सब लाद करके मरने की क्या जरूरत है, ऐसा स्थिति बनी। और उस अभिशाप से छूटने के लिए हमको अभ्यास करना पड़ा, उसका उत्तर पाना पड़ा। मुख्य मुद्दे पर इसी विधि से हम अभ्यास में रत हुए। उसमें हमको समझ में आ गई, व्यवस्था में जीना संभव है, व्यवस्था में मैं जिया हूँ और और भी जीने की सम्भावना रखी हुई है। इस बात पर हम कायम हुए, कायम होने के पश्चात हम अपने प्रमाणिकता को अभी तक व्यक्त करते जा रहा हूँ, जब तक स्वस्थ शरीर रहेगा, जीवन जब तक अपने जागृति को प्रमाणित करने योग्य रहेगा शरीर, तब तक हम ऐसे ही प्रमाणित रहेंगे।

प्रश्न : हम लोगों को इसकी आवश्यकता तो बनी हुई है की परमाणु के अंश के संख्या, उसकी संरचना, परिवेश में संख्या कैसे बढ़ रहे हैं, इसको देखना आवश्यक है क्योंकि उससे उस परमाणु के संरचना और उसके आधार पर उसका

निश्चित आचरण को समझा जा सकता है। ये इसीलिए आवश्यक है, क्योंकि अभी तक विज्ञान ने जो देखा है, देखने का प्रयास किया, वो विभाजन के आधार पर किया है, तोड़ने के आधार पर किया है, परमाणु अपने आप में जैसा है, उसको वैसा बने रहते हुए देख पाना ये मुख्य मुद्दा है। अभी तक विज्ञान को जो विधि है, वो विखण्डन विधि है, उससे देखने में हो सकता है, बहुत सारी चीज़ छूट भी गई हो।

उत्तर : उसमें हमारा निवेदन यही है, शुभ तो आपको बोध हुआ है, शुभ तो व्यवस्था ही है। अव्यवस्था शुभ नहीं है, ये बात आप हमारे सबके गले से उतर गई है, लगता है मुझको। यदि उतरा नहीं होगा तो कल उतर जायेगा, उसका आवश्यकता तो बना ही है। व्यवस्था के अर्थ में जितना भी बात हमको हाथ लगा है, विज्ञान विधि से, वो स्वागतीय है। परंपरा उसको स्वीकार करता ही रहेगा। चिर ऋणी रहेगा ही। हम अपने बात को बहुत स्पष्ट किया है, मनुष्य व्यवस्था में जीने में असम्भव रहा। विज्ञान विधि से भी हम मनुष्य पर विश्वास रखना नहीं बना और आदर्शवादी विधि से भी मनुष्य पर विश्वास रखना बना नहीं। इस आधार पर मनुष्य, मनुष्य के साथ विश्वास रखना बहुत जरूरी है, तभी व्यवस्था में जीना बन पाएगी। इस अर्थ में हमारा पूरा अनुसंधान है। इस अर्थ में हम पूरे हैं। अब आपका कथन ये है, हम परमाणु अंशों को समझने के कारण से हम बहुत सारे शुभ कार्य किए हैं, उसका परंपरा बन ही चुकी है। परंपरा बन ही चुकी है तो उसमें किसको क्या तकलीफ़ है?

प्रश्न : सहअस्तित्ववादी विधि से एक-एक परमाणु में परमाणु अंशों की संख्या और विभिन्न परिवेशों में उसका वितरण को देखना हमारे लिए आवश्यक है, क्योंकि अभी तक जो देखा गया वो विखंडन विधि से देखा गया। व्यवस्था विधि से समझ पाता है या नहीं ये बहुत स्पष्ट नहीं हैं। जितना समझ पाया, उसके आधार पर कुछ उपयोगिता पैदा हो गई है, लेकिन वो पूरा पड़ जाए ऐसा है नहीं, इसको फिर से एक बार देखने की आवश्यकता तो बनी हुई है। परमाणु जैसा है, वैसा रहते हुए विभिन्न परिवेशों में अंशों का जो वितरण है उस की जो संख्या है, उसको देखना आवश्यक है।

उत्तर : आप ही कहते हो, किसी भी विधि से परमाणु अंशों के संख्या को आप समझ रहे हैं। विज्ञान जितना समझा है वो भी स्वागतीय है। पूरा समझा है तभी भी स्वागतीय है। परमाणु अंशों को समझ करके उससे जो उपकार करने की बात आप से हुआ है, अर्थात् विज्ञान से हुआ है, उसको आप हम कैसा पहचाना? दूरगमन, दूरश्रवण, दूरदर्शन विधि से समझा। आपका पूरा कथन का भी essence part यही रहा।

प्रश्न : बाबाजी मैं एक बात करना चाहता हूँ जिस तरह से अपने गठनपूर्ण परमाणु की बात की आपका जीवन परमाणु के संरचना के बारे में जो 2, 8, 18, 32 विज्ञान के हिसाब में एकदम सही बैठता है, उस आधार पर जो गठनशील परमाणु है, उसका संरचना है, परमाणु अंश के संदर्भ में अगर स्पष्ट हो जाए तो इस अवधारणा को बहुत बल मिलेगा।

उत्तर : समझ गया, उसके बारे में क्या होगा महाराजी, इस भाग को स्पष्ट करने के लिए अनुसंधान की बात आती है, उसकी आवश्यकता मुझको प्रतीत होना चाहिए ना। जिसको जो आवश्यकता प्रतीत नहीं होता, उसके ओर वो जाता नहीं क्योंकि अस्तित्व में हमारा तृप्ति से अधिक वस्तु है। मनुष्य व्यवस्था में जीने मात्र से मानव परंपरा की तृप्ति मिलेगी। अभी जितने भी तकनीकी मिली है, अभी जितना भी युक्तियाँ मनुष्य जो है ना अपने उत्पादन के लिए अपना चुका है, इसमें से मनुष्य को ये सब सदा-सदा उपलब्ध रहेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। इस आधार पर इस विधा में

हमको ये प्रयत्न करना है, ऐसा कोई महसूस नहीं हुआ। महसूस होने पर उसको भी करके देखेंगे। क्या आपत्ति हुआ, यदि कोई कर ही दिया तो क्या तकलीफ है। अगर आपको कुछ समझ में आया है, क्या तकलीफ है, उसमें ऊर्जा विधि को समझ लीजिए, सत्ता व्यापक होने की बात को जोड़ लीजिए, आपके कार्य में सोने में सुगंधी होगा ही। और ऊर्जा विधि यदि समझ में नहीं आता है, आप हमारा सारे काम अधूरा रहेगा ही। ये समझने से विकास विधि से जुड़ी हुई हमारा सारा उत्पादन होना शुरू हो जाता है। इससे धरती को तंग करने वाली बात कम हो जाएगी या मुक्त हो सकते हैं। इसके विकल्पात्मक ईंधन विधि को खोजने के आधार पर, ये ऐसा बनता है महाराज।

18. परमाणु में गति

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 8, time 00:00 -25:01](#)

प्रश्न : बाबा जी आपने कहा कि परमाणु अंशों में घूर्णन गति और वर्तुलात्मक गति, परमाणु में कम्पनात्मक गति और वर्तुलात्मक गति हैं। मध्यांश के अंशों में घूर्णन गति के होने से ही मध्यस्थ बल का प्रकाशन है, समझाइए।

उत्तर : जैसा स्थूल रूप में ये धरती है। अति सूक्ष्म रूप में परमाणु अंश, परमाणु अंश जब अपने गति पथ में घूमता रहता है, वो अपने में घूर्णन करता भी रहता है और आगे सरकता भी रहता है। सरकने का गति जो है जब तक ज्यादा रहता है, तब तक वो इसी विधि में चलता रहता है, किस विधि से भौतिक रासायनिक परमाणुओं के कक्ष में ही वो अपने कार्य को प्रकाशित करता रहता है। ये जो परमाणु अंशों का जो गति पथ रहता है, इन गति पथ सहित ही परमाणु कहलाता है। परमाणु में कम्पनात्मक गति की अभिव्यक्ति है, माने जितना गति पथ है वो सभी मिलकरके जो क्रिया कलाप है, उसके फलसूत्र में कम्पनात्मक गति रहती है। तो क्या बचा खुचा रहा उसका अर्थ है गतिपथ में जो चलता हुआ, माने दौड़ता हुआ जो अंश होते हैं, उनकी जो है विन्यास है ना जितना dancing होता है, नृत्यकार्य होता जाता है, उतना ही कम्पनात्मक गति बढ़ता जाता है। किसमें? परमाणु में। एक प्रकार से नर्तन क्रिया ही ये कम्पनात्मक गति का अभिव्यक्ति है। घूर्णन गति में जो नर्तन होती है, वो ही कम्पनात्मक गति के अर्थ को प्रकाशित करता है।

इस ढंग से देखा गया। जो है ना जितना कम अंश कम परिवेश उतना कम कंपन, जितना ज्यादा परिवेश और अंश उसके अनुसार ज्यादा कंपन। कंपनात्मक गति को परमाणुओं में देखा जाता है। तो इन आधारों को यदि हम पकड़ते हैं, तो ये पता लगता है, व्यवस्था करने में अंशों का खुशहाली को अनुभव किया जा सकता है। अंशों का भागीदारी में अंशों का खुशहाली ही उसका नर्तन है, ऐसा मेरा सोचना है। इस विधि से क्या हो जाती है ये खुशहाली की अभिव्यक्ति है, पूरा अभिव्यक्तियाँ, मातम बनाने की अभिव्यक्ति नहीं हैं अस्तित्व में, शोक मनाने की कोई अभिव्यक्ति अस्तित्व में नहीं है। तो ये शोक कहाँ से आ जाता है? मनुष्य ही अपने शोक को अस्तित्व में भी आरोपित करता है, जैसा अभी तक करते आया। सुख, दुख से छूटने के लिए तो सारा कुकर्म किया है धरती के साथ और काय के लिए किया है? ऐसा इसका माने समीक्षा बनती है। इस बीच में यदि शुभ के अर्थ में घटित हो गई वो बात का भी अपन गणना किए हैं। आगे चल करके यही आवश्यकता है, ये सभी परमाणुएँ जिसको हम पहचान चुके हैं या अकस्मात् आगे चल करके पहचान में आएगा, इन सभी से बनी हुई वस्तुओं को, हम सदुपयोग करने की अर्थ में अपने मानसिकता को संजोने की आवश्यकता है।

प्रश्न : बाबाजी एक प्रश्न था कि मध्यांश के अंशों में घूर्णन गति के कारण मध्यस्थ बल कैसे पैदा होता है?

उत्तर : कैसे पैदा होता है? कैसा पैदा होने की बात नहीं है, मध्यस्थ बल है। ये क्या इसका मतलब।

प्रश्न : ये खुशहाली को explain करने की जो बात है, ये चैतन्य परमाणु के लिए लेते हैं तो ठीक लगता है। चैतन्य परमाणु की बात जब हम कह रहे हैं। खुशहाली और शोक दोनों की बात उसमें समझ में आता है, चैतन्य परमाणु रोमांचित करता है लेकिन इसको पार्थिव परमाणुओं में कैसे कहा जाए?

उत्तर : उसके लिए हमने जो पहचाना महाराजजी, व्यवस्था में होना एक खुशहाली है, क्योंकि मनुष्य संवेदनशील संज्ञानशील हैं ही है, तो इसको यदि invest करता है, इसको दाव लगाता है, उस स्थिति में हमको ये पता लगता है की परमाणुएँ व्यवस्था में कितना खुश हैं, ये हमको पता लगता है। तो यही अंश परमाणु के रूप में, परमाणु अणु के रूप में हो करके भौतिक, रासायनिक क्रियाकलापों को जो संपादित कर रहे हैं – झाड़ के रूप में, पौधे के रूप में, फूल के रूप में, बीज के रूप में, तने के रूप में, और रूप में, जड़ के रूप में, सभी रूप में जो व्यक्त रहे हैं – इन सभी में कार्यरत जो अणु हैं, अपने खुशहाली के साथ ही वो रचना को पूरा किया है। वो सारे अणुएँ, जो प्राणानु हैं, वो मृतक हो करके उस अवशेष को यथावत बना कर रखते हैं। क्या बात है ये!

अवशेष, जो परमाणुएँ इसे प्राणकोषाओं के रूप में बहुत सारे रचनाओं को करने के बाद, जब वो झाड़ मर जाता है, वो सारे प्राणकोशाएँ मृतक हो करके उसी में समाये रहते हैं। क्या बात है! वो अवशेष रहता है, वो स्वयं में कितने बड़ी-भारी मानव के लिए उपयोगिता के रूप में दिखा, कितना बड़ी-भारी उपयोग किया आदमी ने, ये भी नहीं उपयोग नहीं किया ये भी नहीं है। जो जीवित रहते समय मे खुशहाली और वो झाड़ मरने के बाद भी मानव के या धरती के खुशहाली का साधन। धरती के लिए जब साधन होता है उर्वरक रूप में परिवर्तित हो जाता है। मानव के साथ साधन के रूप में आता है, दरवाजा, कुर्सी, बेंच हो करके, ये खुशहाली का आधार बनता है। इसको हमने देखा है, हर व्यक्ति देखा है। माने अवशेष भी खुशहाली का साधन है, ये मेरा यहाँ कहने का मतलब है, और झाड़, पौधे, तो अपना खुशहाली को व्यक्त करता ही है।

हर दिन नवीनतम् विन्यास, हर दिन नवीनतम मूद्रा, हर दिन नवीनतम भंगिमा, ये सब को कैसा पैदा करता है, खुशहाली के बिना कैसे पैदा करोगे? आप हम क्या पैदा करोगे? आप हम यदि खुशहाली का मुद्रा, भंगिमा, अंगहार को व्यक्त करना है, हर दिन नित्य नवीन करना है, हम अपने में कितना खुशहाली को व्यक्त करना होगा? आप एक बार सोच के देखो। हम करते ही हैं, अभिव्यक्त करने के क्रम में हम खुशहाली को ही अभिव्यक्त करते हैं। संकट को हम अभिव्यक्त करना भी नहीं चाहते हैं। हमारे में भी ये समाई हुई है। आपके सम्मुख कोई संकट को गाना की इच्छा रखने वाला कम हैं। संकट को गाने वाले कम हैं और खुशहाली को व्यक्त करने वाले अधिक आपको मिलते रहते हैं। हम को भी वैसे ही मिले हैं। आपको भी वैसे ही मिलेंगे। इसको क्या व्याख्या करोगे? अस्तित्व में खुशहाली का बहार है या मातम का बहार है?

क्या कहेंगे ? यदि खुशहाली का बहार है तो हम प्रत्येक अणु में भी उसका नृत्य को देखना चाहेंगे। उसी क्रम में हमने अभी आपको इंगित कराया, ये परमाणु अंशों का जो एक नृत्य विधि से ही ये कम्पनात्मक गति आता जाता है। ये कम्पनात्मक गति होता काय के लिए है? कहा –ये जीवन परमाणु में अन्ततोगत्वा कम्पनात्मक गति ही वर्चस्वी हो जाता है, वर्तुलात्मक गति से अधिक वर्चस्वी हो जाता है। वहाँ तक पहुँचने के क्रम में बीज रूप है ये। ऐसा मुझको समझ में आता है।

प्रश्न : क्या जीवन परमाणु में कम्पनात्मक गति बढ़ने का जो कारण है, अंशों की संख्या का अधिक होना और तृप्त होना और केन्द्र में एक अंश होना ?

उत्तर : इसी कम्पनात्मक गति के आधार पर ही तृप्त परमाणु की घटना घटित हो जाता है। ये एक ऐसी व्यवस्था के रूप में इस धरती पर देखने को मिलता है।

बाबाजी 3 प्रश्न है एक तो मध्यांश के मध्य में जितने भी अंश रहते हैं, जो पार्थिव परमाणु में और जीवन परमाणु में एक ही अंश होता है।

ये तो कल आज आप हम निश्चित कर चुके हैं, परिवेशों में जितने भी अंश होते हैं, बीच (मध्य) में उतना ही अंश होते हैं, भौतिक रासायनिक परमाणुओं में। उसमें केवल घूर्णन गति ही होता है। एक अंश रहे, चाहे हजार अंश रहे, वो घूर्णन गति ही करते रहते हैं। तब तक ही उसका नाम है मध्यांश। घूर्णन गति से यदि विचलित होता है, वो परिवेश में ही होगी। इससे क्या मतलब निकलता है? ऐसे ही अंशों की बढ़ती-घटती हुई विन्यास को देखने पर लगता है कि जब अंश समाता है किसी परमाणु में, वो पहले बाह्य परिवेश में ही पहुँचता है। उस से उसके भीतर की परिवेश, उससे उसके भीतर की परिवेश, जितना मध्य में पहुँचता है, पहुँच जाते हैं। उनमें स्वयं में ही उस व्यवस्था क्रम में वो अनुपातीय हैं। अपने को स्थिर व्यवस्था के रूप में व्यक्त करने के लिए अनुपातीय हैं, क्या चीज़ परिवेशीय अंश और मध्यांश। अनुपातीय होने की विधि से वो स्वयं में व्यवस्थाकृत हो जाते हैं। स्वयं स्फुर्त विधि से व्यवस्थाकृत हो जाते हैं।

व्यवस्था कार्य को संपादित करते हैं, कृत होने का मतलब। और व्यवस्था कार्य को जब संपादित करते हैं, वो उस अंश को जितना संख्यात्मक अंश हैं, ऐसे परमाणु का आचरण अपने को बहुत ही विश्वासदायक विधि से मिलता है। उसको आप प्रयोग भी करते हैं, वो विश्वास को निभता है। ठीक बात हो गयी ये समझ मे आ गयी ? आ गयी ना तो ये प्रमुख बात है। ये समझ में आने से हर वस्तु को व्यवस्था के रूप में देखने की नजरिया आती है। व्यवस्था को यदि बिगाड़ने के लिए हम प्रवृत्त होते हैं, हमारा ही समझ हमको नियंत्रित करता है, ये करने योग्य काम नहीं है। ये किस आधार पर आता है? ये मनुष्य के जागृत होने के आधार पर आता है। भ्रमित रहने से उसको भी बिगाड़ो, इसको भी बिगाड़ो, इसको भी बिगाड़ो, इसको भी बिगाड़ो होता है।

उसका छोटा सा Project हो गया। project के रूप में आप देखना चाहेंगे, आप आदि काल से अभी तक बच्चे, संतान, माँ बाप के गोद में आते हैं, गोद में आते ही जैसे ही वस्तु को handle करने लगते हैं, उपयोग करने लगते हैं, हलचल पैदा करना चाहते हैं, सबको अलग-अलग कर तोड़कर, काटकर, टुकड़ा-टुकड़ा कर देखना चाहते हैं। ये क्या चीज़ है? ये भ्रमित रहने का लक्षण है। वो भ्रमित को हम जागृत करने के लिए शिक्षा देते हैं। काय के लिए शिक्षा देते हैं भ्रमित हो ने के लिए या जागृत। जागृति के बाद भी हम विखंडन ही करते हैं, तो हम जागृत हुए की भ्रमित हैं? माने शिक्षा के बाद भी हम विखंडन को ही पूजा मानते हैं, तो हम भ्रमित हैं कि हम जागृत हो गए? [भ्रमित] खतम हो गयी बात भ्रमित रहने के लिए यदि आप सारे बात जोड़े हैं, उसमें तो हम नारियल धूपबत्ती चढ़ाने के अलावा क्या करें?

प्रश्न : ये स्पष्ट हो गया ,मध्यांश मे घूर्णन गति से ---बल कैसे बदलता है।

उत्तर : मध्यस्थ बल क्या चीज़ है? आपको कल हम एक सूत्र बताए थे। मध्यांशों के पास यदि परिवेशीय अंश आने लगते हैं, उसको एक अच्छी दूरी में जो रहता, हुआ जगह में ही पुनः अवस्थित कराने के लिए, मध्यस्थ बल उपयोग हो जाता है। स्वयंस्फूर्त है वो। वो स्वयं स्फूर्त कैसा होता है? जो निश्चित अच्छी दूरी से वो लक्ष्मण रेखा से भीतर आने लगता है, वो मध्यस्थ बल को पता लगता है, संकेत होता है, भीतर आ रहा है। तुरंत अपने मध्यस्थ बल को नियोजित कर अच्छी स्थिति में पैदा कर देता है अच्छी स्थिति में अवस्थित कर देता है, अच्छी स्थिति को पुनः पैदा कर देता है। वो ही जो परिवेशीय अंश दूर भागने लगते हैं, विकर्षणीयता जब बढ़ जाता है, माने परिवेशीय अंशों में, तब वो दूर भागने लगते हैं। वो कहाँ से आता है, पूछा –परिवेशों से आता है। परिवेशों में तंरगों का, बल का आरोपण, प्रत्यारोपण होती रहती है, उस विधि से परिवेशीय अंश यदि आवेशित हो जाते हैं, विकर्षण की ओर चलते हैं। तब मध्यस्थ बल क्या करता है। उसको स्वभाव गति में आरुढ़ करके अच्छी दूरी में पुनः नियंत्रित कर देता है। इस ढंग से हर परमाणु अपने में नियंत्रित रहना, संरक्षित रहना बताई गई है।

व्यापक में सम्पृक्त रहने के आधार पर ही ये सब अपने अपने में सुव्यवस्थित रह कर संरक्षित रहते हैं। इस बात को बताया –हर परमाणु नियंत्रित रहना, क्रियाशील रहना, घिरे हुए रहने से नियंत्रित, डुबे हुये रहने से क्रियाशील, भीगे हुए रहने से बल सम्पन्न, ये बताया है। वो बल को ही हम मध्यस्थ बल के रूप में पहचानते हैं। सम-विषम बल के रूप में भी पहचानते हैं। ये ठीक है ये पहचान कोई बुरा नहीं है, नाम करण भी कोई बुरा नहीं है, वो अर्थ यदि समझ में आ जाता है। वो अर्थ यदि समझ में नहीं आता तो किसी भी नाम को रखो, वो अर्थ का पता ही नहीं है, सिर कूटी के इलावा क्या होगा! अर्थ समझ में आना चाहिए। परमाणु में होने वाली सम-विषम जो परिस्थितियाँ हैं, क्या हैं? परिवेश में जो अंश रहते हैं, वो मध्यांश के पास आने की एक विन्यास होती है। उसको एक नाम दिया जा सकता है, उसको आकर्षण बल कहा जाए या विषम हो गया, सम हो गया, कुछ भी आप नाम देते रहो। हमको क्या तकलीफ़ है इसमें! और वो यदि दूर भागना है, वो भी एक विन्यास है, वो विन्यास का भी कोई एक नाम दिया जा सकता है, नाम दे दीजिए। इन दोनों को सामान्य बनाने का ताकत मध्यांश में बनी हुई है। आता कहाँ से पूछा? आना-जाना नहीं है, होते ही हैं, होना है, आना नहीं है, भाषा को बदल दीजिए।

प्रश्न : कैसे होता है?

उत्तर : घूर्णन गति के बराबर में मध्यस्थ बल बना ही रहता है, हर अंश में रहता है। वहाँ एक प्रकार से समुहगत हो जाता है। काफी मात्रा से मध्यस्थ बल इकट्ठा रहता है और उसको प्रयोग करते हैं। जीवन परमाणु में एक ही अंश बता रहे हे, सुनो, मध्यस्थ बल, एक ही अंश से ये नियंत्रण के योग्य हो गई। वो कैसे आ गयी उसमें कम्पनात्मक गति plus हो गई। कम्पनात्मक गति के योगफल में कम्पनात्मक गति का सटीक उपयोग यदि कर रहा है, वो एक ही अंश मध्य में रह करके उपयोग करता है, वितरित करता है, संयोजित करता है, नियंत्रित करता है और जीवन परमाणु को एक स्वस्थ व्यवस्था के रूप में नियंत्रित कर रखता है एक अंश। उसमें क्या चीज़ plus होना पड़ा? वो जो वर्तुलात्मक गति से अधिक कम्पनात्मक गति, वो मध्यांश के साथ जुड़कर, वो ही केंद्र से जुड़ा है, जो अनेक कोण सम्पन्न है ये जीवन परमाणु भी, सभी कोण से कंपन होता है, वो केन्द्र से जुड़ा रहता है, खूँटे से बंधी रहती है, पूरा कम्पनात्मक गति खूँटे से बंधी रहती है। किस से? मध्य में रहने वाली एक अंश से जुड़ा रहता है। वो जैसा ऐसा-ऐसा करता है, जैसा करना चाहता है हलाया, वो सारे के साथ वो प्रभाव पड़ जाती है। फलस्वरूप नियंत्रित रहना बनता है।

प्रश्न : मध्यांश में अंशों में घूर्णन गति है, परमाणु में कम्पनात्मक गति है, घूर्णन गति नहीं है।

उत्तर : ऐसा नहीं है भई, पुनः वो ही बात हुआ! परिवेशों में जितने भी अंश होते हैं, उसमें घूर्णन गति होता है, वर्तुलात्मक गति भी होता है। वर्तुलात्मक गति का मतलब किसी गति पथ में आगे जाना, जैसा धरती।

प्रश्न : घूर्णन गति परमाणु में नहीं हैं?

उत्तर : हाँ, परमाणु में as a whole नहीं है। परमाणु में कम्पनात्मक गति होता है। परमाणु अंशों का कार्य का जो total है, वो कम्पनात्मक गति है। परमाणुओं का गति सहित ही एक परमाणु संज्ञा है, परमाणु नाम जो दे रहे हैं अपन कई अंशों का कार्य समूह को हम परमाणु नाम दे रहे हैं। इन सभी परमाणुओं का कार्य का जो वैभव है, एक कम्पनात्मक गति भी है, तो सभी ओर घूमने वाला भी गति है और इन दोनों के बाद वर्तुलात्मक गति भी है। इन तीनों का संयुक्त स्वरूप में एक परमाणु है। परमाणु घूर्णन गति है, ऐसा नहीं होता है, परमाणु वर्तुलात्मक गति है, ऐसा नहीं है। परमाणु में समाहित अंशों में वर्तुलात्मक गति, कम्पनात्मक गति, घूर्णनात्मक गति, इन तीनों को देखा गया है। ठीक है ना, ये तीनों एकत्रित हो करके एक परमाणु है। परमाणु घूर्णन गति को व्यक्त करता है, और कम्पनात्मक गति को व्यक्त करता है और वर्तुलात्मक गति को व्यक्त करता है। इतनी ही बात है, छोटी सी काम है! जैसा, इसको बड़े रूप में लाओ, धरती को, धरती अपने में घूमता ही है, अपने आगे-आगे सरकता ही है, उसको हम उत्तर कहते हैं।

क्या कहते हैं उत्तर कहते हैं धरती सूर्य के सामने सरकता ही रहता है, सरकने वाला दिशा को हम उत्तर कहते हैं। जो आगे-आगे जाता है, उस भाग को हम उत्तर कहते हैं। ये समझ में आता है? ये सूर्य के सभी ओर घूमता है, उसके बावजूद भी हम उत्तर कहते ही रहते हैं। ये समझ में आता है आपको? लगाइए बुद्धि इसमें, बुद्धि लगाए बिना ये समझ में नहीं आएगा। जो यहाँ से शुरू किया धरती, इसके चारों ओर घूमा है, घूमते घूमते घूमते उसका सिर यहीं है, आगे ही है। ये आगे भाग को ही हम उत्तर कहते हैं, यहाँ आएगा तो भी उत्तर कहते हैं, यहाँ आएगा तो भी उत्तर कहते हैं, यहाँ आएगा तो भी उत्तर, यहाँ आएगा तो भी उत्तर कहते हैं। ऐसा चारों तरफ़ ये घूमते हुए धरती में आगे सरकने वाले भाग है, उसको हम उत्तर कह रहे हैं। ऐसा मैंने देखा है। ये घूमता हुआ जो पृथ्वी है, अपने में घूर्णन भी करता है, ऐसा पलटता ही रहता है। इसीलिए उदयास्त सूर्य के सम्मुख होता रहता है। घूमते समय अपने आप में dancing भी करता है, अपने आप में नृत्य किया, वो कम्पनात्मक गति हो गई। ओ कम्पनात्मक गति की अभिव्यक्तियाँ अपने ढंग से होता है, वर्तुलात्मक गति का अपने ढंग से अभिव्यक्ति होती है, घूर्णन गति का अपने ढंग से प्रमाण प्रस्तुत हो जाता है।

ऐसे जो कंपन है ये सौरव्यूह में सम्पूर्णता में ये तीनों चीज़ समाई है। क्या क्या समाया भाई? कम्पनात्मक गति, घूर्णात्मक गति, वर्तुलात्मक गति। सूर्य घूर्णन गति में प्रतिष्ठित है, वहाँ वर्तुलात्मक गति नहीं हैं, उसको orbit में घूमना ही नहीं है। सूर्य कम्पनात्मक गति का धारक वाहक हो जाता है, पूरा सौरव्यूह का जो कम्पनात्मक गति है, उसका सूत्र उससे जुड़ी रहती है, सूर्य से जुड़ा हुआ। मध्य में यदि है सूर्य, सूर्य से ही जुड़ी हुई है, बंधी हुई है। कितना बढ़िया है ये काम? मध्यांश की तरह। इसी प्रकार परमाणु का बिलकुल हुबहू स्थूल रूप है ये सौरव्यूह। सौरव्यूह की क्रियाकलापों को ठीक से हम समझें, परमाणु को समझने में बहुत आसान। अति स्थूल रूप में यदि समझना हैं परमाणु को, ये सौरव्यूह ही है। गति प्रतिष्ठा में अंतर अवश्य होगी, परमाणु की गति अति तीव्र है, धरती का गति उतना नहीं है। इस सौर व्यूह

में भागीदारी करता हुआ किसी ग्रह गोल का परमाणु के समान गति किसी में नहीं है। हर धरती में परमाणुएँ समाई ही हैं, चाहे विरल रूप में हो, तरल रूप में हों, चाहे ठोस रूप में। क्या बात है!

बढ़िया बाबा।

19. पर्यावरण संतुलन

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 9, time 00:00 - 11:07](#)

प्रश्न : पदार्थवस्था के क्रम में नैसर्गिक संतुलन और पर्यावरण को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर : बहुत बढ़िया! नैसर्गिकता का पहले अपन समझ लें, हम सभी ओर से घिरे हैं जिससे, उसको नैसर्गिक कहा जा सकता है। जैसा ये चार दीवाल से हम घिरे हैं, दीवाल हमारा एक नैसर्गिक हो गया। ये घर, बहुत सारे झाड़, पौधे से घिरा हुआ है, ये भी इस घर का नैसर्गिकता हो गया। ये झाड़, पौधे और छोटे बड़े पर्वत, नदी, नाला, जंगल से घिरी हुई है, ये इसका नैसर्गिकता हो गया। इस विधि से चल करके हम यहाँ पहुँचते हैं कि इस धरती से ले कर ग्रह, गोल, नक्षत्र, आकाश गंगा से लेकर नदी, नाला, पहाड़, जंगल ये सभी चीज़ हमारे लिए नैसर्गिकता है। दूसरा भाषा है ऐसे नैसर्गिकता को हम पर्यावरण भी कहते हैं। हम जहाँ तक हस्तक्षेप कर सकते हैं, वहाँ तक को हम पर्यावरण कहते हैं। हस्तक्षेप के आधार पर पर्यावरण का सीमा निर्धारित होती है, नैसर्गिकता काफ़ी आकाशगंगा तक सारे अस्तित्व से घिरी हुई हम हैं और हरेक एक पूरा अस्तित्व से ही घिरी हुई है। अस्तित्व में सब कुछ समाया ही है। इस ढंग से नैसर्गिकता पर्यावरण का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। अभी नैसर्गिक विधि से चलकर नैसर्गिकता के साथ मनुष्य जो कुछ भी कार्य व्यवहार किया, इसका प्रभाव क्षेत्र क्या हुआ ? इसका अध्ययन ही कुल मिलाकर के पर्यावरण का अध्ययन है।

पहले अपन वो बात को तय कर चुके थे कि विज्ञान संसार आने के बार्द ईंधन संधान के बारे में हम विवेकी नहीं हो पाये, इसका परिणाम क्या हो सकता है, इसको सोच नहीं पाये, ईंधन को हमने गलत ईंधन को उपयोग करना शुरू कर दिया। गलत ईंधन दो ही चीज़ है, कोई एक हजार चीज़ भी नहीं है। पहला है खनिज कोयला, दूसरा है खनिज तेल। ये दो ही चीज़ हुई गलत ईंधन। मनुष्य के लिए विषाक्त³⁸ वस्तुओं से बनी हुई ये झाड़ पौधे दब करके कोयला बना है, कोयला में ही निहित तेल हमको खनिज तेल के रूप में मिलता है, ये बात को पहले स्पष्ट किया था। तो इसको जलाने पर जो मनुष्य के लिए हानिप्रद वायु है, उसको तैयार कर देता है। वो चारों तरफ फैलता है, अंततोगत्वा आदमी मरणासन्न स्थिति में आता है।

एक तो बात ये हुई। उसी के साथ-साथ और एक विन्यास कर दिया – ईंधनावशेष जो धरती की रक्षा कवच थी, उसको हस्तक्षेप कर दिया, उसको क्षति ग्रस्त कर दिया, धरती को बीमार बना दिया। ये कुल मिला करके अभी तक बीती हुई गाथा का परिणाम, दुष्परिणाम जिसको कहा जाए, वो इस ढंग से आ गई। इसको हम कहते हैं पर्यावरण का अध्ययन। तो दुष्परिणामों से जो हो गई है, हो गई है। उसको ठीक करने वाला कौन है ? मनुष्य ही करेगा। मनुष्य ही ठीक करने के लिए क्या कर सकता है ? या ये धरती स्वयं ठीक कर लेगा ? दोनों बात हो सकता है। हम एक यहाँ उदाहरण देना चाहते हैं, कोई भी आदमी रोगी होता है, उसको दवाई, पानी, पथ्य परहेज़ ये सब कराया जाता है। करने पर दवाई से रोग ठीक होता है, शरीर स्वयं रोग को ठीक कर लेता है, ये प्रश्न बना ही रहता है। उसमें हमारा

³⁸ विषाक्त : विष से युक्त, विष में बुझा हुआ; toxic, aconitic

देखना, सुनना, समझने की विधि से ये निकलता है, शरीर व्यवस्था ही रोग को ठीक करता है, वो शरीर व्यवस्था को बुलंद करने के लिए, प्रोत्साहित करने के लिए, उत्साहित करने के लिए हम दवाई देते हैं। ये हमने पहचाना है।

इसी भांति यदि हम पहले यह धरती जिस कारणों से रोग ग्रस्त हो गया है, क्षतिग्रस्त हो गया है, उसको हम क्षतिग्रस्त कार्यों को बंद कर देने पर संभवतः धरती अपने स्वास्थ्य को सुधार लें। ये एक संभावना बनी हुई है। इन संभावना के तहत हम काम कर सकते हैं, इसी को हम पर्यावरण संबंधी समस्या, समाधान कह सकते हैं। क्या समाधान करोगे भई? पहले ईंधन के बारे में नया विकल्प खोज लेना। वो कहाँ है? प्रवाह बल के रूप में बिछा हुआ है। प्रवाह बल को हम यांत्रिक बल के रूप में उपयोग करना, उससे बिजली को तैयार कर लेना, बिजली को इतना तैयार करना की चूल्हों से लेकर लोहा को गलाने तक हो जाए, मिट्टी के बर्तनों को पकाते से लेकर मुर्दे को जलाते तक उपयोग हो जाए। उसके बाद भी जो बिजली शेष रह जाए, सभी प्रकार के यान, वाहनों के उपयोग करने के बाद भी अधिक है, इस समृद्धि का अनुभव किया जाए।

इतना बिजली पैदा किया जाए। इसके लिए पूरा का पूरा व्यवस्था अस्तित्व में रखी हुई है। जैसा ब्रम्हपुत्र नदी है, ब्रम्हपुत्र में कम से कम न्यूनतम पानी जो बहती है और उसके प्रवाह बल को हम यदि यंत्र में 100 kms लम्बाई में विभिन्न तरीके से हम प्रयोग कर लेने पर भारत के लिए जितना बिजली चाहिए – रेल के लिए, मोटर के लिए, गाड़ी के लिए, घोड़े के लिए – पहले कही हुई सारे कर्मों के लिए जितना चाहिए, उससे दस गुना हम पैदा कर सकते हैं। दरिद्रता को हम सामने प्रस्ताव रखने पर कोई आदमी तैयार होगा नहीं, चाहे धरती डूब जाए, मर जाए, कोई परवाह नहीं। तो मनुष्य को समृद्ध होने की विधि से ही आज की आश्वासन, आज का कार्यक्रम, आज का योजना कारगर हो सकता है। मनुष्य को ऊर्जा का संपदा बहुत सारा चाहिए ही चाहिए। इसको उपयोग करना भी चाहिए जिससे कोई बड़ी हानि नहीं है, या पर्यावरण को बिगाड़ने का कोई काम कर नहीं रहा है, उस विधि से ऊर्जा को उत्पादन किया जाए और उपयोग किया जाए। पहले तो काम यही है।

उसके पश्चात दूसरे में तो कुछ काम भी किया है, वो है सूर्य ऊष्मा को ऊर्जा के रूप में हम प्राप्त कर लेना। उसके कुछ उपायों को सोचे हैं, वो बहुत ज्यादा सब के लिए सुलभ नहीं है, ये कमी है ही है, उसको सर्वसुलभता की गति को बना लेना। इससे भी बहुत कुछ आराम मिलता है।

तीसरा विधि यही है, तीसरा ऊर्जा स्रोत यही है, जो हर कृषि के साथ, कृषक के साथ, गौपालन की आवश्यकता गौपालन करने से गोबर गैस (gas) का कार्यक्रम, इससे ईंधन की काफी आसार बन जाता है।

ये तीन ऊर्जा विधि बहुत ही समीचीन है।

चौथा विधि यही है, हवा से हमारा आवश्यकता को पूरा करना। हवा के बल को हम pumping set में, उसमें, इसमें, जो हम generator में लगा करके अपना उपयोग कर लेना। ये भी एक चौथा उपाय बनी हुई है।

इन उपायों से हमारा ईंधन का जो कार्यक्रम है, उसको पूरा कर लेना। पहला ये हुई यांत्रिक विधि से होने वाला। उसके बाद आता है किसानों में ये जागृति की आवश्यकता है, हर एक किसान अपने खेत खलिहान में, आंशिक भाग में,

जंगल लगाने की आवश्यकता है। फलदार वृक्ष हो, उपयोगी वृक्ष हो, ऐसे वृक्षों को लगा के रखने की आवश्यकता है ही है। अब जंगल से तो कोई लकड़ी मिलने वाला नहीं है, ये तो थोड़े दिन और भी झूझ ले, उसके बाद तो एकदम नहीं मिलने वाला है, ये तो बात सच्चाई है। इसके लिए अभी से जागृत होने की आवश्यकता है। ये पुनः ईंधन की दूसरा एक स्रोत है ये।

उसी के साथ-साथ ये भी एक आवश्यकता है, हर किसान के पास ऐसे भी एक उदारता की आवश्यकता है और जागृति की आवश्यकता है, सचेष्टता की आवश्यकता है, जितना पाताल से हम जल को लेकर के उपयोग करते हैं, उतना ही या उससे ज्यादा पानी खड़ा करने योग्य किनारा, तालाब, कुआँ बना करके रखने की आवश्यकता है।

इस प्रकार की आवश्यकताओं को पहचानने से पुनः ये धरती अपने स्वास्थ्य को प्राप्त कर लेगा। ये सब दवाई है। किस के लिए? धरती अपने रोग को ठीक करने के लिए ये सब दवाईयाँ हैं, और कछु ना होए! हम जो है ना दवाई खाते हैं, गोली बुकनी के रूप में बहुत सारे दवाइयाँ खाए थे और धरती के लिए यही दवाइयाँ हैं। ये दवाई यदि प्रयोग में आने से धरती अपने स्वास्थ्य को सुधारने की प्रयत्न करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। इस पर आप लोगों को भरोसा होना चाहिए, सब को भरोसा होना चाहिए, अपने में एक सम्मिलित चेष्टा की आवश्यकता है। ये पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं को सुधारने के लिए एक बहुत सहज सुंदर होने वाली – ये भी नहीं कि आपको आकाश से कोई तारा उतारना हो – केवल हम हमारे विवेक का प्रयोग करने की बात है, आगत में आने वाले अनिष्ट को पहचानने की बात है, उसके विकराल तक वो मूल्यांकन करने की बात है, उससे बचने के लिए अपने स्वयं प्रवृत्ति को सजग बनाने की बात है। इसको किया जा सकता है। ये पर्यावरण सम्बन्धी जो आज की स्थिति है और उसका उपाय जो है, इस ढंग से छोटा सा स्वरूप में आता है।

20. विकास क्रम - पदार्थावस्था से ज्ञानावस्था

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 9, time 11:08-28:58](#)

प्रश्न : पदार्थावस्था से प्राणावस्था में विकास की व्याख्या ?

उत्तर : विकास की जो बात है, सीढ़ी जो बनी हुई है, चार अवस्था में यह धरती दृष्टव्य है। पदार्थावस्था – पदार्थावस्था में मृद, पाषाण, मणि, धातु – इन चारों प्रकार की चीजें, वो बहुत प्रचुर मात्रा में है ही हैं। ये धरती पूरा इसी पत्थर मट्टी से तो बना ही है। ये तो रहता ही है। इसी में से कुछ भाग यौगिक कार्य में शुरू करते हैं। यौगिक कार्य का मतलब ये है, दो प्रजाति की अणुएँ एक जगह में मिल लेते हैं, वो दोनों अपने-अपने आचरणों को त्याग देते हैं, तीसरे प्रकार के आचरण को शुरू कर देते हैं। जैसा – पानी को आप देखते हैं। इसमें दो प्रजाति की वस्तु होती है। एक वस्तु होता है जलने वाला, दूसरा वस्तु होता है जलाने वाला। इन दोनों मिल करके क्या कर देते हैं? अपना दोनों आचरणों को त्याग दिया। प्यास बुझाने वाले काम करने लग गए। तो इस ढंग से यौगिक परिवर्तन होता है। इसको रासायनिक ऊर्मि, रासायनिक उत्सव कहलाता है। ऐसे ही अम्ल भी बनता है, क्षार भी बनता है, इन तीनों के योगफल में अनेक रस रसायन बनता है। बन करके अंततोगत्वा प्राणकोशा बनता है, प्राणकोशा से झाड़, झंकार, जंगल, सभी बनता है।

बन करके आकाश चुंबी, दो-दो पत्ती वाला, छोटी-छोटी पौधे से लेकर आकाश चुंबी वृक्ष तक की तैयारी करते हैं, इनमें प्राण कोशाएँ अपने रचना विधियों को बदलते बदलते श्रेष्ठ श्रेष्ठतम रचना में जाते-जाते पूरा जंगल झाड़ी तो तैयार किया, उसके बाद जीव जानवरों का शरीर तैयार किया, मनुष्य शरीर को तैयार किया। प्राण कोशाएँ आप हमारे शरीर को भी तैयार किया है, और जो झाड़ जंगल भी तैयार किया है, जीव जानवरों के शरीर को भी तैयार किया है। इस ढंग से प्राण कोशाओं से बनी हुई संसार ये प्राणावस्था कहलाता है। प्राणावस्था इसी लिए नाम दिया है, प्राण कोशाओं में साँस लेना, साँस छोड़ने का काम चलता ही रहता है निरंतर, जब तक उसको हवा मिलता रहता है। उनको ज़रूरत की हवा मिलता रहता है, तब तक वो साँस लेता है, साँस छोड़ता है।

इसी लिए इसका नाम है प्राणावस्था प्राणावस्था, पदार्थावस्था से विकास है ही है। अब ये तो पता चलता ही है क्योंकि मट्टी पत्थर से तो भिन्न हैं झाड़ पौधे। उसके बाद जीव जानवर आते हैं, झाड़ झंकार से जीव जानवर अलग ही दिखते हैं। आपको पहचानने में आता है, मुझको पहचानने में आता है। जीवावस्था को हम प्राणावस्था से आगे और विकसित अवस्था के रूप में हम देखे हैं। विकास इसीलिए है, वो अपने हाथ-पैरों से चलने के योग्य हो गया, जल में भी चलने योग्य हो गया, स्थल में भी चलने योग्य हो गया, नभ में भी चलने योग्य हो गया। इस प्रकार की तीनों जगह में चलने योग्य जीवों को देखते हैं हम आप हर दिन, अहर्निश, जो ज्ञानी, अज्ञानी, विज्ञानी सब देखते हैं। सभी को ये दिखता ही है, एक सा दिखता है। ये इस ढंग से प्राणावस्था से भिन्न स्वरूप में जीवावस्था अपना वैभव को बनाए रखा है।

उसके पश्चात आता है चौथा स्थिति – मानव। मानव ज्ञानावस्था में है। मानव मन के अनुसार काम करने वाला है। कुल के अनुसार, वंश के अनुसार काम करने वाला नहीं है। एक किसान का बच्चा जा करके दर्जी बन सकता है, दर्जी का बच्चा minister बन सकता है, minister का बच्चा एक professor बन सकता है, एक professor का बच्चा कुम्हार बन सकता है, कुम्हार का बच्चा चोर बन सकता है, चोर का बच्चा और कोई बन सकता है, और

किसका, कोई रंग ही नहीं है, हर रंग भद-रंग। कोई ठिकाना विहीन आकार है ये। इस ढंग से मानव जाति आ गए सब, अब क्या करेंगे? अब इसमें क्या हो गई - मनुष्य को मनमानी करने वाली बात आ गई क्योंकि मनुष्य के पास कल्पनाशीलता कर्म स्वतंत्रता रखा ही है, इसके आधार पर मनमानी करने में आदी हुआ। मनमानी करते-करते पहले भगवान का भय, भगवान से डर भय, गायत्री से डर भय, गुरुजी से डर भय, डर भय से पहले शुरू किया। उसके बाद प्रलोभन में पहुँच गए। अब तो भय से काम नहीं बनेगा तो क्या की जाए? प्रलोभन। गुरुजी ये देही वो देही, देवता ये देही वो देही, यहाँ हम पहुँच गए।

उसके बाद ये भी पूरा नहीं हुआ तो विज्ञान आ गए। क्या कहा वो? गुरुजी नहीं देंगे, देवता नहीं देंगे तो खुद ही हड़प लोगे, ये बताया गया, ये ज्यादा सुगम लगा। हर पल हड़पन तो वाचा में हम शुरू कर लिए। अभी पूरा का पूरा संसार हड़पन तो वाचा सिद्धांत पर काम करने को तत्पर हो गया है। इसी हड़पने की जगह में जंगल झाड़ी सब को उजाड़ के रख दिया। इसी हड़पन तो वाचा की विधि से खनिज, कोयला, तेल सब को हड़प करके सत्यानाश करके रख दिया। और उसी बीच में कोई अच्छा-अच्छा काम भी हो गई जैसा ये रखा है। इसमें अपने आप शकलों का photo उतार देता है। इस बीच में बोचक³⁹ करके कोई अच्छे काम भी हो गए। शुरूआत हुआ है कुकर्म के लिए। मोटर-गाड़ी ये सभी विज्ञान की पहला शुरूआत कुकर्म के लिए ही है। आप मानिए! उसके बाद धीरे-धीरे वो कहीं ना कहीं बोचक जाती है।

प्रौद्योगिकी विधि से, प्रलोभन कार्य के लिए, लाभ को उत्पादन करने के लिए, बोचका करके लोगों को लपका दिया। पूरा हो गया बात। इस ढंग से हम कुछ अच्छे चीज़ पा गए। क्या पा गए भई? मोटर-गाड़ी, ये ऐसे अनेक यंत्र। इसको ऐसा कहा जा सकता है दूरश्रवण से, दूरगमन से, दूरदर्शन से सम्बंधित सभी यंत्र उपकरणों को हम पा गए हैं। ये कैसे पा गए? बोचक करके पाया है ये। ये शुरूआत जो सबको सुविधा देने के लिए बात नहीं रहा। सबको शोषण करने के लिए ही रहा। इसके बावजूद ऐसे स्थिति बनी हमको सुविधा के रूप में ये चीज़ उपलब्ध हो गई। इसको जीवंत बनाए रखना हमसे बनता है। इस ढंग से विज्ञान से कुछ अच्छे काम हुई, कुछ बुरे काम हुई। सबसे बुरे काम धरती के साथ हुई है। धरती को स्वस्थ बनाने की बहुत आवश्यकता है, उसके लिए पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने की आवश्यकता है। उसका जो सार भाग बताया, जो ईंधन की व्यवस्था का विकल्प हम यदि अपनाते हैं, ये धरती पुनः अपने रोग को दूर करने के लिए प्रयत्न करेगा जिससे हम इस धरती पर बहुत ही आश्वासन पूर्वक जी सकेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

प्रश्न : प्राणावस्था से जीवावस्था से रचना का विकासक्रम?

उत्तर : प्राणावस्था में बताया प्राण कोशा ही सभी रचना किए हैं, ये जो रचना करने वाले क्रम में प्राण कोशाएँ जो हैं अपने में रचना विधि को बदलते रहते हैं। एक प्रकार की रचना करने के बाद संतुष्टि मिलती है, वो संतुष्टि के बाद पुनः और रचना के लिए कोई विधि को अपने में स्वयं स्फूर्त करते हैं। इस ढंग से क्या होता है, दूसरे प्रकार की रचना शुरू हो जाता है। वो कहाँ से शुरू हुई भई? ये जो प्राणावस्था के पत्ति-पतंगड़ जहाँ एकत्रित हुआ वहाँ भुनगी कीड़ा तैयार

³⁹ बोचक - दायित्व अथवा वचन हीनता

हुई है। वो भुनगी कीड़ा से क्या हो गया? कोई चीज़ ऐसी हुई जैसा चींटी मकोड़ा में से अंडज हो गया। बाक्री क्या है, अपने आप से मर गए, पुनः वो सब उसका जितना भी अवशेष है, वो ही बीज रूप में काम करता रहा, पुनः पानी मिल गया तो उसी प्रकार की भुनगी कीड़ा हो गए। इस प्रकार से ये एक परम्परा बनी। इस भुनगी कीड़ा से अंडज संसार शुरूआत हुआ। वो अंडज संसार विकसित होते होते होते चिरैय्या, गौरैय्या, बहुत सारे जगह में पहुँच गया। वो ही धरती में चलने वाले भी आ गए, जल में चलने वाले भी आ गए, आकाश में उड़ने वाले भी आ गए। इस ढंग से बात आ गई। इसको परम्परा बनी। इसका परम्परा का एक अपना आधार बना। किससे विकसित हुआ ये? प्राणावस्था के झाड़ी जंगल से विकसित अवस्था ये माना गया, जैसा गाय, घोड़ा, गधा, कुत्ता, बिल्ली, ऐसे सभी जीव जानवर तैयार हो गए।

जब ये तैयार हो गए इससे अच्छा एक रचना की आवश्यकता बनी – मनुष्य शरीर का रचना। मनुष्य शरीर का रचना उसके बाद शुरू हो गई, ये सब तीनों तैयार होने के बाद। मनुष्य तैयार हुआ तो कहाँ तैयार हुआ होगा? जंगल में। जंगल को मैदान बनाया, मैदान बना करके घर बनाया, घर बना करके गाँव बनाया, बस्ती बनाया, नगरी बनाया, सड़क बनाया, ये रेल, गाड़ी, घोड़ा, सब चला-चुला करके दिखा दिया। यहाँ तक हम आ गए हैं। तो इस ढंग से क्या हो गई? जीवावस्था में जो विकास स्पष्ट हुई और प्राणावस्था से ज़्यादा लगा, और जीवावस्था से अधिक विकास मानव में स्पष्ट। इस ढंग से एक प्रकार से अभी वस्तुओं का उपयोग करने के विधि में, भाषा के विधि में, मनमानी करने के विधि में, ये सब में जीवों से ज़्यादा दिखाई पड़ रहा है, आपके सम्मुख, मेरे सम्मुख। ये हो गई, इस ढंग से इसको हम विकास कहते हैं।

प्रश्न : जीव अवस्था में जो निर्माण क्रम है शरीर का, उसमें प्रचलित प्रश्न है कि मुर्गी पहले की अंडा पहले?

उत्तर : इसका बात ऐसे आता है बाबा, वो अभी आपको बताया – पत्ता पतंगड़ एकत्रित होने से भुंगी कीड़ा तैयार हुआ। इसका नाम है स्वेदज संसार। स्वेदज से अंडज connect हो गया। आपको खुद पता लगता है, मुर्गी तैयार हुआ कि अंडा तैयार हुआ? अंडज संसार विकसित होते-होते मुर्गी तक आया और हंस तक गया, मोर तक गया, एक तक गया, तीन तक गया, सब कुछ हो गया। इस ढंग से बनी हुई है। वो ही अंडज संसार पिंडज संसार तक हुआ दिया, जोड़ दिया। पिंडज संसार में गाय, घोड़ा, कुत्ता, बिल्ली सब आ गए, मनुष्य भी आ गए। इस ढंग की ये विकास को पहचानने की विधि बनी।

(इसका मतलब है किसी स्वेदज ने पहली बार अंडा दे दिया) वो और ज़्यादा विकसित होता गया, होता गया, सभी प्रजाति बन गए। पहले कीड़ा मकौड़ा बना। उसके बाद अंडा बन गया, वो अंडे का परम्परा बनी। स्वेदज कीट मकौड़े में से अंडज संसार स्थापित हुई, अंडज संसार पिंडज संसार को हुआ दिया, connect कर दिया, पिंडज संसार में मानव एक इकाई है। इस ढंग से जुड़ी हुई है। इस ढंग से बीज विधि बनी, अंडज, पिंडज, स्वेदज और उद्भिज्ज। उद्भिज्ज का मतलब है धरती को फोड़ करके नीचे से आता है। ठीक बात हो गई? इस ढंग से बीज विधि बनी। उसका नियंत्रण आया। मनुष्य जो है ना अपने समझदारी के आधार पर जीता है, नियंत्रित रहता है। संस्कार के आधार पर, समझदारी के आधार पर जीता है आदमी। जीवों का काम वंश के आधार पर जीने की बात हुई, ये प्रमाणित हुई और वनस्पतियाँ

बीजों के आधार पर परम्परा बनाने की बात हुई। उसको विज्ञान विच्छेद करने के लिए कोशिश कर रहा है। ये सब बातें आपके सम्मुख हैं।

प्रश्न : जीवावस्था के शरीर की स्थिति, उसमें जीवन का प्रकाशन, जीवन का स्वरूप किस प्रकार है ?

उत्तर : जीवन का स्वरूप तो एक ही होता है, गठनपूर्ण परमाणु कहलाता है। वो ही जीव शरीर को भी चलाता है, मनुष्य शरीर को भी चलाता है। इसमें इतना ही है, जीव शरीर में जो ज़्यादा रुचि लेने वाले जीवन जीव शरीर को चलाते हैं और मनुष्य शरीर में रुचि लेने वाले जीवन मनुष्य शरीर को चलाता है। इतने ही बात है। तो जिसमें जिस जीवन को रुचि हो जाए। इस ढंग से शरीर को चलने वाली बात होता है।

शरीर रचना में जो विशेषताएँ हैं, वो ऐसे शरीर में जीवन उस शरीर को चलाता है जिस शरीर में मेधस तंत्र बहुत अच्छा विकसित हो गया है। और मनुष्य में आ करके मेधस तंत्र पूर्णतया विकसित हुआ है। इसमें जानने, मानने, पहचानने की और उसको प्रकाशित करने की, प्रमाणित करने की पूरी योग्यता समाई हुई है। इस ढंग से सबसे ज़्यादा विकसित शरीर रचना मानव शरीर रचना है, उसके बाद जीव शरीर रचना है। उसके पहले जितने भी झाड़ झंकार ये सब रचनाएँ होते हैं, ये सब प्राण कोशा से ही होते हैं। जीवन एक अलग चीज़ है, शरीर रचना एक अलग चीज़ है। शरीर रचना advanced होता है। जीवन जो है एक परमाणु का स्वरूप में गठनपूर्ण स्थिति में वो अपने वैभव को प्रकाशित करता है। इस ढंग की काम है ये, छोटा सा काम।

प्रश्न : जीवावस्था के किन शरीरों में जीवन प्रकाशित हो रहा है, इसको कैसे पहचाना जाए ?

उत्तर : उसको पहचानने की विधि ये है -ये तो सप्त धातुओं से रचित हुआ शरीर - नम्बर एक। समृद्ध मेधस हो - दो। उसके बाद मानव का संकेतों को ग्रहण करता हो, वो सभी जीव में जीवन ही संचालित किया रहता है। जिनमें मानव के संकेतों को ग्रहण नहीं कर पाता है, उस शरीर को जीवन संचालित नहीं करता है। जीवन ही जीवन को सुनता है। अभी आप भी जो सुन रहे हो, मैं जो बोल रहा हूँ, सुनते हैं, बोलते हैं, ये जीवन ही बोलता है, जीवन ही सुनता है। और कोई चीज़ सुनने वाला नहीं है। ठीक हो गई? इस ढंग से मानव का संकेतों को ग्रहण कर लेता है, ऐसे जीवों में जीवन काम करता रहता है।

उदाहरण - गाय, गधा, घोड़ा, गधे से भविष्यवाणी को कराते हैं, चिरैय्यों से कराते हैं। नहीं कराते हैं? गाय से कराते हैं। ये सब मानव का संकेतों को सुनते हैं कि नहीं सुनते हैं? सांप भी सुनता होगा कोई प्रजाति की, कोई प्रजाति का नहीं सुनता होगा, क्या आपत्ति हो गई? जो-जो मानव का संकेतों को ग्रहण कर पाता है, अनुकरण कर पाता है, वो सब में जीवन है ही।

प्रश्न : जैसा चमगादड़ पिंडज है, तो उसमें कैसे देखें ?

उत्तर : उसको परीक्षण करने की बात है क्या मानव का संकेतों को क्या ग्रहण करता है? पिंडज होने मात्र से ही सभी मानव का संकेतों को ग्रहण करना है, ऐसा कोई कायदा नहीं है। इसको हमको परीक्षण करके ही देखना है। हम दो-चार परीक्षण करके देखा हूँ, हमारे लिए पर्याप्त है ये। और जो परीक्षण करना है, करते रहिए।

प्रश्न : बाबाजी इसका अर्थ ये है क्या कि जो जीव अवस्था में जितने भी जीव हैं उन सब में जीवन परमाणु होता है क्योंकि मानव संकेत को ग्रहण कर सकते हैं वो।

उत्तर: सप्त धातु से शरीर रचित हो –पहला उसके बाद मेधस तंत्र समृद्ध हो गया– दो, उसके बाद मानव के संकेतों का ग्रहण करता हो अनुकरण करता हो (ऐसे जीव कितने हैं, कौन कौन से हैं?) हम तो बताए ना भाई दो चार को हम परीक्षण किया, आप परीक्षण करिए(यानी इसकी संभावना है कि बहोत सारे जीव हैं) बहोत सारे जीव होंगे। हम तो दो-चार, जैसा की अभी गधा, घोड़ा, कुत्ता-बिल्ली की बात किया, इसमें मानव का संकेतों को ग्रहण करने की उचित व्यवस्था है, इसीलिए इनको जीवन संचालित करता है, मैं ऐसा कह रहा हूँ। ठीक है?

21. जागृति क्रम

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 9, time 41:22-55:44](#)

प्रश्न : बाबाजी क्या पाँच अवस्था की संभावना है ?

उत्तर : देखिए, यदि मानव जागृति को प्रमाणित नहीं करेगा, यदि प्रमाणित करने योग्य नहीं है, तो पाँचवी अवस्था हो जाएगी। इसमें आपको क्या तकलीफ़ है, मुझको क्या तकलीफ़ है ?

(जैसे एक-दो आदमी कर रहे हैं, बाक़ी नहीं कर रहे हैं? तो पाँचवी अवस्था हो जाएगी)

यदि आप इस प्रकार से बोलते हो वो यदि एक-दो आदमी जाग्रत हुआ है, बाक़ी लोगों के लिए तो झक़मारी है उसको अनुकरण करना। दूसरा कोई रास्ता ही नहीं है। यदि ये सच्चाई है जो मैं कह रहा हूँ, ये जागृति का प्रमाण है, ये परिपूर्ण है और इससे मानव जाति पूर्णतः भ्रम से मुक्त हो सकता है, उस स्थिति में पाँचवी प्रजाति का कोई अवसर नहीं है। यदि इससे होता ही नहीं है, जैसा दो प्रकार की चिंतन फैली हुई है और काला दीवाल के सामने खड़ा हुआ है, यदि ये भी काला दीवाल के सामने खड़ा होने की स्थिति में और ये चौथे प्रकार की विचार ही आएगा, नहीं तो पाँचवें प्रकार की प्रजाति ही पैदा होगा, दो में एक होगा। इसमें क्या तकलीफ़ है ?

देखिए स्कोप के बारे में हम कहीं भी ताला लगाने का अधिकार नहीं होता है। स्कोप को हम सारे कल्पनाशीलता का उड़ेल करके हम स्कोप को कल्पना कर ही सकते हैं।

प्रश्न : बाबा जीवन परमाणु के आधार पर जागृति की अवस्था में मानव को विभाजन किस तरह से होता है ?

उत्तर : वो तो विभाजित है ही है – भ्रमित आदमी, जागृत आदमी। भ्रमित आदमी पशु मानव, राक्षस मानव के नाम से जाना जाता है, जिनका दृष्टियाँ होती हैं प्रिय, हित, लाभ। विषय प्रवृत्तियाँ होती हैं चार प्रकार, आहार आदि, चार विषय और स्वभाव होता है दीनता, हीनता, क्रूरता। कहता कुछ है, करता कुछ है, सोचता कुछ है, होता और ही कुछ है। इतना भद्रंगी जात होता है आदमी जो पशु मानव राक्षस मानव है।

उसके बाद मानव आता है। मानव का दृष्टि बनती है न्याय धर्म सत्य। प्रधानतः न्याय को पालन करने वाला होता है, परिवार में परस्परता में सम्बंध को पहचानने योग्य होता है, मूल्यों को निर्वाह करने योग्य होता है। माँ को माँ ही समझता है, बाप को बाप ही समझता है, भाई को भाई ही समझता है, उन मूल्यों को सतत निर्वाह करता है, सुखी होता है, समृद्ध होता है, इसको मानव पद कहते हैं, नाम कहा गया है।

उसके बाद इससे और जागृति, और जागृति का प्रकाशन प्रमाण प्रस्तुत करता है देव मानव। देव मानव में दो दृष्टियाँ धर्म प्रधान होता है और धर्म सत्य प्रधान होता है। उसके बाद विषय जो होती है, केवल लोकेषणा शेष रह जाता है। मनुष्य में क्या रहता है ? पुत्तेष्णा, वित्तेष्णा, लोकेषणा – तीन रहता है, उसके बदले में देव मानव में केवल लोकेषणा

शेष रह जाता है, बाकी एषणाएं गौण हो जाते हैं और सदा-सदा उपकार करने में उनका प्रमाण बनता है, दया पूर्वक कार्य करता है।

दिव्य मानव क्या कर देता है? दिव्य मानव का मतलब ये होता है – पूर्ण जाग्रत रहता है, उसको कोई लोकेषणा भी नहीं रह जाता है। वो अपने जागृति को प्रमाणित करने के लिए मानव परम्परा में सतत काम करता रहता है और उसका सिद्धांत ये है – सुखी बना करके सुखी रहना बनता है, ये सिद्धांत है, उसको प्रमाणित कर देता है। इतनी ही बात है, छोटा सा काम! हम दूसरों को जीने देकर जीते हैं, ये दिव्य मानव का काम है। सुखी बनाकर जो सुखी होते हैं, इसीलिए दिव्य मानव समाधानित करके समाधान को प्रमाणित करते हैं। ये दिव्य मानव का काम प्रमाणित हो करके प्रमाणित रहते हैं ये दिव्य मानव का काम है। इस प्रकार की छोटा सा काम करता है दिव्य मानव। ठीक है? और पशु मानव राक्षस मानव सारे बड़े-बड़े काम कर डाले हैं। ये काहे का मतलब है? मतलब इत्ते है! तो इस ढंग से बिलकुल एक धारा प्रवाह, सुखद धारा बह रही है।

अभी जो है ना मानव परम्परा भ्रमित परम्परा को ही पाल रखा था। उसमें हम एक बार चिंतित हुए, या पीड़ित हुए, उसको हम खोजने के लिए शुरू किया। उसको जाग्रत मानव के पद में हम अपने को आरूढ़ किया, प्रतिष्ठित किया, प्रमाणित किया, उसके पश्चात बाक़ी लोग भी जागृत हो सकते हैं, उसके लिए हम शुरुआत किया। शुरुआत क्या कर दिया भाई पूछा? तो मनुष्य में विश्वास पैदा करने के लिए जीवन विद्या कार्यक्रम लाए, मानव परम्परा में मानवीयता को स्थापित करने के लिए शिक्षा का मानवीयकरण योजना को तैयार कर लिए हैं और उसको भी प्रमाणित करने के क्रम में हम हैं और उसके बाद सर्वमानव एक अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था के रूप में प्रमाणित होने के लिए परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था योजना को अलग लागू करने के लिए तैयारी किए हैं। हरी हर, छोटा सा काम!

व्यापक वस्तु है, व्यापक वस्तु में प्रकृति अनंत इकाइयों के रूप में हैं। ये सभी का सभी चार अवस्था में हैं। ज्ञानावस्था की इकाई दो भाग में है – भ्रमित और जागृत। अभी हम जागृति के पक्ष में काम करने के लिए हम तन, मन, धन को लगाए पड़े हैं, ये हमारा काम है। हमको इसमें सुख है, प्रसन्नता है और सफल होने से भी प्रसन्नता है, असफल होने में भी हम प्रसन्न हैं। जैसा हम प्रयत्न करते हैं कि यहाँ एक बढ़िया स्कूल हो जाए, मानवीय शिक्षा यहाँ हो जाए, ऐसा हम चाहते हैं। तो यहाँ रहने वाली ये बैठी है। ये नहीं भी चाहती है, नहीं भी कर पाती है, हम तभी भी इनसे प्रसन्न रहते हैं। ये कर भी लेते हैं, कहने के लिए सोने पर सुगंधी हो गई। पहले से प्रसन्न, और प्रसन्न। ये ही सब जगह में, सर्व देश काल में हमारा संबंध ऐसे है। हम सफलता के स्थिति में भी हम प्रसन्न रहते हैं, विफलता के समय में भी हम प्रसन्न रहते हैं। तो आज इस देश काल में आप नकारते हैं, आगे की देश काल में आप स्वयं सकारेंगे। इस विधि से हम चल रहे हैं।

प्रश्न : बाबा जैसे जागृति का कार्यक्रम बहुत जल्दी नहीं हो पाता है, इसके बाद भी आपकी प्रसन्नता में फ़र्क नहीं पड़ता ?

उत्तर : उस आधार पर है, आपको सुख स्वीकृत है, सहमति है, आपमें, मुझमें, जो नकारने वाले, सकारने वाले, सबमें शुभ की स्वीकृति है, सहमति है। ज़िम्मेवारी नहीं है। इस ढंग से हम खुश हैं। आज ज़िम्मेवारी नहीं है, कल हो जाएगा। इसमें क्या तकलीफ़ है, बताओ ? ये भी नहीं है सभी ग़ैर ज़िम्मेवार होंगे, ऐसा भी बात नहीं है। कोई ना कोई

ज़िम्मेवार मिलते भी तो जा रहे हैं। इन आधारों पर हम विफलता में भी खुश रहते हैं, सफलता में भी खुश रहते हैं, क्योंकि बेहोशी में सुंदर ही दिखता है हमको। तो आज जहाँ विफलता रहती है भविष्य में उसका सुंदरता सफलता में ही दिखता है। विफलता सदा-सदा के लिए पूँजी है, हमको ऐसा दिखा नहीं है। विफलता क्षणिक है, सफलता ही निरंतर है। क्या बात है! क्या बात है!

हम आप सभी, मैं समझता हूँ जो आज ज़िम्मेवार नहीं हैं, ईमानदार नहीं हैं, वो भी शुभ की ही निरंतरता चाहता है। आज जो स्वयं ज़िम्मेवार नहीं है, वो भी चाहता है। जो ज़िम्मेवार, ईमानदार है, कहना ही क्या है, वो तो करेगा ही करेगा, नाच के करेगा, उछल के करेगा और सफल बनाकर करेगा। इस आधार पर हम सुखी रहता हूँ।

प्रश्न : बाबाजी एक प्रश्न है वित्तेषणा और लाभोन्माद के बीच में, क्या सीमा लिखा है, कहाँ पर वो अलग होते हैं?

उत्तर : देखिए, लाभोन्माद और वित्तेषणा से क्या मतलब है? वित्तेषणा का मतलब है – समृद्धि के अर्थ में वित्तेषणा है। समृद्धि जो है उपयोग, सदुपयोग और प्रयोजनशीलता के अर्थ में सार्थक है। जहाँ तक की ये है लाभोन्माद, संग्रह सुविधा के अर्थ में है। संग्रह सुविधा भोग, बहुभोग, अतिभोग के अर्थ में है। सोच लीजिए आप ही, किस में व्यवस्था होगा, किस में अव्यवस्था होगा?

प्रश्न : आदमी को जागृत करने के लिए, सुखी समृद्धि बनाने के लिए हजारों बरस से शिक्षा की परम्परा रही है। आज जहाँ पर आकर मानव खड़ा हो गया है, आज भी उसके द्वारा सम्पूर्ण तृप्ति, सम्पूर्ण समृद्धि की स्थिति नहीं बन पाई। तो जीवन विद्या के प्रकाश में मध्यस्थ दर्शन में जो कुछ भी आपने प्रतिपादित किया है, उसके मुताबिक शिक्षा का स्वरूप और मनुष्य के संस्कार का क्या स्वरूप होना चाहिए?

उत्तर : अभी वो बात हो गई, मानव, देव मानव, दिव्य मानव शिक्षा मिलती है। शिक्षा क्रम में यह शिक्षा मिलती है, कम से कम मानव, न्यूनतम जागृति, मानवीयता को प्रमाणित करने योग्य बना देते हैं। तो उससे अमानवीयता से मानवीयता में संक्रमण हो जाता है। संक्रमण माने वापस राक्षस मानव पशु मानव बन नहीं पाएगा, उस जगह में आ जाता है। जैसा मैं, पशु मानव राक्षस मानव बन ही नहीं सकते, चाहे कुछ भी हो जाए, ये मानिए। तो ऐसे स्थिति में आदमी आ जाता है। आदमी आने के बाद करेगा क्या? आगे देव मानव ही बनेगा, दिव्य मानव ही बनेगा, उनका रास्ता ही उधर हो गया, इधर वाला रास्ता ही समाप्त हो गया। दोनों के उत्तर दक्षिण हो गया, उत्तर में चलने वाला दक्षिण की ओर घूम गया, या दक्षिण में चल रहा है वो उत्तर में घूम गया, ऐसा हो गया, पीठ दे दिया। ऐसा हो गया काम।

ऐसा होने का पहला जो लक्षण है, प्रमाण है, वो पुत्रेषणा, वित्तेषणा, लोकेषणा में आता है। वो किसकी जगह में है? लाभोन्माद, भोगोन्माद, कामोन्माद के स्थान पर पुत्रेषणा, वित्तेषणा, लोकेषणा में आता है। कितना बढ़िया? ठीक है? तो इस प्रकार से जब परिवर्तन होता है, ये पुनः वापस जो पीछे के स्वरूप के बारे में जाना, सम्भव ही नहीं रह जाता है। इसको हम संक्रमण कहते हैं। इस संक्रमण को ज्योतिषी में बहुत अच्छा प्रयोग किया है, उसी में ये संक्रमण की बात भी समझ में आता है। जो पीछे ना आवे, उसी का नाम है संक्रमण। ठीक है? ये बात कही गई है, तो सूर्य की गति में, चंद्रमा की गति में, धरती की गति में, उसकी गति में, इसकी गति में, सारे ग्रहों की गति में संक्रमण की

बात कही गई है। इस ढंग से हम पहुँचते हैं पुत्रेष्णा, वित्तेष्णा, लोकेष्णा में। आहार निद्रा विषयों में, लाभोन्माद, भोगोन्माद, कामोन्माद में, कितना दूरी है, आप स्वयं सोच लो। इन उन्मादों में आदमी आत्मीयता को क्या प्रमाणित कर पाएगा? पूछ के देखिए। यदि प्रमाणित करता होगा तो करा लीजिए! हमारे अनुसार तो होने वाला नहीं है। इसीलिए क्या करना पड़ेगा? तो हम उन्मादों से मुक्ति पाना बहुत ज़रूरी है। उसके लिए शिक्षा ही एक मात्र संसार है। उसके साथ साथ युवा और बुजुर्गों के साथ सहमति पाने के लिए जीवन विद्या कार्यक्रम दे दिए। शिक्षा से आगे पीढ़ी को हम शिक्षित कर लिए। इस ढंग से आगे पीढ़ी को हम एक स्वच्छ मानव पद में संक्रिमित कराने की काम कर सकते हैं। जिनको इसमें उद्देश्य बनता है, उत्साह बनता है, आवश्यकता बनता है, संभावना बनता है, समर्थ रहते हैं, ये सभी इस प्रकार के काम कर सकते हैं।

22. शिक्षा संस्कार योजना

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 9, time 29:29 -41:22](#)

प्रश्न :बाबाजी पुराने समय में जो शिक्षा प्रदान की, लोगों को उसमे क्या कमी रह गई ?

उत्तर :सहअस्तित्व के रूप में अस्तित्व समझ में नहीं आया। अस्तित्व के बारे में जितने भी सोचे हैं देश विदेशों में, उनको सहअस्तित्व तो समझ में नहीं आया है। और जो अध्यात्मवादियों ने अध्यात्म को अस्तित्व माना है, बाकी को अस्तित्व मानवइ नहीं किया। खतम हो गए, भट्टा साफ हो गए। ठीक है। और भौतिकवादियों ने अस्तित्व ये माना, मार पीट करके अपन मोटाएं, बाकी को मार डालें, इसको अस्तित्व वो मानते हैं। क्या अस्तित्व ये हो सकता है? दोनों का परिभाषा इसी स्वरूप में बैठी हुई है। तो कहाँ बन पाएगा, आप ही बताओ। अस्तित्व तो दोनों को समझ में नहीं आया। जीवन दोनों को समझ में नहीं आया। खतम हो गया बात, इन दोनों बिन्दु समझ में ना आने के फलस्वरूप शिक्षा, शिक्षा का एक निश्चित झांकी, निश्चित प्रयोजन, निश्चित विधि, निश्चित लक्ष्य, निश्चित दिशा, इन चीजों को निर्धारित करने में हम असमर्थ रहे।

यही बात हुई है। आज जो है अस्तित्व को सहअस्तित्व रूप में समझना बहुत सहज दिखता है हमको। जो, अभी जितने लोग समझे हैं, उन लोगों के मन मस्तिष्क में भी ऐसी ही आती है, लहर। तो अभी आगे चल करके, बहुत सारे लोग, बहुत सारे लोग, और बहुत सारे सब लोग समझते तक अपन इस प्रकार के प्रयत्न करते ही रहेंगे, ये कहीं तो रुकने वाला तो है ही नहीं। हम अकेले कोई सुपूत तो हो नहीं सकते, धरती में सुपूतों की कमी रहेगी नहीं। जब कुपूतों की कमी नहीं है तो सुपूत काहे को कम होगा भाई, तर्क विधि से। क्या कहते हो? जब कुपूतों की कमी नहीं है तो सुपूतों की काय को कमी होगा। होगा? क्या आपका कहना? होना चाहिए कि नहीं होना चाहिए, सुपूत भी होना चाहिए कि नहीं होना चाहिए, कोई होगा कि नहीं होगा? होगा, तो सुपूत होते हों, वो कर ले जाएँगे, ठीक हो गई, ना।

प्रश्न :बाबा शिक्षा, संस्कार योजना, ऐसा जो शब्द आपने दिया है, उसमे योजना से आपका क्या आशय है?

उत्तर : शिक्षा, संस्कार, योजना तीन शब्द है उसमें, शिक्षा का मतलब है शिष्टता पूर्ण दृष्टि को विकसित करना, है न। शिष्टता का ध्रुविकरण मानवीयता पूर्ण आचरण में जाता है। ठीक है। तो शिष्टता पूर्ण आचरण का सार्थकता अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी करने में प्रमाणित होता है। शिष्टता पूर्ण दृष्टि को विकसित करना, उसका प्रमाण कहाँ होता है? अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था सूत्र से काम करने की जगह में प्रमाणित हो जाता है। एक परिवार से शुरू होता है। परिवार में समाधान समृद्धि पूर्वक जीना प्रमाणित होता है। ये अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी करने का एक बीज वस्तु है। वो स्थिती आती है, उसमें भागीदारी करेगा, इस ढंग से शिष्टता का मतलब समझ में आता है। संस्कार का मतलब होता है समझदारी, समझदारी का मतलब होता है अस्तित्व को समझने से समझदारी, जीवन को समझने से समझदारी, मानवीयता पूर्ण आचरण को समझने से समझदारी, इस प्रकार से समझदारी का format अपने में बिल्कुल पूर्ण है। इससे ज्यादा कुछ होता भी नहीं है, इससे कम में समझदारी पूरा होता भी नहीं है। इसको क्या किया जाए? एक ये हुआ, संस्कार का मतलब समझदारी। समझदारी आने की बाद जो

बात होता है मानवीयता पूर्ण आचरण, वो उसके साथ जिम्मेदार होने से, ईमानदार होने से और भागीदारी करने की क्रम आता है, वो भागीदारी करने की क्रम में मानवीयता पूर्ण आचरण प्रमाणित होता है, इन प्रमाणित होने के स्वरूप को हम कहते हैं संस्कार। ठीक है। शिष्टता पूर्ण विधि से प्रयोग भी होता है, समझदारी पूर्वक भी प्रयोग होता है, समझदारी और शिष्टता का योगफल में हम सामाजिक होते हैं। क्या बात है। समझदारी हो, शिष्टता हो तभी सामाजिकता प्रमाणित हो पाती है।

प्रश्न : बिना समझदारी शिष्टता हो सकती है क्या ?

उत्तर : होते ही नहीं है, दिखावा होता है शिष्टता जैसा। ठीक है ?

प्रश्न : समाधान शब्द को, और समाधान को जैसा आपने केंद्र बिन्दु बनाया है, समाधान को संपूर्ण चिंतन के मूल में भी, उसको थोड़ा आप स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर : ये बहुत अच्छी बात है, ये थोड़ी सी ध्यान देकर अपने मन में बैठाने की बात है, लक्ष्य और दिशा दोनों जहाँ मिलते हैं उस जगह का नाम है समाधान। लक्ष्य निश्चित हो और उसको दिशा निर्धारित हो वो दोनों का संयोग हो जाय, माने लक्ष्य के साथ दिशा छू जाय, दिशा सहित हम लक्ष्य को छू लें, लक्ष्य को सार्थक बना लें, इसका नाम है समाधान। ठीक है ? इस ढंग से समाधान का परिभाषा बनता है। तो ऐसे समाधान सर्वतोमुखी समाधान, सर्वतोमुखी समाधान का मतलब है, मनुष्य के अनेक आयाम होते हैं, कोण होते हैं, दिशा होते हैं, और परिपेक्ष्य होते हैं, इन सभी विधाओं में, मनुष्य जो है ना समाधान को प्रमाणित करता है। लक्ष्य को, लक्ष्य के साथ दिशा को जोड़कर निश्चित प्रयोजन को सिद्ध करना है, इसी का नाम है, क्या नाम ? समाधान। और दूसरा तात्त्विक परिभाषा में ये आता है, क्यों, कैसा का उत्तर हो जाये, ये समाधान। ठीक है ? परिवार में व्यावहारिक परिभाषा बनता है, समाधान, समृद्धि से जीना, समाधान। समृद्धि पूर्वक जीना, समाधान। संबंधों को पहचानना, मूल्यों को निर्वाह करना, उभय तृप्ति पाना, ये समाधान। इस ढंग से व्यावहारिक परिभाषा बनती है। इन परिभाषा से जीने वाला आदमी ही होता है, दूसरा कोई होता नहीं, ठीक।

प्रश्न : मनुष्य जो है समाज में हजारों हजार बरस से जीता रहा बहुत सारी उम्मीदों को ले कर। लेकिन समाज से जो उम्मीदें हम लोगों ने की थीं, वो आज तक पूरी नहीं हुई। तो वास्तव में ये आदमी, आदमी के साथ जुड़ा हुआ समाज और जिसको हम सामाजिकता कहते हैं वो क्या चीज़ है ? और आपके मध्यस्थ दर्शन के रोशनी में उसका कौन सा स्वरूप बनाता है, जिसकी वजह से हम उस सच्चाई को समझ के, सामाजिकता को हम छु सकते हैं ?

उत्तर : कौन सा ऐसा सच्चाई है कि सामाजिकता को छु सकते हैं, बात यही होता है। देखिए, तो उसके लिए एक ही बहुत छोटी सूत्र है, प्रत्येक एक अपने त्व सहित व्यवस्था है, समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है। इसको अपने को समझने की आवश्यकता है। परमाणु भी अपने त्व सहित व्यवस्था है, अणु भी है, अणु रचित रचना भी है, और जीव संसार भी है, और पशु संसार भी है, वनस्पति संसार भी है। सभी अपने-अपने त्व सहित व्यवस्था के रूप में ही होते हैं, और समग्र व्यवस्था में उनकी भागीदारी रहती है। धरती भी अपने में त्व सहित व्यवस्था है, और समग्र व्यवस्था में भागीदारी कर ही रहा है। इसी प्रकार हर एक-एक को हम जितने भी छोटा-बड़ा सोच पाते हैं, वो सभी में ये गुण

समाई हुई है। पहले इस बात को अपने को स्वीकारना होगा, साक्षात्कार करना होगा, और उसको अवधारणा में अपने को स्वीकारना होगा। ठीक है। ये बनता है, तो मनुष्य भी मानवत्व सहित व्यवस्था है और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करेगा। तो मानवीयता को हम पकड़ना बहुत जरूरी रहा, मानवीयता को पकड़ने के लिए मानव का परिभाषा चाहिए, मानव का परिभाषा होने के लिए जीवन और शरीर का व्याख्या चाहिए, वो हम कर नहीं पाये थे विगत में कहीं।

उसका कोई उदाहरण नहीं है, ठीक है, उद्वरण भी नहीं, उदाहरण भी नहीं है। तो हम अनेक लोगों को श्रेष्ठ मानव मानते आये हैं, ये बात सही है, ठीक है। इसको मान लेने में हमारा क्या गया है। कहीं न कहीं हमको, कहीं न कहीं धैर्य ढाढ़स से बना है, उपकार का ही, कृतज्ञता के ही भाव बना हुआ है, हम कहीं भी बरबाद नहीं हुए हैं। वो स्वयं, ये श्रेष्ठ मानव हुआ था, नहीं हुआ था, उनका जिम्मेदारी है, ठीक बात हो गया, हम किसी को, आपको श्रेष्ठ मानना हमारा कोई नुकसान नहीं है। आपका, आप अपने में श्रेष्ठ होने में ही आपका फायदा है, ये मेरा सोचना है, सोचने की तरीका ये है। हम आपको श्रेष्ठ मानने से, हमारा कोई नुकसान नहीं होता, हम इसको अलथा-कलथा करके देख लिया। ये मानने की बात हो गई, उसके बाद जानने की बात आता ही है, जानने की बात आने से पता चला मानवीयता पूर्ण मानव ही श्रेष्ठ मानव है, देव मानव ही उससे श्रेष्ठ मानव है, दिव्य मानव परम श्रेष्ठ मानव है।

ये बात आ ही चुका, ये पूरा झांकी अपने में सजने की व्यवस्था है ही है। अध्ययन की व्यवस्था है ही है। वो यदि ठीक लगता है, उसके लिए मन प्राण को निछावर करने की बात हर व्यक्ति के साथ जिम्मेदारी के रूप में जुड़ा ही है। जो इच्छा होता है निछावर करेगा, जो इच्छा नहीं होता है नहीं करेगा। क्या बात है? कोई नुकसान नहीं है। किन्तु इसमें जो हमारा उत्सव है, प्रयत्न है, और प्रयास है, इसमें जो हमको जो सुख मिलता है, इसमें कोई कमी भी नहीं होती है। पहले, देखिए आप भले ना करें, आपका सहमति तो आप व्यक्त करते ही हैं। क्या करते हो? सहमति तो व्यक्त करते हो, भले ना करो भाई। अच्छा, जो सहमति व्यक्त करते हो ना, उसी से हम जीवित रहता हूँ।

प्रश्न : सहमति जो है करने की पहली सीढ़ी है।

उत्तर : ठीक है ना, उतने से ही जीना हमको सुखद हो गया, यदि आप प्रमाणित ही हो गया, तो हम कैसे होंगे, आप सोच लो।

23. स्वावलम्बन

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 9, time 55:45-1:06:47](#)

मानव कुल में समाधान के अनंतर स्वावलंबन की बात आती है। स्वावलंबन का जो मूल रूप होता है, परिवार की आवश्यकता उसका मूलभूत स्वरूप है। परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना, इसी का नाम है, स्वावलंबन। तो आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने का जो, अर्हता जो है, परिवार में इसीलिए रहता है, हर एक मनुष्य में जीवन शक्तियाँ अक्षय बल, अक्षय शक्तियाँ होने के आधार पर आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना सहज संभव है, जिससे मानव कुल में समृद्धि की बात शुरुआत हो सकती है। कम से कम परिवार में ये बात को, हर एक परिवार में इस बात को परीक्षण किया जा सकता है और प्रमाणित किया जा सकता है।

प्रश्न : बाबाजी, ये जो मनुष्य के जीवन का बहुत महत्वपूर्ण जो मुद्दा है, खासकर आज के जमाने में रोजी-रोटी का भय, और वो भय मनुष्य को बहुत प्रकार से करने योग्य कामों को करने नहीं देता, और बहुत सारे ना करने लायक जो काम हैं, चोरी, भ्रष्टाचार, दबाव, कुंठा, उसको करने की बाध्यता हो जाती है, तो आज का आदमी, आज के जो भारतीय परिस्थितियाँ हैं उसमें, स्वावलंबन के क्रम में क्या कर सकता है, स्वावलंबन का स्वरूप क्या है? आज हम उसको व्यवहार रूप में उतार के रोजी रोटी के भय से, किस तरह मुक्त होकर सच्चाईयों की तरफ गतिशील हो सकते हैं?

उत्तर : उसके बारे में भी बात हुई, हर परिवार में एक आवश्यकता का, एक सीमा बनती है और स्वावलंबन तभी सार्थक होता है जब समाधानित होते हैं हममें। भारतीय परिस्थितियाँ हों, अभारतीय परिस्थिति हों, इसमें इसको कोई मतलब नहीं रखता। स्वावलंबन समाधान के बाद संभावित हो जाता है। और उसका शुरुवात यहीं होता है परिवार की निश्चित आवश्यकताएँ होते हैं, परिवार के, परिवार में जितने भी भागीदार रहते हैं, प्रत्येक व्यक्ति ही परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने योग्य वो रहते हैं, क्योंकि समाधान सम्पन्न होने की बाद इस प्रकार की स्थिति बनती है। उसका दूसरा बहुत ही आश्वस्त होने की बात ये है, आज भी उत्पादक जो होते हैं, ये धरती में दस प्रतिशत से पंद्रह प्रतिशत आदमी उत्पादन करते हैं, बाकी सब लोग खाये रहते हैं। आज भी वैसे ही है, किन्तु इसको हम नहीं अनुभव कर सकते हैं समृद्धि को, अनुभव इसलिए नहीं कर सकते हैं, हम समाधानित नहीं हैं, मूल में ये है। समाधानित होने के उपरांत मनुष्य में स्वाभाविक रूप में समृद्धि का अनुभव करने का स्वाभाविक गुण पैदा हो जाते हैं और समाधान में समृद्धि सहयोगी है। साथ साथ दूसरा विधि भी सोचा जा सकता है, समाधान के अनंतर समृद्धि भावी है, ऐसा सोचा जा सकता है।

तो संग्रह सुविधा विधि से भी हम समृद्ध नहीं हो पाते हैं, दूसरा भक्ति विरक्ति विधि से भी समृद्ध नहीं हो पाएंगे। ठीक है, तो समाधान समृद्धि, ये इसका शुरुवात है, ये प्रत्येक परिवार में इसको परीक्षण कर देखा जा सकता है। इसको हमने स्वयं परीक्षण कर देखा है, तो इसमें कोई तकलीफ नहीं होती है। थोड़ा सा अपने मन को एक सजाने की बात है ये, मन सज गया माने ठीक हो गया। मन में सजने का मतलब क्या है, दीन-हीनता से मुक्ति पा जाएं, माने पराधीनता

ही बहुत अच्छी चीज़ है, इसको हम मान के रखे रहते हैं, उससे मुक्ति पाना जरूरत है। तो समाधानित हुए बिना, आदमी की स्वावलंबन को अनुभव करने के अर्हता नहीं हो पाती है, जबकि करते सारा, बहुत परिश्रम करते ही हैं, करने की उपरांत भी समृद्धि का अनुभव नहीं होता है, भ्रम वश। और वही, बस समझदार होने की पश्चात समाधान होता ही है, समाधान के आधार पर हम समृद्धि का अनुभव करते ही हैं, ये करने का अधिकार बनते ही हैं, साधारण बात है ये।

प्रश्न : इसको बाबाजी, ये जो जटिल सवाल है उसका एक पहलू और, कि समाधान के अनंतर तो एक बहुत बढ़िया समृद्धि का अनुभव भी होगा, स्थिति भी बनेगी, लेकिन अभी आदमी जहाँ पर खड़ा है दीनता-हीनता में, वहाँ से उसको समाधान तक पहुँचते तक यात्रा में स्वावलंबन का क्या..?

उत्तर : उसमें स्वावलंबन की अपेक्षा ही एक मात्र विधि रहती है, (अपेक्षा तो है) अपेक्षा रहना आवश्यक है, अपेक्षा होना और उसमें निष्ठा होना, निष्ठा होने की बाद क्रियान्वयन होना, ऐसा गति है इसका। तो तब तक जो है यही, जो कहीं ना कहीं समाधानित होने के लिए, हम जो समझदारी को बोना है, समझदारी को लोकव्यापीकरण करना है, उसको करना ही होगा, उसके पहले हम समृद्ध करा दें, बाद में समझदार होते रहें, ये सोचेंगे न, ये एक शेखचिल्ली होगी, ये ऐसा होने वाला नहीं है।

प्रश्न : इस बात को क्या आप किसी उदाहरण से स्पष्ट कर पाएंगे, कि जैसे आज भारत के बारह करोड़ से ज्यादा नौजवान लोग बेकार हैं, तो उनके लिए हम खेती को महत्व दें, या विज्ञान शिक्षा को महत्व दें, उद्योग तंत्र को हम उनके..?

उत्तर : पुनः अपन कहीं पहुँच गये, ये तो सब महत्व को देने वाले भाषण। देखिए, महत्व को देने वाले भाषण तो हर दिन होते ही हैं। उससे बात बनता नहीं है, उससे कुछ भी नहीं बनता, बनता है समझदारी से। समझदारी को अभी कोई शिक्षा दे नहीं पाया है। दीन-हीन बनाना, बेकार बनाना, शेखचिल्ली बनाना और कुछ भी नहीं है तो उसके पश्चात अपने आपमें मनमानी करने के लिए छोड़ देना, वो अन्ततोगत्वा छाती का पीपल होना, यही आज तक देखा गया है। तो शिक्षा में ना तो दिशा है, ना लक्ष्य है, उसके बाद आप कहते हो कि बेकार आदमी! बेकार बनाने के लिए ही पढ़ाया गया है, मने आदमी बेकार हो, अपराधी हो, संघर्ष हो, मरे, कटें, इसी के लिए तो पढ़ा करके छोड़ देते हैं, और क्या कहेंगे? ये इसी विधि से है ही है। ये बहुत साधारण है, ये होना ही है, समाधान शिक्षा अपने पास नहीं है। समाधान शिक्षा में स्वावलंबन समाहित है। और समझदारी के लिए सह अस्तित्ववादी शिक्षा की आवश्यकता है। सह अस्तित्ववादी शिक्षा में ये समाधान आता ही है, समृद्धि के लिए रस्ता, दिशा, कोण, सभी समीचीन हो जाता है। समझदारी के बिना आदमी स्वावलंबी होगा ही नहीं, कोई नहीं हुआ आज तक, आज तक तो हुआ नहीं।

प्रश्न : बाबाजी ये जो बोल रहे हैं आप, ये तो जब परंपरा हो जाएगी, समाधान की..

उत्तर: वो, तो परंपरा होने के लिए काम करो।

प्रश्न : उस स्थिति की बात बोल रहे हैं, आज वर्तमान में जिस परिस्थितियों में है?

उत्तर : जो परिस्थितियों में है, उसी परिस्थिति में आदमी समझदार होने का गेट खुला है।

प्रश्न : उसका क्रम बताइए ना थोड़ा।

उत्तर : क्या क्रम होता है। शिक्षा विधि से समझदार होना, और कौन सा क्रम। कहाँ बैठे हो, अभी तक।

प्रश्न : वो शिक्षा में launch नहीं हुआ है बाबाजी, अभी स्थापित नहीं होगी, जब स्थापित होगी उसके बाद।

उत्तर : रोना धोना कर ही रहे हैं, जैसा कर रहे हैं, वो ही करेंगे, चोरी चमारी, जान मारी, जो होना है, वो करेंगे। ये दुष्टता की शिक्षा, उसमें आप साधुता की परिकल्पना, ये कैसा होगा? ये शिक्षा में एक भी आदमी आज तक स्वावलंबी हुआ नहीं है। ये आप मानिए। तो स्वावलंबी होने के लिए शिक्षा ही नहीं है, आप जो है ना शिक्षित होने की बाद बेकार होना। वो ही आदमी है, नौकरी मिल गया तो चतुर हो गया, नौकरी नहीं हो गया तो दीन-हीन हो गया। जबकि पढ़ा दोनों आदमी एक ही है, ठीक है। इसका क्या मतलब भाई, इस शिक्षा का क्या मतलब, भाई आप ही बताओ। वो ही आदमी।

अब वो ही आदमी है, नौकरी मिल गया तो सभी जिम्मेदारी को सोंप दिया जाता है, नौकरी नहीं मिल था तो कोई जिम्मेदारी का अर्हता है ही नहीं, अब बागते रहो। ये आपके सामने दिखता ही है, फिर क्या है। इसमें तुरंत जो करने योग्य है, जो यदि किसी के पास मादा हो, आदमी को समझदार बनाया जाय। दरिद्रता से, दीनता से, हीनता से, दुष्टता से, छूटने की रस्ता समझदारी से निकलती है। दूसरा कोई विधि से आप सोचेंगे तो सब वृथा है, मगजमारी है, इसके अलावा कुछ नहीं होता है। अच्छा दूसरा विधि से कोई कुछ कर देना चाहते हैं, वही आदिकाल से आयी हुई, भूखे को दाना दे दिया, नंगे को एक कपड़ा दे दिया। ये तो कोई चीज़ बनता नहीं है, ये सब चीज़ें बेकार बात है। ये तो परंपरा ने वो सब कर-कुरा करके क्षत-विक्षत हो चुका है। इसलिए यदि स्थायी हल चाहिए, वो समझदारी परंपरा ही होगा, समझदारी के अनंतर ही समाधान होगा, समाधान ही है, वो रस्ता, वो स्वावलंबन होने की रस्ता। समाधानित बुद्धि के बिना काहे को स्वावलंबी होगा भाई आदमी, कैसा होगा?

24. भाषा

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 10, time 00:00-12:27](#)

प्रश्न : भाषा के मामले को ले करके एक समग्र दृष्टिकोण, उसमें दो तीन बिंदु बनते हैं बाबा, एक तो ये कि भारत में अभी 14 भाषाएं प्रचलित हैं, तो बच्चों को हम क्या पढ़ाएं, पहले तो ये सवाल, एक तो भाषा फार्मूला, जैसे लोकल भाषा पढ़ाएं, हिंदी भाषा, अंग्रेजी ऐसा एक चलन है। तो भाषा के आपसी झगड़े की वजह से भारतीय भाषाएँ तो उपेक्षा में चली गई और अंग्रेजों जाने के बाद अंग्रेजी का वर्चस्व जाग उठा। ये दुर्घटना हुआ तो इस मामले में क्या आप कहना चाहेंगे, और दूसरा भाषा की स्वयं की अक्षमता, सत्य को कहने में व्यक्त करने में भाषा की जो अक्षमता है, उसको भी देखना पड़ेगा। मानवीय भाषा की बात आप करते हैं, तो मानवीय भाषा से आपका क्या आशय है, उसका स्वरूप क्या है? उसके द्वारा भाषा की समस्या आती है, उसका निवारण कैसे होगा?

उत्तर : यह तो बहुत साधारण बात है, इसके लिए अपन ने इसके पहले भी बहुत सारा इसमें नज़दीकी बिंदुओं को देखे हैं, तो मानवीय भाषा कारण, गुण, गणित के रूप में संपूर्ण होता है, सत्य को उद्घाटित करने के लिए कारणात्मक, गुणात्मक, गणितात्मक भाषा का उपयोग करना आवश्यक है। ये तीनों मिलकर के मानव भाषा कहलाता है। मानव भाषा की विशेषता यही है, या अर्हता यही है।

[कारण, गुण, गणित को ज़रा विस्तार से समझाइये] कारण के मतलब जो कुछ भी है, जो कुछ भी दिखता है हमको और जहाँ तक कल्पनायें जाते हैं, ये सब किस विधि से है, होने का तो कारण को बताना है, होने का कारण को समझना, होने का कारण को समझने की पश्चात, उसमें गुण को कैसा पहचाना जाये, स्वभाव को कैसा पहचाना जाये, धर्म को कैसा पहचाना जाये, ये बनता है! उसमें से गुणों को जब पहचाने जाते हैं, फलों के आधार पर, फलित होने के लिए गुण को पहचाना होगा, गुण के साथ ही क्रिया-कलापों का एक निश्चयन हो पाना बनता है। तो ऐसे निश्चयन को पाने के क्रम को हम गुणात्मक भाषा कहेंगे। और जो स्वभाव धर्म, व्यापक, अस्तित्व, इसको समझने का जितने भी भाषा है, उसको कारणात्मक भाषा कहेंगे, वो होने का ही, ये दोनों, दोनों बात जुड़ता है, गणितात्मक भाषा स्वाभाविक बात है, गणना को, गणना मनुष्य के लिए एक अवश्यक कार्य है, हर बात के लिए, काल के लिए, विस्तार के लिए, गणना के लिए, ये सभी गणितात्मक भाषा के अवश्यकता है, उसको ऐसा देखा गया है।

कुल मिला करके जोड़ना, घटाना। कुल मिला करके गणित, इससे ज्यादा गणित में कर ही नहीं सकते, इससे कम में कोई गणित होता नहीं, छोटी सी बात। उसमें दो प्रकार, एक शून्य को पहले रख करके, संख्याओं को लिख करके, हम घटाना जोड़ना मानते हैं, करते हैं। उसके दूसरे विधि से शून्य को अंत में रखते हैं। किसी भी राशी का एक भागों के साथ जोड़ना घटाना, पहले शून्य को रख करके, संख्याओं को लिखने से बन पाता है, और जो किसी राशी राशी को, एक एक राशी को जोड़ना, जोड़ना घटाने की बात, शून्य को बाद में रखने से बन पाता है, ये इस विधि से हम जोड़ना घटाने की काम करते हैं, इसको पढ़ा हुआ भी करता है, नहीं पढ़ा हुआ भी कर लेता है। काम की गणित सबके लिए सुलभ है। ये सबको आता है। और गुणात्मक, कारणात्मक भाषा में आदमी को निष्णात बनाना, पारंगत बनाना, एक अवश्यकता है! इसमें क्या हो जाता है? जीव जगत, अस्तित्व, विकास जागृति, जागृति क्रम, विकास

क्रम, ये सभी चीजें हमको विदित होने की गति आती हैं। ये विदित होने से हमको ये पता लगता है कि हमारा मुल्यांकन, हमारा स्थिति, हमारा अर्हता को हम गणना कर पाते हैं। फलःस्वरूप उसको नियोजित कर पाते हैं। हमारा स्थिति ही पता नहीं है, हम काहे को नियोजित करेंगे भाई। अभी शिक्षा में सबसे बड़ी भारी दुविधा यही है, मनुष्य की अर्हता को बिल्कुल भुलावा दिलाना बराबर शिक्षा। भुलावा दिलाया तो स्वाभाविक है, भयभीत होता ही है आदमी। होने का तो इच्छा सबमें होता है, होता भी है आदमी! नहीं होता है ऐसा भी नहीं है, आप हम ऐसा भी नहीं कह सकते।

होने के बाद वो बने रहना, होते ही रहना, एक इच्छा हो पाता है, ऐसे होते रहने के लिए जो कुछ भी साधन है, पहचान है, ये दोनों साथ-साथ की आवश्यकता है, पहचान प्रस्तुत करने का भी बिल्कुल निश्चित अवसर चाहिए! और जो साधन चाहिए, साधन क्या ऊपर से आता है, आकाश से आता है, नीचे से आता है, कहाँ से आता है सेंध मारने से आता है सोचने की बात है। उसमें ये ही निकलता है कि मनुष्य अपने श्रम नियोजन पूर्वक, प्राकृतिक ऐश्वर्य पर उपयोगिता मूल्य, कला मूल्य को स्थापित करता है, वो हर व्यक्ति में ये संभावना बनी हुई है, कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जो ये कर नहीं सकता है। दूसरा और एक प्रकृति में यह भी एक अध्ययन है, कि हाथी भी अपना पेट भरता है, चींटी भी अपना पेट भरता है, पढ़ने की बाद आदमी पेट भर नहीं पाता है! यह एक अच्छा काम है न, परंपरा की शोभायमान कार्य है ये, इस कार्य को संभालकर के रखे रहने पर पूंजी बढ़ेगा ही बढ़ेगा। क्या पूंजी बढ़ेगा?

दुखड़ा गाने का पूंजी बढ़ेगा। उसका विपरीत में आदमी को सार्थक चला जाये, समाधानपूर्ण शिक्षा दिया जाए, स्वावलंबन शिक्षा दिया जाए, और स्वयम में विश्वास करने योग्य शिक्षा दिया जाए, इसके लिए आप हमें यदि समर्थ मानते हैं कि इसमें अपने को प्रवर्त होना चाहिए! उसमें प्रवृत्त होने में हमारा निष्ठा है। खतम हो गया बात, छोटी सी बात। ऐसी निष्ठा की बात आती है, उसमें जो जो अपने को अर्पित करने चाहते हैं यह प्रवाह बनेगा। जैसे बेवकुफी का प्रवाह बन सकता है, समझदारी का भी प्रवाह बनेगा, यह बेवकुफी के लिए आदमी जब तैयार हो पाता है, सिर कटाता है दीन, हीन, बेवकुफ बन करके घूमता रहता है रस्ते में। उसके बदले में बुद्धिमान, योगी, और चरित्रवान, व्यक्तित्ववशाली, उपयोगी, स्वावलम्बी, संसार को उपकार करने वाले व्यक्तित्व को तैयार किया जाय। यही आज की आवश्यकता है। उसी को जांचना, इसके क्रम में आप हम यहाँ जुटे हैं, मेरे अनुसार। क्या इससे यह सब संभव है या नहीं है? अभी जो आप हम करने जा रहे हैं, इसी को जांचने की क्रम है। यह संभव है, तो उसमें अपने जी जान लगाने की कथा है। यदि नहीं हो पाता है, तो जैसे हो रहा है, उसको भोगने की कथा है! भोगने के लिए आपको कुछ करना नहीं है, भोग ही रहा है यह आदमी। ठीक है? यदि लायक बनाने की बात आती है, अपने जी जान लगाना चाहिए। यही बनता है।

प्रश्न : भाषा के संदर्भ में यह बात, भाषा पर बात हो रही है? उसके संदर्भ में यह बात स्पष्ट करना आवश्यक है कि शब्द में अर्थ होता है, अब तक हम ऐसा मानते रहे हैं, वस्तु में अर्थ होता है, यह बात स्पष्ट हो जाए। उस आधार पर अस्तित्व के सारे वस्तुओं को हम समझ लें, उसके लिए नाम दे दें। यह अगर हम एपरोच लेते हैं, भाषा को ठीक से समझा जाता है। और इतनी जो भाषाएं हैं, इनमें जो भी विभिन्नता दिखती है, उसको भी ठीक किया जा सकता है।

उत्तर : हाँ वो कुल मिलकरके भाषा का मतलब है वस्तु बोध होना। जैसा 'अस्तित्व', 'राम' एक शब्द, 'ईश्वर' एक शब्द है, शब्द तो हम जानते ही हैं। मैं समझता हूँ, यहाँ जितने भी बैठें, यह सब जानते हैं। अस्तित्व बोध हो जाय, अस्तित्व वस्तु है, व्यापक वस्तु है, एक एक वस्तु का समुच्चय को हम अस्तित्व कह रहे हैं, वस्तु बोध हो जाय, इसका नाम है अध्ययन। पहले जो कहते हैं नाम का स्मरण, नाम को याद रखो। हम को पहले 'शब्द' को ही प्रमाण बताते रहे हैं, जबकि वस्तु प्रमाण है। हमारे शास्त्रों में लिखा है, शब्द प्रमाण, आप्तवाक्य प्रमाण। उसके बाद प्रत्यक्ष अनुमान, आगम प्रमाण, ऐसा लिखा हुआ है। तीन प्रमाणों की चरित्र, इतिहासी लिखा है, राम कथा लिखा है। हमारे यहाँ तो ऐसा ही लिखा है, और उसके बाद शास्त्र प्रमाण। क्या करोगे ?

तो उसके बाद आया यंत्र प्रमाण, किस प्रमाण के साथ आदमी चले ? आदमी के लिए क्या प्रमाण है ? मनुष्य के लिए, अनुभव किसमें होते है ? तो मनुष्य में होता है, और व्यवहार कौन करेगा ? मनुष्य करेगा, प्रयोग कौन करेगा ? मनुष्य करेगा। तो क्या क्या प्रमाण हुआ ? अनुभव प्रमाण, व्यवहारप्रमाण और प्रयोगप्रमाण ही मानव परंपरा का सम्मान जनक प्रमाण है। बाकी प्रमाण ठीक है, अपन भोगते आये हैं। ऐसी बनी हुई हैं महाराजजी, परिस्थितियाँ ऐसी बनी हैं, हमको बताया गया है, व्याकरण का भी ऐसे ही मंतव्य है, जो पद जो होता है, जो कुछ भी पद हमको समझ में आता है, वो शब्दों में होता है, जबकि वस्तु में पद होता है। अब उसके लिए क्या किया जाए ? हम ये सब कैसे हम मान लें ? यदि उसी को मानते हैं, तो उसी को मानते रहें। उसी को मानने पर ये सब परिणाम हो चुकी है, कहीं न कहीं पहुँच चुके हैं हम। ठीक है ? उसका परिणाम में अभी बोला, करोड़ों करोड़ों आदमी बेरोजगार होकर के घूम रहे हैं।

सब किस आधार पर आ गया ? इतिहास के आधार पर ही तो आया है ये। इतिहास के अनुसार जो कुछ भी मान्यताएं हो उन मान्यताओं के आधार पर, यंत्र प्रमाण के आधार पर हो, शब्द प्रमाण के आधार पर हो, ठीक है न भाई, और स्मृति के आधार पर हो, श्रुति की आधार पर हो, विद्वता को प्रदान करने की बात हम कह ही रहे हैं। इसी इसी फॉर्मेट में कर ही रहे हैं। ठीक है न ? श्रुति, स्मृति ये दोनों चीज़ शब्द प्रमाण के आधार पर ही है। और इस प्रकार से हम विद्वानों को बनाने के बाद सड़क में घूम ही रहे हैं। अब क्या करोगे ? इसीलिए समझदारी सम्पन्न परंपरा को स्थापित करने की जरूरत है। समझदारी जो आती है परंपरा में, अस्तित्व सहज विधि से ही आता है, नियति सहज विधि से आता है, विकास सहज विधि से आता है, जागृति सहज विधि से आता है। जागृतिपूर्वक प्रमाणित होता है, इतनी ही बात है। छोटी सी काम है, इसको सम्पन्न किया जाय।

25. गणित

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 10, time 12:28-23:27](#)

प्रश्न: अब गणित पर आते हैं बाबा, इसमें दो-तीन सवाल बनते हैं, पहला तो ये है कि आपने शिक्षा के मानवीयकरण की बहुत गहरी बातें की हैं। गणित एक विषय है, तो गणित विषय का मानवीयकरण क्या संभव है और कैसे होगा? दूसरी बात, गणित जो है जिसको हम लोग संख्याओं का खेल जोड़ना घटाना मानते हैं, पढ़ते भी हैं परंपरा में, उसके उपर आपने विल्कुल एक नया दृष्टिकोण दिया है। ऐसा हम लोगों ने कई बार सुना, किताबों में पढ़ा। उसको स्पष्ट करें कि गणित के बाबत आपका दृष्टिकोण क्या है? आपने विचारधारा दी है, और गणित का मानवीयकरण करके कैसे आप उसको पढ़ाएंगे?

उत्तर : शिक्षा का मानवीयकरण की बात की गई है और गणित का मानवीयकरण के कोई बात, जिक्र नहीं किया है। पहले एक तो बात होगा शिक्षा का मानवीयकरण होगा। तो मानवीयकरण का मतलब है समझदार बनाना। तो उसमें से ये बात आता है, जो भाषा आता है, वो कारण गुण गणितात्मक भाषा है। इस तीनों का परस्पर पूरकता विधि से पहचानने की आवश्यकता। तो गणना मर गणित, अभी मानव व्यवहार दर्शन में ये लिखा गया है, गणना को अपन गणित लिखा है, परिभाषा किया है। गणना के बारे में क्या कहा है? जोड़ना घटाना, इतने ही बात किया है। शून्य पूर्व, शून्य पर, इतना ही लिखा है। पहले शून्य लिख करके गणना करना, और बाद में शून्य को लिख करके गणना करना। क्या गणना? जोड़ना घटाना। अभी जितने भी करेगा, जो आदमी जितने भी करेगा न, इससे अधिक कुछ भी नहीं कर सकता। गणित का मतलब इतने ही संभावना है, इससे लंबाई, चौड़ाई कुछ भी नहीं है। कोई भी calculus पढ़ लो, जोड़ना ही है, घटाना ही है।

नाम आप 2000 रख लो, 2000 किताब पढ़ लो! हम आज इसमें ज्योतिषी की सारे गणित विधियों को देखा, वो सबका आर्थिक नहीं, जोड़ना ही है, घटाना ही है। काल विधि से चलो, जोड़ना घटाना है। विस्तार के विधि से चलो, जोड़ना घटाना है। दूरी के विधि से चलो, जोड़ना घटाना है, तोल के विधि से चलो, जोड़ना घटाना है। इसके अलावा दूसरा कुछ कर दोगे, ये कुछ आदमी की बल की रोग नहीं है। ये 700 करोड़ आदमी का बल की रोग नहीं है और कुछ कर दें। ठीक हो गया? ये इसको अपने को समझने की आवश्यकता है, इसमें निश्चयन की आवश्यकता है न, और वृथा भ्रमित होने का कोई मतलब नहीं है। गणित का कोई मानवीयकरण का मतलब नहीं बनता है, शिक्षा का मानवीयकरण का बनता है। गणित को सिखाएंगे कि गणित का अभ्यास जोड़ घटाना ही है, इतने ही है। कितने छोटा सा बात! इतने ही बड़ी बात, जोड़ना घटाना।

प्रश्न : एक तो ये बात कही गई थी कि गणित का मतलब गणना है और उसको अगर देखेंगे तो मूलभूत रूप से जो हम क्रिया कर रहे हैं, उसमें जोड़ने या घटाने की क्रिया ही कर रहे हैं। दूसरी बात जो महत्वपूर्ण है वो है कि गणित वस्तु मूलक है। अभी जो गलती होती है, अभी जो गणित में हम बहुत जगह जा करके उलझ जाते हैं, उसका कारण ये है कि वस्तु के साथ जो गणित का जुड़ाव है, गणना का जुड़ाव है, उसको जब हम खोल देते हैं तो बहुत सारे ऐसे मुद्दे आ जाते हैं कि हम को लगता है कि उसको जीने में हम solve नहीं कर सकते। ये कठिनाई है। तो अगर गणित

करते हुए, गणना करते हुए, उसमें जो वस्तु की बात की जा रही है, उस वस्तु को साथ-साथ हम बनाये रखे, वस्तु के सापेक्ष में हम गणना की बात करें, तो ये कठिनाई नहीं है। ये वस्तु मूलक गणित की बात हुई, जैसे मैं एक उदाहरण देता हूँ अभी एक irrational number का concept है। जैसे $\sqrt{2}$ जो irrational number है अपरिमेय संख्या। वो ये कहते हैं कि आप ठीक-ठीक इसको बता नहीं सकते ये कितना होगा। अब इसको हम define करने जाते हैं तो एक इकाई का वर्ग अगर लेंगे, उसके कर्ण की लंबाई जो होती है वो $\sqrt{2}$ होती है। एक वर्ग देखे तो जिसकी चार भुज 1,1 cms की है। उसके दो corner को मिला देंगे तो उसकी लंबाई $\sqrt{2}$ के बराबर होते हैं। इसको यदि हम संख्या में लिखना चाहे तो नहीं लिख पाते हैं। लेकिन उस लंबाई को बताना चाहें तो ठीक ठीक बता सकते हैं। उसको धागे से नाप लेकर बता सकते हैं कि ये $\sqrt{2}$ है। irrational तो इसमें कुछ भी नहीं है, ये तो बिल्कुल rational है। उसको आप अपनी बनाई हुई संख्या विधि में नहीं ले सकते हैं, लेकिन वस्तु रूप में तो है ही।

उत्तर : संख्या को लेकर के हम उलझते हैं। माने 1-9 तक की जो संख्या बनी हुई है, इसको ले करके हम उलझ जाते हैं। वस्तु को भूल करके शुरू करते हैं तो एक से एक दिगगज हैं - चार ही नहीं होता है, 2 और 2 साढ़े तीन भी होता है। अब क्या करोगे तुम ? सर कूटोगे की पैर पकड़ोगे की dance करोगे ? क्या करोगे ? वस्तु को छोड़ करके चला, माने ये जितनी गफलत बाजी है वो सभी गणित बताता है। कैसे बताता है ? वस्तु को छोड़ने की बाद। वस्तु के साथ गणित चलता है तो बिल्कुल कुत्ते जैसा चलता है वो। जैसे कुत्ता अपने दाना पानी देने वाले के पीछे दौड़ता है ना, वैसे संख्या दौड़ता है।

प्रश्न : $1-1=0$ हो जाता है गणित में, पर एक वस्तु में एक वस्तु घटती नहीं है ?

उत्तर : एक व्यक्ति को एक व्यक्ति से घटाओ शून्य हो जाए, ये हो पाता है ? ये कितना शुद्ध झूठ है आप सोच लो। शुद्ध झूठ !

प्रश्न : इसलिए गणित से जो भाव जाता है वर्तमान में, कुछ और ही जाता है वर्तमान में। उसी की मानवीयकरण की बात कर रहे थे महाराजजी।

उत्तर : ये क्या है ये ? कुल मिलाकर के ये देश और काल से संबंधित बात है। भाई यहाँ दो व्यक्ति थे, यहाँ से दोनों व्यक्ति चले गए। दो में से एक व्यक्ति चले गए, उसमें कौन सा संख्या काटने आयेगा आपको ? नहीं काटने आयेगा। नहीं नहीं, एक ऋण, एक आदमी बराबर शून्य आदमी, वो होता नहीं है। आप समझ गए सफ़ेद झूठ कैसा समाई हुई है ? ऐसा बनता है। ऐसे बहुत सारे नज़ीरे आएंगे अपने सम्मुख। इसलिए वस्तु मूलक विधि से गणित, अपने आप से ये जो नौ संख्या हम उच्चारण करते हैं, ये पाला हुआ कुत्ते जैसा दौड़ता है। जब वस्तु को छोड़ दिया, पागल कुत्ते जैसा काटने दौड़ता है ! कैसा दौड़ता है ? वो भी कुत्ता ही है। पागल कुत्ते जैसा काटे दौड़ता है। आदमी को दौड़ाता है फिर।

वस्तु ही वास्तविकता को व्यक्त करता है, ये बात हो चुकी है आप हमारे समझ में। संख्या वास्तविकता को बताता नहीं है। वस्तु को गणना करने के लिए संख्या एक दो तीन लगाये हैं। वस्तु को छोड़ने के बाद पागल कुत्ता जैसा काटता है। कैसा काटता है आदमी को ? पागल कुत्ता जैसा दौड़ाता है, वैसे संख्या आदमी को दौड़ाता है फिर।

(ये औसत फिर क्या है भैया 66.69 या ऐसे ही एक हुआ 57.2 ये वास्तविक नहीं है?) वस्तु क्या है, आप बताइये ना भई, आप ही बताइये? (मतलब साढ़े तीन आदमियों ने vote दिया) हाँ जी, लीजिए साब, ये हो सकता है? (हाँ गणित में होता है लेकिन यथार्थ में तो ऐसा हो, ऐसा अनुभव नहीं है।) होता है क्या पूछा, आपके मती से? (नहीं, नहीं होता है) नहीं होता है, खतम हो गयी बात, इतने अच्छे हैं गणित! (लेकिन अगर हमको वास्तविकता की पकड़ है, तो ये हमको पता लगता है कि अगर 400 आदमी थे तो उसमें 14 आदमियों ने vote दिया होगा, ये हमको समझ आता है) यही वस्तु मूलक है। तो वस्तु को छोड़ दो, है ना, 4.5% voting हुआ। इसमें जो है ना पोने चार, पोने बारह आदमी कौन सा होता है आप ही बताओ! बताये ना वस्तु को छोड़ने की बाद वो संख्या पागल कुत्ता जैसा आदमी को दौड़ाता है, वो ही संख्या आदमी को दौड़ाएगा। उसके पहले आदमी के पीछे पाला हुआ कुत्ता जैसा संख्याएँ आते रहे। यही इसका उदाहरण बन सकता है। ठीक है ये?

इतिहास

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 10, time 23:28-31:57](#)

प्रश्न : अब इतिहास के ऊपर आते हैं बाबा, पहला सवाल तो ये है, कि अभी तक जो इतिहास लिखा गया है, जिसको हम लोग पढ़े हैं, वो आपको कैसा दिखता है, दूसरा क्या वाकई उस इतिहास से मनुष्य को कुछ सबक लेने लायक कोई सारभूत बात वहाँ से निकलती है, और तीसरा अगर आपकी सहमति इतिहास की उस तरीके से नहीं है, जो इतिहास के नाम पे हम को पढ़ाया जाता है, जो लिखा है किताबों में, तो वास्तव में इतिहास क्या होना चाहिए?

उत्तर: बढ़ियाँ कहा जी आपने, देखिए मानव परंपरा का समीक्षा जो होती है, अभी तक की मानव परंपरा कैसा गुजरा, उसको हम स्मरण करने के लिए, विधियों को जो apply करते हैं, उसको हम इतिहास कहते हैं। ठीक है?

ये मूल में इतिहास ऐसा बात को इतिहास कहना, नामकरण करना ये स्वाभाविक है, जो बीत चुकी है उसको स्मरण में लाने के क्रिया को हम इतिहास कहते हैं। ठीक है ना भाई? अच्छा, ये सब को समझ में आता है। उस इतिहास में कुछ प्रमुख आयाम हैं, या बहुत सारे आयाम हैं। जैसा आर्थिक विधा को हजार वर्ष पहले कैसा समझा। माने हजार वर्ष पहले भी कोई आदमी संपन्न होने के लिए प्रयत्न किया होगा। एक हजार वर्ष पहले राज्य को, माने सुदृढ़ राज्य को कैसा समझा। हजार वर्ष पहले संविधान को सुदृढ़ संविधान को, न्यायिक संविधान को क्या समझा। ठीक है। तो एक हजार वर्ष पहले अलंकार को आदमी कैसा करता रहा। एक हजार वर्ष पहले कैसा आदमी गाता रहा, नाचता रहा, बोलता रहा। ये सब बातें इतिहास की कड़ियाँ हैं। माने ये सब एक-एक भाग है।

वो जो मूल मुद्दे में जो हमारे गणना में जो आता है, एक हजार वर्ष पहले, दो हजार वर्ष पहले, दस हजार वर्ष पहले, करोड़ वर्ष पहले आदमी अपने समझदारी को क्या मानता रहा है नंबर एक, उस समझदारी को आर्थिक पहल में कैसा प्रयोग किया, ठीक है ना, और संबंधों की पहल में, मानव के व्यवहार पहल में कैसा प्रयोग किया, मनुष्य में जंगल के साथ कैसा प्रयोग किया, मनुष्य ने धरती के साथ कैसा अपना शक्तियों को प्रयोग किया। क्या बना इतिहास?

किया है? परिणाम क्या निकला है। ठीक है ना। इसी में राज्य भी आता है, संस्कृति भी आता है, अलंकार भी आता है, कला भी आता है, सब कुछ आता है। इस ढंग से इतिहास को हम, विगत में बीती हुई बात को समझना बराबर इतिहास होता है।

अभी इतिहास में यही सर्वाधिक पढ़ाया जाता है, उसको ये काटा, इसको ये पौला, ठीक है। क्या है वो, क्या तो? आल्हा! आल्हा गात हीं भाई, आल्हा! ठीक है ना। गा-गा करके डमरू बजात हीं, ढपला बजात हीं, आल्हा गात हीं! ठीक है ना। तो इसको इतिहास मानी जाती है। क्या है भाई ये सब में, कुल मिला करके, कथा सुनेगा तो, वो उनके एक औरत को अपहरण किया, उठा के ले गया, सेना गया ऐसा पौलिश-ऐसा पौलिश, कि चटनी जैसा पौलिश कहिस है। अब बताओ भला का कीन जाए, कहाँ जा करके डूबें, क्या सीखें, क्या पढ़ें? ठीक है ना। आप ही बताओ सही, मार-काटने में क्या सीखें? हम मार काटना सीखना है? तो, तब तो पढ़ाया जाए। यदि मार-काटना सीखना नहीं है, इसका क्या अर्थ है आप ही बता दीजिए। ठीक है। सीधी बात ऐसा दावा बनता है।

तो इसीलिए हमारा सोचना के अनुसार ऐसा है, अभी तक मानव इतिहास शुरू हुआ नहीं है। सम्मानजनक भाषा हम यदि प्रयोग करूँ, हम ऐसा प्रयोग करेंगे। मानव इतिहास तो शुरू नहीं हुआ है। अमानवीय इतिहास को मानव इतिहास यदि कहना चाहते हैं तो हमको कोई तकलीफ नहीं है, एक नरियल हमारे तरफ से प्रस्तुत। नरियल चढ़ा दूंगा हम। अब क्या करेंगे, सम्मान करेंगे। ये बात जो है, अभी तक मानवीय इतिहास तो इस धरती पर शुरू नहीं हुई। ये तो बात सही है। अब राक्षस मानव, पशु मानव का इतिहास पढ़ करके मानव तो कोई होने वाला नहीं है। ठीक है?

तो ये तो बात हर जगह में ये कथाएं लिखी हुई हैं, देवासुर संग्राम तो शुरुआत ही से है। ठीक है? लिखा है कि नहीं? (लिखा है बाबा) वैदिक ऋचाओं में भी देवासुर संग्राम की बहुत अच्छे-अच्छे बढ़िया-बढ़िया लिखा हुआ है। कितना बखूबी से संग्राम हुआ, कौन किसको किस तरीके से काटा। बहुत बढ़ियाँ तरीके बताए हैं, काटने का। ठीक है। तो इन बातों से अपने को कुछ मिलने वाला नहीं है। मानव इतिहास के लिए कोई presentation इधर से मिलता नहीं है। यही मिलता है, शरीर परंपरा को बनाए रखा, धन्यवाद नंबर एक। ठीक है। अध्यात्मवाद, देवी-देवता येन तीन कुछ शब्दों को हमको सिखाया है, उसके लिए धन्यवाद। ठीक है। और व्यापक वस्तु कोई चीज होता है ऐसा एक हमको सूचना दिया है, उसके लिए धन्यवाद। हम जो ना शुकगुजार हैं ही हैं, कृतज्ञ हैं ही हैं। ठीक है। नंबर 3, सबसे अच्छी बात ये है शुभ चाहते रहे, उसके लिए हम कृतज्ञ हैं। यही लिखा है महाराज जी।

प्रश्न : तो आप के लिहाज से बाबा, मानव का इतिहास तो लिखा नहीं गया। अमानवीयता की घटनाओं का जोड़-तोड़ है, तो इतिहास विषय को पढ़ाना बंद कर देना चाहिए, उसका कोई प्रयोजन नहीं है?

उत्तर : ऐसा कुछ भी नहीं। इतिहास में यही हम लिखेंगे जंगल युग में, माने आदमी का इतिहास बताएंगे, कैसा संघर्ष किया, कैसा अपने को बना के होते हुए आया, परंपरा को बना के आया। ठीक है। उसके बाद पत्थर के युग में, धातु युग में, कबीला युग में, ग्राम युग में, कैसा अपने को बना के आया। और उसके बाद जो है ना राजयुग में कैसा अपने को समर्पित किया। ठीक है। राजयुग आने पर क्या आश्वासन मिला, ईश्वर युग आने से क्या गुरुकुल, माने ऋषिकुल, गुरुकुल आने से क्या आश्वासन मिला, ये आश्वासन कितना सार्थक हुआ, असार्थक हुआ, इसको हम पढ़ाएंगे।

इसमें किसको क्या तकलीफ है भाई! मार-काट ही हम को पढ़ना है क्या? नहीं न, और अब वो connect हो जाएगा यहां तक। हम ऐसा पढ़ाएंगे, ऐसा लिखे ही हैं।

युद्ध और मार-काट की बात हम लिखेंगे नहीं, आप लोग लिखिए। हम यही लिखेंगे, जंगल युग तक आज युग तक connection कैसा आदमी हुआ है, कैसा परेशान हुआ है। उसको ये लिखेंगे, राक्षस मानव, पशु मानव का संघर्ष में आदमी परेशान होता हुआ आया, आज जो है ना मानवीयता का इतिहास को शुरुआत करने की आवश्यकता है। यही लिखा है, यही लिखूँगा हम।

26. उत्पादन कार्य योजना

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 11, time 16:35-24:47](#)

उत्पादन कार्य योजना की बात आती है, परिवार मूलक स्वराज्य योजना के तहत में। आपने क्या कर दिया? अधर में ले जा कर के उत्पादन कार्य लिख दिया। आप को लिखना है, परिवार मूलक स्वराज्य योजना के तहत में उत्पादन कार्य योजना। दूसरे विधि से उत्पादन कार्य योजना आता ही नहीं। योजना का मतलब है, प्रमाणित होने की तरीका। वो तरीका मानव जागृत होने के बाद परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था में जीने के क्रम में उत्पादन कार्य योजना प्रमाणित होता है। जैसा मैं अपने में, समझदारी को उपार्जन करने के उपरांत, उसको प्रमाणित करने के क्रम में, उत्पादन कार्य योजना को मैंने प्रमाणित किया है। उत्पादन कार्य योजना को प्रमाणित करने का क्या मतलब है? हमारा आवश्यकता से अधिक उत्पादन कर देना, समृद्धि का अनुभव करना, ये इसका मतलब है। ठीक हो गई।

उत्पादन का क्या मतलब बताया? प्राकृतिक ऐश्वर्य पर अपने श्रम नियोजन पूर्वक, उपयोगिता मूल्य, सुंदरता मूल्य को प्रमाणित कर देना, स्थापित कर देना। हम करते ही हैं रोज मर्मा में। तो इस विधि से हम श्रम नियोजन पूर्वक उपयोगिता मूल्य, कला मूल्य को वस्तुओं में स्थापित करते हैं। ये मानव का श्रम नियोजन का फलन है, ये मानव कुल में ही होता है, सर्वाधिक। यदि छोटे-छोटे बात को हम यदि निरीक्षण करें, कुछ ऐसे पक्षियाँ घोंसला बनाते हैं, अपने आवास योग्य बना लेते हैं और कुछ पक्षियाँ झाड़ में कोड़ बनाते हैं, कोड़-कोड़ कर के कोड़ बना कर के आवास योग्य बना लेते हैं। कुछ पक्षियाँ घास से अपना घर को बना लेते हैं, उसके अंदर आवास योग्य व्यवस्था बना लेते हैं। ये भी हुआ है, कुछ पक्षियाँ। किन्तु जीव जानवर सभी, तो जो प्राकृतिक विधि से जहाँ सोने की योग्य है, उसको खोज-खाज करके सो लेते हैं, थोड़ा देर, और जहाँ आहार मिलता है, वहाँ खोज-खाज करके खा लेते हैं।

इस ढंग से भी बात है। इस विधि में पेट भरने का काम जितने भी पक्षी संसार है, चींटी है, हाथी है, सभी अपना पेट भरता ही है। सबसे जो अभी राम कथा ये ही है, आदमी को पेट भरने योग्य नहीं है, ऐसा हम बिल्कुल करार देते जा रहे हैं। जबकि चींटी पेट भरता ही है, हाथी पेट भरता ही है, आदमी चींटी से बदतर है क्या? पूछा जाए तो क्या कहेंगे आप, नहीं हैं, ऐसा कहेंगे। चींटी से बदतर है कह सकेंगे? नहीं कह सकेंगे। इसके बावजूद हमारा आवाज सभी माध्यमों से हर परिस्थितियों से आदमी को अपने आजीविका को उपार्जन करने योग्य नहीं है। उसमें भी कौन नहीं है? पढ़ा-लिखा तो बिल्कुल नहीं है। क्या बात हुआ ये शिक्षा का क्या मतलब हुआ भाई? ये एक हंसी की बात हुआ, भद्गी की बात हुआ कि नहीं हुआ? आप ही सोच के देखिए, यदि पढ़-लिख कर के आदमी अपने पेट भरने से असमर्थ हो जाए, इससे भद्गी की बात क्या हो सकता है। ऐसा मेरा सोचना है।

मनुष्य तो इन सबसे ज्यादा विकसित पद में है, ये भी एक तरफ से अपन आंकलित करते ही हैं, स्वीकारते भी हैं, हाँ भाई जानवर से हम अच्छे हैं, इस बात को हर व्यक्ति स्वीकारता ही है। ठीक है। चींटी, हाथी से भी अच्छे हैं ये भी स्वीकारता है। उतना ही नहीं है, चींटी को, हाथी को सब हाँकता भी है और बाघ जैसे हिंसक पशुओं को भी मार गिराता है, ये भी देखा गया है। ठीक है। ये सब बातें होते हुए मनुष्य जो है ना अपने पेट भरने में योग्य नहीं है, इस बात को हम बारंबार घोषणा करते हैं, इसका क्या मतलब होगा? ये हंसी की बात है। इसका मतलब ये हुआ हमारा शिक्षा

जो है, आदमी को भ्रमित करने के लिए ही शिक्षा है, आदमी को जागृत करने की शिक्षा नहीं है। ये इसका समीक्षा हो पाता है। इसीलिए जागृत शिक्षा को स्थापित कर लिया जाए, इसका उपाय यही है। जागृत शिक्षा का मतलब ही होता है, मानवीय शिक्षा। मानवीय शिक्षा का मतलब है, व्यवस्था में जीने वाला शिक्षा। व्यवस्था में जीते हैं, तो तब वो उत्पादन कार्य योजना लागू होता है।

तो वो परिवारगत आवश्यकता के आधार, क्या उत्पादन करना, कितना उत्पादन करना और कितना उत्पादन करना वो मात्रा तय करने के लिए परिवार के अलावा दूसरा कोई आधार बनता नहीं। एक व्यक्ति में कोई उत्पादन का आवश्यकता की आधार कोई भी quantify नहीं होता है, उसका मात्रा निर्धारित होता नहीं है और कम से कम यदि कोई चीज़ है, वो परिवार है। परिवार में ही हमारा आवश्यकता निर्धारित होता है, आवश्यकता निर्धारित होने के पश्चात उससे अधिक हम उत्पादन करने योग्य हर व्यक्ति रहते हैं। कैसे रहते हैं? हर व्यक्ति परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने योग्य रहते हैं, इसीलिए उत्पादन अधिक करना संभावित है और कम से कम परिवार में 2 व्यक्ति, 3 व्यक्ति उत्पादन करने योग्य रहते ही हैं। इसलिये उत्पादन भरपूर होने की व्यवस्था बनी हुई है। इस ढंग से हम हमारे विपन्नता से मुक्त, संपन्नता से जीने की दिन उदय हो सकता है।

किस आधार पर? समझदारी के आधार पर, मानवीय शिक्षा के आधार पर। दानवीय पाशवीय शिक्षा को छोड़ने पर, व्यापार शिक्षा को छोड़ने पर, लाभोन्मादी शिक्षा को छोड़ने पर, कामोन्मादी मनोविज्ञान को छोड़ने पर और भोगोन्मादी समाज योजनाओं को छोड़ने पर। आदमी ये मानवीय शिक्षा को ग्रहण करने पर, आदमी समझदार होता है, समझदारी के आधार पर उत्पादन कार्य योजना को समृद्धि के अर्थ में योजित कर पाता है, नियोजित कर पाता है, संप्राप्ति को प्राप्त कर सुखी हो पाता है।

27. विज्ञान

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 10, time 31:57-49:48](#)

प्रश्न : अब एक गंभीर विषय पर आते हैं बाबा, हम लोगों ने ज्ञान नाम का एक शब्द सुना है। तो आज जो विज्ञान के कुछ रूपरेखा पहले भी रही होगी, थोड़ा बहुत पढ़ते हैं, तो आधुनिक विज्ञान क्या है, उसको क्या होना चाहिए, पुराना उसका स्वरूप क्या था, या विज्ञान के दिशा धारा के बारे में आप क्या कहना चाहते हैं, मध्यस्थ दर्शन के प्रकाश में ?

उत्तर : देखिए वो बात अपन पहले परिष्कृत रूप में स्पष्ट कर चुके हैं, व्याख्या कर चुके हैं। विज्ञान के अनुसार जो सारे, जितने भी धरती के साथ कुकर्म करना है उसमें हमारा गति बढ़ी। मानव के साथ जितना कुकर्म करना था, उसमें गति बढ़ी। विज्ञान का इतिहास ही, कथा ही ये बताता है सामरिक तंत्रों को बुलंद करने के लिए विज्ञानियों को पैसा दे करके, खरीद करके, सामरिक शक्तियों को बढ़ाई गई। ये बात आपको समझ में आता है ? आता है, इसमें आपको कोई confusion है ? confusion इनको नहीं है, ठीक है ना ? [ये तो राजा युग में भी रहा होगा ?] हाँ राजा युग में की ही बात है ये। ये जो कर्म-कुकर्म है ना, ये राजा युग की ही देन है, उसी को राजयोग कहलाता है। इसलिए हम ज्योतिषी को यहाँ रखा। हम बाद में छुएँगे रे! हम **सेथ की** चुपचाप रखे हैं। ऐसा कुकर्म करने वालों को ज्योतिष में गाया है राजयोग। मारे, पीटे, कूटें, हड़पें, धन को हड़पें, लड़कियों को हड़पें – इस कृत्यों को राजयोग लिखा है। क्या मतलब है इसका ?

[देखिए बाबा, ताकत तो समाज ने और परंपरा ने उन लोगों को दे दी, वो उसका दुरुपयोग किये, उसको क्या करें ?] दुरुपयोग क्या है, राजा को ये करना ही है। आप तो महाभारत पढ़िए, रामायण पढ़िए, युवराज अपने गद्दी में आ गया और महाराजा बनने के पहले राज्य का विस्तार करना है। खत्म हो गई बात, आगे चलिए।

तो इसलिए राजयुग में ही ये संपूर्ण युद्ध तंत्र का बुलंदगी हुई, ठीक है ? उसको बरकरार ये गणतंत्र भी ले के ही चले आया है। ये कोई कसर नहीं छोड़ा है, ठीक है ? और उसी के लिए ये विज्ञान सकल यंत्रों को बनाया। उसमें बोचक करके कुछ-कुछ लोक उपकार के लिए बन गए, जैसा गाड़ी, घोड़ा, ये जो ये यंत्र है।

(बनाने कि नियत नहीं थी ?) ऐसा ओहो, अरे कहाँ लगाए पड़े हो !

(महाराजजी लोकव्यापीकरण की नियत भले न रही होगी लेकिन बनाने के पीछे ऐसा नियत कैसा रहा होगा ?)

शुरुआत जो है ना सामरिक प्रयोग के लिए ही पूरा दूरसंचार शुरू हुई है। ठीक से इतिहास को पढ़िये ! पूरा संचार व्यवस्था जो है, ये सामरिक तंत्र के लिए बनी। संयोग क्या हो गया महाराज जी, उसके साथ व्यापार बुलन्द हो गया। अभी राजा के हाथ से बाहर बोचकने की जो बात आई, वो प्रौद्योगिकी विधि आ गई, प्रौद्योगिकी विधि आने से, जो सामरिक तंत्र के लिए जो देते हैं उतने से उद्योगपतियों का पेट भरा नहीं। कैसा हो गया ? ठीक से समझो इसको। ये बोचक गया तो सब बोचकेगा ! उद्योगपतियों को सामरिक तंत्र के लिए दे करके पेट नहीं भरा। तब क्या करते हैं ?

अब सर्व मानव उपयोगी विधि को अपनाओ बोले। बढ़िया एक छोटा गाड़ी दे करके बोचका दिया। आदमी गाड़ी घूमना शुरू कर दिया।

Ford नाम का एक आदमी हुआ है, वो ही पहले बार आदमी को गाड़ी बना करके दे दिया। आप इतिहास को देखिए। उसके बाद बाकी लोग सब आते हैं। Ford foundation आज भी बैठा हुआ है। वो ही आदमी है, जो छोटा सा गाड़ी, उसमें विश्वास दिलाया राजा को, राजतंत्र को। भाई इसमें क्या होने वाला है? देखिये दो आदमी बैठने वाला गाड़ी है, वो बोचका दिया। बोचका दिया दो आदमी बैठ के घूमने लग गया। उसके पहले एक भी नहीं घूमता रहा। ठीक है, वो बोचक गये।

उसके बाद दूरसंचार में ये जैसा wireless आया। उसको अभी भी हम control करके रखे हैं – नहीं भाई सबको नहीं देना। क्या चीज़ है सब को ना देना? काय को ना देना भाई? उनका जो सामरिक प्रक्रिया है, संघर्ष करने की, उसमें वो सहायक है ऐसा मान कर आज भी रखे हैं। और wireless को पकड़ के रखा, internet बोचका दिया। क्या बोचका दिया, क्या बोचक गई? बोचक कर के internet आ गया। चलो तुम रखे रहो तुम्हारा wireless को कहा, wireless से यहाँ से दस kilometer जाने की पहले internet में crore mile चले गया। ऐसा कार्यक्रम चल रही है। दूरसंचार जो है ना बोचक करके आदमी के हाथ में पड़ गयी। उस क्रम में जो है अंतोगत्वा ये स्वीकार लिया, राज्य भी स्वीकारा, जनता भी स्वीकारा, उसको बनाये रखने के लिए तैयारी किया। ये train भी कहाँ से शुरू हुआ? उसी के लिए, military के लिए।

उसके बाद जंगल को डुहारने के लिए शुरू हुआ। पहले military, उसके बाद जंगल, उसके बाद बोचक गए, आदमी घूमने लगे। अभी ये दोनों रह गए, आदमी घूमना ज्यादा हो गया।

प्रश्न : बाबाजी जिस व्यक्ति ने steam engine का आविष्कार किया वो ये सोच के तो नहीं किया है कि इससे बाद में युद्ध करें।

उत्तर : television की युग दूसरा हो गया। television की युग जब शुरू हुई है, सन 45 में, है ना, तो वो युग आते तक में, वो दूसरे स्थिति हो गया। (steam engine की बात किया मैं) steam engine, हाँ, जहाँ तक तकनीकी है, उसके लिए नहीं बनी थी। माने वो युद्ध को ले करके नहीं बना। वो आम आदमी steam engine को पहचाना। उसको फिर बाद में control में ला लिया। ला करके वो युद्ध में प्रयोग किया। उसके बाद बोचक के आदमी के पास आ गया।

प्रश्न : बाबाजी इसमें दो पक्ष हो गया। एक तो किसी चीज़ का आविष्कार कर लेना, किसी यंत्र का, दूसरा उसका लोकव्यापीकरण करना या नहीं करना, तो इसमें जो आविष्कार वाला मुद्दा है।

उत्तर : वो हठात्⁴⁰ है। घटना विधि से आविष्कार हुई हैं। (उस समय तो किसी की बुद्धि नहीं थी, कि उसमे व्यापार करना है) ये तो बात सही है। कुछ नहीं था – ना व्यापार था, ना military थी। ये तो बात सच्ची है। चीज़ जो है ना

⁴⁰ हठात् - एकाएक

पहचान में आया है, जैसा चक्का घुमाना, चक्का घुमाना जो है - ये युद्ध को थोड़े ही सोच करके हुआ। नहीं हुआ। चक्का यदि समझ में आने की बाद उसको जो युद्ध में उपयोग करने की बात ज्यादा attract हुए। वैसे युद्ध में engine को उपयोग करना, गाड़ी को उपयोग करना शुरू किया ही हैं। ये हमारा कहने की मतलब। आविष्कार एक अलग चीज़ है, मनुष्य को हाथ लगने की तरीका अलग चीज़ है। किस बात का हाथ लगना? वस्तु को निर्माण करने की मूलभूत प्रेरणा मिलना एक अलग चीज़ है। वो प्रौद्योगिकी में आना और जो वांछित व्यवस्था में प्रायोजित होना, एक अलग है। वांछित व्यवस्था में प्रायोजित होने के बारे में हम बात कर रहे हैं अभी।

प्रश्न : जी महाराज जी लेकिन जब विज्ञान के इतिहास की बात करेंगे तो अनुसंधान की भी बात आएगी।

उत्तर : वो देखिये, ये विज्ञान और तकनीकी - दो बात है ये। तकनीकी, ये कोई पढ़ा लिखा आदमी से आविष्कार कम हुआ है। ठीक है? उस में यदि आविष्कार हुआ भी होगा, बाबा, तो इस प्रकार की चीज़ों को बनाने में कितना योगदायी है, उसको आप लोग इतिहास लिखोगे। ठीक है? तो जो वस्तु मूल में एक steam engine का प्रेरणा है, सामान्य बुद्धू आदमी के पास एक प्रेरणा आई। Telephone का प्रेरणा एक बुद्धू आदमी के पास आई और ये एक aeroplane को उड़ाने का प्रेरणा सामान्य एक mechanic को आई। इस प्रकार से सामान्य व्यक्तियों के पास ये सब चीज़ आया है। बहुत ज्यादा पढ़ा लिखा हुआ आदमी के पास ये कुछ नहीं आया। जो पढ़े लिखे हुए आदमी के पास आया है परमाणु bomb बनाने की प्रेरणा, ये सब चीज़ें आया होगा, मेरे हिसाब से। उसको आप लोग सटीक देखेंगे। ठीक है ये। तो कहना, इसके बावजूद ये सब सामान्य व्यक्ति से आ तो गया, उसका उपयोग करने के लिए राज विधा में जो पहले consideration हुई है, ये सामरिक विधि में ही उपयोग करने की ज्यादा से ज्यादा प्रयत्न की है, ये हमारा कहने की मुद्दा है। ये उचित है?

प्रश्न : बाबा इसको दो स्तर पर हम लोग देख सकते हैं। एक तो विज्ञान और उससे पैदा हुई जो तकनीकी है। उसके उपयोग या दुरुपयोग के आधार पर उसके हम समीक्षा करें। दूसरा विज्ञान जिस अवधारणा पर आधारित है, हम उसकी समीक्षा करें। इसके विकल्प में सहअस्तित्ववादी विधि से विज्ञान का क्या सरूप निकलता है इसको प्रतिपादित करना ये ज्यादा आवश्यक लगता है।

उत्तर : हाँ, जो एक सहअस्तित्ववादी विधि से विज्ञान का मतलब ये होता है - तो विवेक पूर्वक निर्धारित लक्ष्य के लिए दिशा निर्धारित करना विज्ञान का काम है। तो लक्ष्य क्या होता है, पूछा मानव लक्ष्य क्या होता है पूछा? तो जीवन जागृति परम लक्ष्य, एक। उसके लिए विज्ञान कैसा दिशा निर्धारित करता है, ये किया।

उसके बाद समाधान समृद्धी अभय सहस्तित्व ये मानव अपेक्षा है, मानव का लक्ष्य है। इसके लिए विज्ञान, क्या दिशा निर्धारित करता है, यही हमारा सहस्तित्ववादी विज्ञान विवेक का मतलब है। इसमें परिवार से लेकर अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था तक लक्ष्य निर्धारित होता है, दिशा निर्धारित होता है, इसमें अपने को कोई hotchpotch भ्रम नहीं है, पूरा पड़ता है।

उसके बाद आता है जो प्रचलित विज्ञान के बारे में बताया, विज्ञान का सर्वोपरि उपयोग सामरिक तंत्र के लिए हुई, उपयोग के रूप में बताया। और विज्ञान का मूलभूत बात है वो ये है, विज्ञान अपने को सत्य को उद्धाटित करने के

लिए अपना आश्वासन देता है। जो कुछ भी उनका सत्य को बताने के लिए आधार है, प्रमाण है, वो यंत्र है। यंत्रों से जो कुछ भी result निकलती है, परिणाम निकलती है, उसको अंतिम सत्य नहीं मानना है। ये विज्ञान की शुरुआत की स्थिति है, आज की स्थिति। यंत्रों से जो कुछ भी परिणाम निकली उसको अंतिम सत्य नहीं मानना। इस ढंग से आगे उसको और कोई यंत्र बनाने के लिए सोचना, और कोई प्रयोजन निकालने के लिए सोचना, इस ढंग से परंपरा बनाने की बात कहते हैं। उसमें मूलभूत यही प्रश्न उद्भूत होता है – क्या परम सत्य, अंतिम सत्य को विज्ञान संसार समझा है? जिसको खोजते चला है? ये आता है। यदि नहीं समझा है, तब अंतिम सत्य, प्रथम सत्य क्या होगा? इसको कौन बताएगा? ये बात तो प्रश्न चिन्ह में आ जाता है।

जैसा अद्वैत वादियों का मोक्ष की बात है। ठीक है ना? तो मोक्ष के बारे में गवाही कौन देगा? उसके लिए उत्तर दिया है हमारे यहाँ – तो जो नमक की पुतली समुद्र को नापने गया तो क्या हो गया वो? समुद्र में गल गया। मैंने बोला, काठ की पुतली होगा तो क्या होगा? तैरेगा। तैरेगा तो नापेगा। तो क्या जब नामक का पुतली नाप सकता है तो काठ का पुतली क्यों नहीं नापेगा भाई? (नहीं, नमक का पुतली नहीं नाप सकता है) अच्छा ये काठ का पुतली नापेगा। तो आप हमारा कल्पना की दौड़ में कुछ भी हम कह लें ये एक अलग चीज़ है। उसके लिए अपन कह ही रहे हैं प्रतीक प्राप्ति होने वाला नहीं है। उपमा उपलब्धि होगी नहीं। ना उपमा उपलब्ध हो सकता है, प्रतीक ना प्राप्ति हो सकता है। ये तो हो गए उस विधा के लिए पूरा काम। और इस विधा के लिए, विज्ञान विधा के लिए, यही आती है तो विज्ञान क्या सत्य को समझ करके प्रयोग कर रहा है? सत्य को ना समझ करके सत्य को खोज रहा है, इसको सोचने की बात आता है। हर जगह में यही बात होती है, यही कहा अंतिम सत्य नहीं है। हर यंत्रों से उपलब्धि को यही कहा जाता है।

ये तो बात सच्चाई है। ये तो हमारा समीक्षा की स्वरूपित निकली। इसमें हमारा कोई आरोप नहीं है – अपने वो कर दिया, ये कर दिया। आप जो कर दिया वो इतिहास रखा ही है। अंततोगत्वा क्या है विज्ञान से हमको कोई दिशा या लक्ष्य निर्धारण करने में हमारा कोई सहायता हुई नहीं है। सुविधाओं में बहुत सारी चीज़ उपलब्ध हो गई, वो निर्धारित रूप में महत्वाकांक्षा रूपी सुविधाएं हमको उपलब्ध हुआ है। उसके लिए हम कृतज्ञ हैं ही। ठीक है? हरिहर। इसके अलावा और कुछ हुआ नहीं।

प्रश्न : इस संदर्भ में द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की समीक्षा और समाधानात्मक भौतिकवाद का प्रतिपादन, ये मुझे लगता है की विज्ञान की संदर्भ में आवश्यक है।

उत्तर : हाँ देखिए, उस में ये बहुत बड़ी भारी मुद्दा यही बनाता है, तो जो कोई भी दो ग्रह, जैसा की ये धरती घूम रहा है। धरती जो है ना दूसरे कोई धरती से, सूर्य से या कोई और ग्रहगोल से खींचातानी वश सब घूम रहा है। ऐसा इनका सोचना है। हमारा सोचना ये है व्यवस्था में भागीदारी कर रहा है। दोनों में कितना दूर है आप ही सोच लो? समाधानात्मक भौतिकवाद में ये हम कह रहे हैं ये दोनों अपने व्यवस्था को प्रमाणित करने के लिए स्वयं स्फूर्त विधि से काम कर रहे हैं। और धरती अपने को स्वयं व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने की क्रम में काम कर रहे हैं, ऐसा समाधानात्मक भौतिकवाद कहता है। द्वंद्वात्मक भौतिकवाद ये कहता है ये दूसरे ग्रह के खींचातानी से ये अपने को बचाव के लिए पागल हो करके घूमता रहता है, ऐसा वो बोलते हैं।

अब बोलिए क्या करोगे ? द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद संघर्ष के लिए ही जाता है। इसी आधार पर धरती के साथ भी संघर्ष कर डाला। एक दूसरे के व्यवस्था में भागीदारी करने का मतलब ही पूरकता को प्रमाणित करना है। पूरकता को प्रमाणित करने का मतलब ही होता है प्रयोजनों को पूरा करना, यानी प्रमाणित करना। प्रयोजनों को प्रमाणित करने का मतलब ही है व्यवस्था को प्रमाणित करना। दूसरा कुछ होता नहीं। बर्बादी को प्रमाणित करने में कोई पूरकता की बात आती नहीं। ऐसा एक छोटा सा बात निकलती है। इसको ऐसा समीक्षा किया जा सकता है।

28. विवेक

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 10, time 49:49-1:00:37](#)

प्रश्न : विवेक क्या है? आदमी के जिंदगी के साथ उसका क्या संबंध है? अभी बहुत सारी बातों के ऊपर जो चर्चा हुई, विवेक के द्वारा इन सब पर क्या रोशनी पड़ती है, या कैसे हम उसको समाधान के क्रम में प्रयोजित कर सकते हैं?

उत्तर : विवेक का मतलब होता है, लक्ष्य को पहचानना। अस्तित्व का लक्ष्य क्या है? सहअस्तित्व। सहअस्तित्व ही अस्तित्व का लक्ष्य है। उस को छोड़ करके आप क्या भागोगे मैं क्या भागूँगा, कहाँ भागूँगा? हर जगह में सहअस्तित्व मूल लक्ष्य है। वो मूल लक्ष्य के आधार पर हम राज्य के बारे में क्या कहेंगे? माने अर्थ व्यवस्था के बारे में क्या कहेंगे? समाज के बारे में क्या कहेंगे? ये सब करने से समाधानात्मक भौतिकवाद आता है। सहअस्तित्व को मूल में रखा, सहअस्तित्व को शीर्ष में रखा, ये लक्ष्य है। समाज का लक्ष्य क्या है? सहअस्तित्व है। सहअस्तित्व विधि से समाज को व्याख्या किया तो अपने आप से ठीक लगता है, आपको भी स्वीकार होता है, हमको भी होता है, गाँव वाले को भी होता है, शहर वाले को भी होता है।

जो सोचते हैं जिनके पास बहुत सारा पैसा है मानते हैं, उनको भी ठीक लगता है, जिनके पास नहीं है उनको भी ठीक लगता है, जो शोषण करते हैं, उनको भी ठीक लगता है, जो शोषण नहीं करते हैं दान करते हैं, उनको भी ठीक लगता है। ये नहीं होता, तब वो संघर्ष ही ठीक लगता था, आदमी कैसा आदमी कहोगे, घोड़ा-गधा कहोगे, क्या कहोगे इसको, आप ही बताओ? उसके पहले संघर्ष करना ही ठीक लगता रहा, 70 का भारत उसको उचक-उचक के गावत रहा, हमारे सामने! हम संघर्ष का राह अपनाएँ हैं! हम पूछे संघर्ष करके क्या करोगे? तो बोले 2-4 प्रतिशत आदमी हैं, उनको घाट उतार दिया तो सब सही हो जाएगा। इस प्रकार की आदमी जात है, इसको क्या करोगे भाई? संघर्ष नाम की जो भाषा है, ये हमारा भ्रम का उपज है। भ्रम में हम कहीं भी तालमेल बैठा नहीं पाते थे, झगड़ा करो भाई।

जैसा अभी भी उत्तर प्रदेश में कई ऐसा परिवार है, chain reaction वाले, तो कोई एक आदमी एक आदमी को गोली से मार देता है, मार दिया, वो तो चले गये यात्रा, और जो मर गया है उनके बच्चे के लिए दो भैंसी खरीदते हैं। एक भैंसी अभी दुहो, इनको पिलाओं। बच्चे का जब आयु आया, तो उनको दंड पेलो, ताकत बनाओ, ताकत बना करके मस्त मुस्टंड बनाया, बन्दूक लाके दे दिये, उसको मार के आओ। मार के चले आया, खतम हो गया। अब उनके बच्चे अब भैंस खरीदना शुरू किया, दूध पीना शुरू किया। ये chain reaction हम समझता हूँ, हजारों परिवारों में आपको मिलेगी, एक नहीं है, हजारों परिवारों में ये चित्र मिलेगी, आज भी चल ही रहा है।

वोही चैन chain reaction कौमी भावना में, कौमी विधि से, तो एक कौम जो है ना अभी डंडा खा करके अभी तो चुप हो गया, तो अपने को सोचा कि नहीं भई, दूध पीया करो, हड्डी चाबा करो, मुशतंडे बन जाओ और बंदूक चलाओ, जाओ चलो वो सारे कौमियों को सब मार के आओं। अभी तो पेपरों में तो आप सुन ही रहे हो, जिहाद

छेड़ो। क्या चीज़ है भाई? सारे कौमियों को मारो तो एक ही कौमी रहेगा, ऐसा वो कह रहे हैं। यही है संघर्षात्मक जनवाद या द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद यही है। अब उनके लिए लिखा, समाधानात्मक भौतिकवाद। सम्पूर्ण भौतिक पदार्थ व्यवस्था में है, और मानव भी व्यवस्था में हो सकता है। संघर्षात्मक जनवाद, संघर्ष करने की जरूरत नहीं है, आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना, मस्ती से समृद्धि का अनुभव करना। ये चाहिए, वो चाहिए सोच लो। मस्त जो है ना आवश्यकता से अधिक उत्पादन किया और ठसके से जीया और 10 व्यक्तियों का उपकार किया। ये ठीक है, 10 व्यक्ति का जेब काटना?

व्यापकता को हम अनुभव किया, आप अनुभव करोगे, व्यापकता रहस्य नहीं है, अस्तित्व में कोई रहस्य नहीं है, इतना ही अनुभवात्मक अध्ययनवाद का essence point है। अब इसमें कौन सा बड़ी भारी पसीना बहाना है, अनुभव ना करें? रहस्य को कब तक पूजा करें? इतना क्षत-विक्षत हो गये हैं उसके बाद भी हठ धार्मिता को करेंगे और क्षत विक्षत ही होंगे, परिणाम ही उसका वोही है।

(सहअस्तित्व को लक्ष्य के रूप देख लेना ये विवेक है) यही आवश्यकता है, अस्तित्व जो है ना बिल्कुल नित्य वर्तमान, प्रकाशमान, विद्यमान और प्रमाण है, वर्तमान रूप में। वर्तमान में जब प्रमाण है, तो वो कौन सा रहस्य है भाई? व्यापक वस्तु जितना सुलभ रूप में हर व्यक्ति को समझ में आता है, एक-एक वस्तु उतना सुलभ रूप में समझ में नहीं आएगा। अब व्यापक वस्तु को सर्वाधिक गहन, दुरूह, रहस्य बना करके करोड़ों अरबों आदमियों को गन्ने के कोल्हू में डालकर के पेरे डाला। सब आदमी खाद-गोबर हो गया भाई। करोड़ों आदमी खाद-गोबर हो गया। हमारा परिवार में सैकड़ों आदमी खाद गोबर हुआ। जिसका इतिहास के लिए हम स्वयं साक्षी हैं। तो इस विधि से आदमी सार्थक होने वाले विधि को अपनाने की आवश्यकता है, उसी विधि में ये आया, अनुभवात्मक आध्यात्मवाद।

अस्तित्व कोई रहस्य नहीं है, अस्तित्व हमको भी समझ में आया है, आपको भी समझ में आयेगा। इसलिए रहस्य नहीं है, यदि हमको समझ में आया आपको समझ में नहीं आता है, तो रहस्य ही रहस्य है। इस ढंग से रहस्य से मुक्ति पाने की बात आ गये। अस्तित्व में न सिद्धि है, ना चमत्कार है। अस्तित्व में जो कुछ भी है, एक निश्चित प्रणाली है, निश्चित परिणाम है, निश्चित फल है। निश्चित प्रणाली, पद्धति के अनुसार हमारा अध्ययन, अध्ययन करना आवश्यक है, क्योंकि मनुष्य समझदारी मूलक विधि से ही जीने योग्य इकाई है, इसलिए इसका नाम ज्ञानावस्था की इकाई नाम दिया। अध्यात्मवादी इसको ज्ञानावस्था की इकाई नाम दिए हैं? जीव नाम दिये हैं और भौतिक वादी भी आदमी को जीव ही कहा है, rational animal, वो ऐसा नाम देते हैं, आदमी जात को। ये सब बातें आपके सामने दुकान रची हुई है। तो रहस्य में जीना है या यथार्थता के साथ जीना है, पहले आप-हमको एक निर्णय लेने की आवश्यकता है।

रहस्य में जीना है, तो पहले किताब प्रमाण वो सही है, उसी में जिया जाए, कोई आपत्ति नहीं है। यदि किताब प्रमाण के अनुसार रहस्य में जीना दूबर हो गई है और उसके बाद यथार्थता के साथ जीया जाए ठसके से, क्या बुरा है इसमें। यदि थके नहीं हैं, और रहस्य में जीया जाए, देखा जाए, किसको क्या तकलीफ है! तो हमारे अनुसार रहस्य जो है, सुख, शांति, अमन-चैन का आधार नहीं है। सिद्धि चमत्कार आदमी को अमन-चैन, जान-माल की सुरक्षा करने में

असमर्थ है। इस आधार पर हम कहते हैं कि मनुष्य को यथार्थता को समझकर, मानवीयता पूर्ण यथार्थता के साथ जीने की पद्धति, प्रणाली, नीति, रीति सबको तैयार किया जाए। यहाँ से मानवीय इतिहास शुरू होगा।

अभी तक जो बीती हुई बात है, रहस्य पर आधारित कुछ इतिहास है, राक्षसीयता पर कुछ इतिहास है ये कुछ रहे ना, पाशवीयता पर तो इतिहास भरी हुई है, इन्हीं के continuation में जीना होगा तो कोई मना करने वाला तो आता ही नहीं। काहे को मना करेगा भाई? नहीं जीना होगा तो ये विधि, सहअस्तित्ववादी विधि।

29. समय, काल, वर्तमान

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 11, time 00:00-16:34](#)

प्रश्न : समय क्या चीज़ है? समय या काल, एक तो time हुआ जो हम लोग घड़ी से नापते हैं, उसको समय कहते हैं, शास्त्रों में काल को काल भगवान ऐसा भी कहा गया है, वास्तव में समय क्या चीज़ है और उसकी वास्तविकता क्या है?

उत्तर : क्रिया की अवधि बराबर काल, किसी क्रिया की अवधि को हम काल नाम दिया है। इसमें कोई भी बारह हाथ की दाँत नहीं लगा है, चगुलने के लिए। “कालो जगद्धक्षकः” लिखा हुआ है, ऐसा भक्षण करने वाला कोई साढ़े बारह हाथ की दाँत लगा करके कोई चीज़ बैठा नहीं है, किसी को भी फुरसत नहीं है, सभी को चाब चबा करके मरम्मत करें, किसी को फुरसत नहीं है। काल जो है, किसी क्रिया की अवधि को हम नाम दिया है “काल”। उसमें गणितज्ञों ने बड़ी कमाल किया है! काल तो नित्य वर्तमान है, सही मायने में। यथार्थता में नित्य वर्तमान ही काल है। सच्चाई तो यही है।

मनुष्य अपने जो कालखण्ड को अनुभव करने के लिए, अपना नित्य कर्मों को तय करने के लिए, कालखंडों को पहचानने की आवश्यकता महसूस हुई। दूसरा ज्योतिषियों के लिए कालखण्ड को पहचानने की आवश्यकता निर्मित हुई। ज्योतिषियों के अनुसार क्रिया की अवधि को काल के रूप में पहचाना गया। वो क्या काल है? अर्ध सूर्योदय से अर्ध सूर्योदय तक एक क्रिया, क्या चीज़ क्रिया? धरती की क्रिया। धरती की क्रिया को एक दिन नाम दिया। “उदयात् उदयम् दिनम्” ये लिखा हुआ है, अर्ध सूर्योदय से अर्ध सूर्योदय तक दिन कहते हैं, और कोई जगह में और विधि से दिन कहते हैं किन्तु है वो ही, सब जगह में। एक दिन को हमने 60 भाग में विभाजित किया, और वो 60 भाग को और 60 भाग किया, और 60 भाग को और 60 भाग कर दिया, ऐसा करते सुक्ष्म-सुक्ष्मतम् कालखण्ड को हम लोगों ने पहचान लिया। वो दिन को हम बनाए रखे थे।

विज्ञान आ गया भाई, वो क्या कर दिया? वर्तमान को काट के, पोल के अलग कर दिया। तो वर्तमान शून्य कर दिया, काल को इतना सुक्ष्मतम् खण्ड किया, वर्तमान कुछ होता ही नहीं बोले। अस्तित्व जो है न वर्तमान में ही है, वर्तमान नित्य है, निरंतर है, अनादि-अनादि काल तक। वर्तमान कभी खत्म नहीं होता। और काल को विखण्डित करते करते करते कहा वर्तमान है ही नहीं, कोई वर्तमान नहीं है, वर्तमान शून्य हो गया, कहना शुरू कर दिया, गणित के अनुसार।

काल को पहचानने की अभीप्सा तो आदमी को रहा ही है। इसका पहचानने की मूल मूढ़ा वर्तमान ही है, वर्तमान को ही पहचानना होगा। वर्तना और मात्रा होना, ये दोनों चीज़ का संयुक्त रूप में वर्तमान है। मात्रा सहित होना, इसी का नाम है वर्तमान। वर्तने के मूल में मात्रा होता ही है, माने स्थिति गति, ये वर्तने का मूल वस्तु है। ये हर एक मात्रा के साथ स्थिति गति बनी ही रहती है। चाहे कितने भी परिणाम हों, कितने भी विकास हो, स्थिति गति इकाई की अविभाज्य वर्तमान है। ये कुल मिला करके इसका स्वरूप है, वर्तमान का। निरंतर मात्रा सहित होना। वो कैसे होना? स्थिति गति में होना। कोई ऐसा मात्रा नहीं है जो स्थिति गति के रूप में विद्यमान ना हो।

अभी गणेशजी बताये कि रासायनिक परिवर्तन या भौतिक परिवर्तन होता है, उसे परिणती होने से ये विगत जैसा लगता है। विगत जैसा काहे को लगता है? परिणति एक भावी है, हर एक वर्तमान आगे चल कर के, कई क्रियाएं परिणत होकर के दूसरे क्रिया के रूप में ही होते हैं, कोई अभाव थोड़े ही हो जाता है। जैसा लोहा परिणत हो गया, मिट्टी हो गया, मिट्टी अपने आप में वो वर्तमान है ही है। मिट्टी परिणत हो गया, पत्थर हो गया, वो वर्तमान है ही है। पत्थर परिणत हो गया, मणि हो गया, ये वर्तमान है ही है, और मणी परिणत हो गया, धातु हो गया, ये वर्तमान है ही है। ये कभी भी समाप्त नहीं होता है, एक जगह में ठोस रूप में रहता है, दूसरे समय में विरल भी हो सकती है, ये भी वर्तमान ही है। वर्तमान कहाँ पीछे छूटा, कहाँ छूट सकता है, किसने इस बात को प्रमाणित कर सकते हैं, वस्तु तिरोभावित हो सकता है? होता ही नहीं है, परिणत होता है, ये बात सही है।

परिणामकारी वस्तुएँ भौतिक संसार में होते ही हैं, रासायनिक संसार में परिणतियाँ होते ही हैं, ये दोनों परिणामवादी हैं ही हैं, इसको ही हम भौतिक रासायनिक संसार कह रहे हैं और जड़ प्रकृति इसी को कहते हैं। परिणाम वादी, परिणामशील वस्तु को हम क्या कहते हैं? जड़ प्रकृति कहते हैं। परिणत होने के बाद भी वस्तु दूसरे स्वरूप में कार्य करता ही रहता है, कार्य मुक्ति कभी भी वस्तु का होती ही नहीं। मात्रा सहित वर्तने का काम है, वो नित्य है, वो परिणत हो या एक यथा स्थिति में हो। कई वस्तुएं यथा स्थिति में बहुत समय तक रहते हैं, बहुत सारे वस्तुएं शीघ्र परिणामी हो जाते हैं। ये दोनों चीज़ देखा जा रहा है। इसी क्रम में जीवन जो है, अपरिणामी हो जाता है। जीवन के साथ परिणाम का संबंध छूट जाता है, और गुण परिवर्तन होना भावी हो जाता है। भावी का मतलब इसके बाद, दूसरा स्वरूप में, श्रेष्ठतम स्वरूप में, वर्तने की बात आता है जीवन में।

इस ढंग से जीवन में गुणात्मक विकास की बात आती है, और भौतिक रासायनिक वस्तु में मात्रात्मक विकास- हास गणना होता है। विकास- हास की जो गणना है, इसी को हम कहते हैं परिणाम। परिणाम को हम काल का आधार बनाने जाते हैं, हम फँस जाते हैं। काल का कोई निश्चित स्वरूप बनता नहीं, स्वरूप ही नहीं बनता - एक। दूसरा, काल का आधार यदि सूर्योदय से सूर्योदय तक की एक काल मान लिया, किन्तु सूर्योदय से सूर्योदय होते ही रहता है, क्रिया तो निरंतर होना हमारे सामने रखा हुआ ही है, तो ये कभी समाप्त होता नहीं है। इस ढंग से हम यदि काल को यदि सूर्योदय से सूर्योदय तक की मानते हैं, उसका यदि हम खण्ड-विखण्ड करके छोटे से छोटे टुकड़े तक पहुँच जाते हैं, क्रिया को भूल जाते हैं, काल को पकड़ लेते हैं, वस्तु विहीन काल हो जाता है, वर्तमान नहीं रह जाता है। वस्तु विहीन काल को ही हम वर्तमान शून्य कहते हैं। वस्तु विहीन होता नहीं है, हमारा गणित के अनुसार संख्या के अनुसार, हम वस्तु विहीन जगह में पहुँच जाते हैं।

इस प्रकार से गणित बहुत बड़ी भारी सत्य का गणना करता है, ऐसा हमारा नहीं कहना है, गणना तो वस्तु का करता है, क्रिया का करता है। ये हमारा वांछित काल का गणना करता है। वांछित काल क्या है? किसी भी, एक दिन कहते हैं, 2 दिन कहते हैं, 10 दिन कहते हैं, 20 दिन कहते हैं, इसका गणना गणित कर सकता है, काल का गणना गणित नहीं कर सकता है। काल का जो परिकल्पना मनुष्य के पास है, वर्तमान को जब कभी भी खण्ड-विखण्ड में देखना चाहते हैं, रासायनिक परिणाम के आधार पर, भौतिक परिणाम के आधार पर अथवा दिन-रात्रि के आधार पर, हम यदि कोई काल को परिगणना करना चाहते हैं, वो क्रिया तो निरंतर रहता ही है, परिणाम होना निरंतर बना ही है। तो एक धरती, जैसा ये धरती है, ये ठोस है, तरल भी है, विरल भी है, सब चीज़ है। दूसरा धरती वैसा नहीं हैं, कालांतर

में वो ठोस होता है। ठोस होने के समय भी वर्तमान के रेखा में ही होता है। ये नहीं है वर्तमान को छोड़ करके और कोई रास्ता पकड़ लिया और वो ठोस हो गया, ऐसा होता नहीं। ये वर्तमान अभी भी है, कल भी वर्तमान है और भी वर्तमान है, वर्तमान की निरंतरता है, उस श्रृंखला में एक समय में एक धरती ठोस हो जाता है, और एक धरती विरल हो जाता है, एक धरती बर्बाद हो जाता है, एक धरती आबाद हो जाता है, ये भी हो सकता है, इसमें कोई शंका नहीं है। उसी प्रकार रासायनिक भौतिक परिणाम भी यथास्थिति से विकसित हो जाना या ह्रास हो जाना ही हम परिणाम कहते हैं। ये वर्तमान की रेखा में ही है, और परिणत हो करके वो स्वयं में अपना यथास्थिति है। वो यथास्थिति रहता ही है, कोई चीज़ समाप्त होता नहीं है, क्योंकि ये हम पा गये हैं, कि अस्तित्व ना घटता है ना बढ़ता है, इस आधार पर वर्तमान निरंतर है।

अब परिणाम से मुक्त है जीवन। जीवन के लिए तो कोई कालखण्ड बनता ही नहीं है। वो सतत् बना ही रहता है, शरीर चलाओ चाहे शरीर ना चलाओ, जीवन तो रहना ही है। जीवन में परिणतियाँ होती नहीं हैं, उसमें काल का बाधा होता नहीं। काल का बाधा नहीं होने के साथ-साथ और भी बहुत सारे चीज़ों की बाधा से मुक्त है। रासायनिक भौतिक वस्तुओं की जो पुष्टि अथवा असहयोग ये दोनों की बाधा से भी जीवन मुक्त है। तो शरीर ही एक रासायनिक भौतिक वस्तु है, इस को छोड़ करके जीवन रहता ही है। यदि ये बाधा हो जाता इसके साथ ही जीवन भी तिरोभाव हो जाना था, ऐसा कुछ होता नहीं है, या परिणत हो जाना था, ऐसा भी नहीं होता है। और जीवन जो हैं ना शरीर के साथ भी वैसे ही रहता है, शरीर के बाद भी वैसे ही रहता है। इस आधार पर जीवन की निरंतरता है ही।

यथास्थिति बना ही रहता है। उसमें गुणात्मक परिवर्तन की बात अपन शुरू किये हैं। तो जीवों में कुछ गुण प्रचलित हुई, माने प्रमाणित हुई। मनुष्य में कुछ गुण प्रमाणित हुई और गुण प्रमाणित होने की आवश्यकता, उसको हम जागृति नाम दे रहे हैं। यथा स्थिति जागृति पूर्वक हो जाए जीवन का, वो निरंतरता सुखद होगी, सुन्दर होगी, सौभाग्यमयी होगी ये हम अपना अनुभव में, परिकल्पना में जोड़ करके हम चल रहे हैं। इस ढंग से काल का यदि हम सही व्याख्या पाना चाहते हैं, वर्तमान ही निरंतर काल है।

परिणाम के आधार पर काल, रचना विरचना के आधार पर काल, दिवा-रात्रि के आधार पर काल, कुछ भी हम गणना करते हैं, वो निरंतर बने ही हैं। परिणाम भी निरंतर बना है। संगठन, विघटन भी बना ही है। वर्तमान की रेखा में वो बनती ही रहती है। उसके बाद भी वो और कार्य करता ही रहता है। परिणत हो करके भी एक यथा स्थिति में आता है। अभी एक यथा स्थिति है, परिणत हो करके दूसरा यथा स्थिति में रहता ही है। जैसा शिशुकाल में बच्चे बहुत छोटे दिखते हैं, अपने यथास्थिति दिखता ही है। वो थोड़े दिन के बाद लम्बाई-चैड़ाई बदल जाता है, उसका यथा स्थिति भी बना ही रहती है। उसके बाद पता लगता है जितना तन्दरूस्त होना है, हो ही जाते हैं, उसके बाद धीरे-धीरे वृद्धापे की ओर चले जाता है, वो भी यथा-स्थिति समझ में आता ही है। उसके बाद मरने के पहले भी एक यथा स्थिति बना रहता है। शरीर छोड़ने के बाद भी शरीर की यथा स्थिति दिखती ही है, उसके बाद जलाने के बाद, या गाड़ने के बाद, सड़ने के बाद, धरती में खाद गोबर होने के बाद, भी उसकी यथा स्थिति बना ही है। यथा स्थिति बना नहीं है, आप हमारे पास कोई ऐसा गवाही नहीं है। हर परिणाम की एक यथास्थिति बनी रहती है। वो status अपने में एक स्थिति है, ये वर्तमान में ही है। इस ढंग से हम वर्तमान की निरंतरता को अच्छी ढंग से भले प्रकार से हम स्वीकार सकते हैं। वर्तमान में कुछ कारणों से कुछ क्रियाओं को देख कर, हम समय को एक छोटे-छोटे टुकड़े में भी पहचान करके

वर्तमान के महिमा को यथावत् हम स्वीकारते हुए चल सकते हैं। ये कहने का मतलब, जैसा “उदयात् उदयम् दिनम्” ये जो बताया, तो उदय से उदय तक की दिन की बात है वो निरंतर है। निरंतर उदय से उदय तक, दिन होते ही रहता है। तो एक दिन हो गया दूसरे दिन बंद हो गया ऐसा तो होता ही नहीं, तो उदय से उदय तक की दिन होने वाली बात है, वो निरंतर होते ही रहता है और उसको भूल जाने से हम भुलावा में पड़ जाते हैं। भूलने का काम आदमी ही करेगा, स्मरण रखने का काम आदमी ही करेगा, समझदारी का काम आदमी ही रखेगा, प्रमाणित करने का काम आदमी ही करेगा। इस ढंग से मनुष्य को प्रमाणित करने का कार्यकलापों के परंपरा को हम जागृति कहते हैं। जिससे आदमी समाधान पूर्वक जी पाता है। समाधान = सुख।

जय हो मंगल हो कल्याण हो!

30. तकनीकी का प्रयोग

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 11, time 24:48-34:15](#)

तकनीकी की बारे में बात अपन सोचते हैं, इसी में engineering आता है, उसमें रासायनिक तंत्र भी आता है, भौतिक तंत्र भी आता है और यांत्रिकीय तंत्र भी आता है। तो इन्हीं तंत्रों को जो हम समन्वय करते हैं, उत्पादन के लिए एक अनुकूल परिस्थितियों को बनाते हैं, अनुकूल योजना बनाते हैं और इन सभी तकनीकी को नियोजित करके उत्पादन कार्य को संपादित करते हैं। उसी के साथ-साथ एक सड़क हुआ, सेतु हुआ, बड़े-बड़े यंत्र हुआ, इन सब को बनाने के लिए भी हम ये तकनीकी का प्रयोग करते हैं।

तकनीकी किसी विचारधारा का उपज नहीं है। मनुष्य के आवश्यकता का उपज है सभी तकनीकी। सभी तकनीकी हमारा आवश्यकता के आधार पर उपजी हुई तकनीकियाँ हैं। ये विचारधारा के आधार पर नहीं आया है, जैसा भौतिकवाद के आधार पर कोई तकनीकी आई, ऐसा कुछ भी गवाही नहीं है। अध्यात्मवाद के आधार पर कोई तकनीकी आ गई, ऐसा कोई गवाह नहीं है। तो सहअस्तित्व को ध्यान करने पर भी यही निकलता है, सहअस्तित्व के आधार पर कोई तकनीकी निर्धारित होगी, ऐसा नहीं है। सहअस्तित्व के लिए हम तकनीकी को उपयोग करते हैं। एक आवश्यकता के आधार पर तकनीकी आती है। हल जोतने की आवश्यकता आई, हल बनाने की तकनीकी आ गई। गाड़ी की आवश्यकता आ गई, चक्के का आविष्कार हो गई और हमको ऊष्मा की जरूरत पड़ी, आग का आविष्कार हो गई। आग को हम सहअस्तित्ववादी विधि से आग कैसे पैदा करोगे? ये कोई भाषा नहीं है। सहअस्तित्व विधि में हम ईंधन विधि को पहचानेंगे। जो सब ऊष्मा चाहिए वो ईंधन ही कहलाता है। सहअस्तित्ववादी विधि से ईंधन नियोजन को हम पहचानेंगे, उसके बारे में बात हो चुकी है।

ईंधन विधि को तकनीकी है ही है, ईंधन विधि हमको पता ही है। ईंधन क्या है? हम को पता ही है, अभी पहले अपन विचार किए तो कोयला को कोड़ना तकनीकी है, कोयला को जलाना, आग से आग जलता है, ये सिद्धांत है। आग से ईंधन जलता है, ईंधन से आग होता है, दो पद्धति है। या engine में तेल को इतना दबाव में लाते हैं, वो जल जाता है, एक विधि वो है, दबाव वश ईंधन प्रज्वलित हो जाना, एक विधि है, और आग से आग जलना एक विधि है। Petrol engine में आग से आग जल जाता है। और ये ना दबाव से जलता है, इन दोनों को आप हम सब देखे ही हैं, समझे ही हैं। ये तकनीकी को हम सहअस्तित्व विधि से नियोजित करते हैं, वो खनिज तेल को हम उपयोग करेंगे नहीं, उसके जगह में यंत्रों को चलाना होगा तो तैलीय वृक्षों के बीज से हम तेल प्राप्त करेंगे, उस तेल से यंत्रों को चलाएंगे। हम यंत्र नहीं चलाएंगे ऐसा नहीं है। क्यों ऐसा करोगे? ईंधन अवशेष जो है ना धरती के वातावरण के लिए हानिप्रद हो गई, धरती का वातावरण बिगड़ने के बाद धरती में बुखार आई, इसके दवाई के लिए हम इसको avoid करेंगे।

प्रश्न : जो कोयले को जला कर हम गति पैदा कर रहे हैं इसको तकनीकी कहेंगे कि नहीं?

उत्तर : कहेंगे ना, बरबादी के लिए तकनीकी उपयोग किया, उस तकनीकी को हम आबादी के लिए नियोजित करेंगे, सहअस्तित्ववादी विधि से वोही तकनीकी को सहअस्तित्व को प्रमाणित करने के लिए करेंगे। क्या तकलीफ है इसमें?

तकनीकी नहीं हैं, ऐसा कुछ नहीं है। तकनीकी ही है, आदमी को आबाद करने के लिए, बरबाद करने के लिए, दोनों के लिए तकनीकी लगती है। वैसे ही धरती को आबाद करने के लिए बरबाद करने के लिए तकनीकी लगता है। उत्पादन को संपादित करने के लिए, उत्पादित वस्तुओं को बरबाद करने के लिए तकनीकी लगता ही है। अभी आप देखते ही हो, एक dynamite लगाते हैं, building धराशायी होता है, उतने लोग मर गए, इतने लोग मर गये, हर दिन पेपरों में सुनते ही हैं। सब जगह में तकनीकी लगता ही है।

कोयले को कोड़ने के लिए भी बारूद लगता ही है। बारूदों की कहाँ जरूरत है? वोही बारूद को हम एक यंत्र को चलाने के लिए उपयोग कर लेते हैं। यदि वो बारूद से वातावरण प्रदूषित ना होता हो, मानव के लिए हितकर हो, बारूद से चलने वाली हम यंत्र को नहीं बना सकते हैं? बारूद जब कोयले को फोड़ता है, पत्थर को फोड़ता है, building को गिराता है, ये सब सुनते हैं की नहीं? आवर्तनशीलता होने के स्थिति में उसको इसमें भी उपयोग कर सकते हैं, railway engine में या और कोई बड़े-बड़े यंत्रों में, हम उपयोग कर ही सकते हैं, जैसा bulldozer वगैरह हैं, ऐसे में उपयोग कर ही सकते हैं, उसकी व्यवस्था भी हो सकती है। उस तकनीकी में कोई तकलीफ नहीं है, यदि बारूद की प्रदूषण से, ईंधन अवशेष से, यदि वातावरण बिगड़ता नहीं है और उससे कोई विपदा पैदा नहीं होता है, उस स्थिति में उसको भी उपयोग कर सकते हैं।

वो बढ़िया स्रोत भी है। निश्चयन करना अपना काम है, वो तकनीकी है, इसको परीक्षण, निरीक्षण पूर्वक निश्चयन करना भी तकनीकी है। वो निश्चयन करने के बारे में अभी कई चीजों को अपन एक सरसरी तौर पर निश्चय कर सकते हैं, जैसा प्रवाह बल को हम यंत्र के क्रियाकलाप में नियोजित कर सकते हैं। उसको प्रयोग करके सिद्ध करना तो बाकी है ही है, ऐसे प्रवाह बल की उपलब्धियों को देखने पर लगता है, ये प्रचुर मात्रा से हो सकता है, और प्रयोग सिद्ध करने के कार्यक्रम में हमको लगना ही होगा।

प्रयोग सिद्ध करते हैं, वोही तकनीकी है। उद्देश्य बन जाने से उसके योग्य तकनीकी हम उपलब्ध कर सकते हैं। हमारे जो मानसिकता है, मानव मानसिकता है, लक्ष्य को यदि पहचान लिया, ये होना चाहिए उपलब्धि, उसके लिए जो युक्तियों को खोज लेता है, वोही तकनीकी है। वैसे ही सारा यंत्र जो बने ही हैं, ऐसा कार्य करने वाले यंत्र बनाना है। एक उद्देश्य बनता है, ऐसा कार्य करने वाले यंत्र बना लेते हैं, बनाए ही हैं। इसी विधि से आगे भी हम कोई उद्देश्य पहचानते हैं, उसके योग्य यंत्रों को हम बना लेते हैं। आवश्यकता के आधार पर जो वस्तुओं को पहचान होता है, लक्ष्य पहचान होता है, उत्पादन की लक्ष्य, उस उत्पादन के लिए योग्य यंत्रों को बना लेना मनुष्य की हाथ की खेल है, ऐसा मेरा सोचना है। और यंत्र बनने के पश्चात वो कैसा उपयोग करता है वाला बात आई, अब जो है, ना सहअस्तित्व विधि से हम यंत्रों को उपयोग करेंगे।

31. कला और तकनीकी

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 11, time 34:16-44:27](#)

कला का हम ये कहते हैं, एक वस्तु को अलंकृत करने के लिए। जैसा ये कपड़ा है, इसमें जो रंग रोगन लगी है, इसका नाम है कला। ये घर को शोभायमान बनाने के लिए हम सफेद पोतते हैं, लाल पोतते हैं, हरा पोतते हैं, कुछ भी करते हैं, ये सब अलंकार को कला मानी जाती है। वो अलंकृत करना, उपयोगिता के साथ अलंकार होना आवश्यक है, अलंकृत होना आवश्यक है। इसको हम कला कहते हैं। जैसा कुर्सी बनाया, वो चिकना हो ये कला है, और बैठने पर सुविधाजनक हो ये कला है, ये जो सिरहाना बनाके रखना एक कला है। कपड़ा बनाना एक कला है, मटका बनाना एक कला है, धातु की बर्तनों को बनाना एक कला है, वस्त्र को सीना एक कला है। इस प्रकार के कलाओं में हम समझता हूँ मानव परंपरा अपने आप को काफी समृद्ध बना लिया है।

प्रश्न : कला और तकनीकी में अंतर कैसे करेंगे ?

उत्तर : देखिए तकनीकी के बारे में ये आता है, जैसा हस्तकला। हस्तकला में जितने भी तकनीकी लगती है, वो व्यक्ति के अधीनस्थ हो जाता है। व्यक्ति के मन में ही वो स्थापित होता है, हाथों से प्रयोजित हो जाता है, इसका नाम है हस्तकला। ग्राम शिल्प, गाँव के लिये आवश्यकीय वस्तुएँ गाँव में पैदा हो जाए, इसका नाम है ग्राम शिल्प। उसमें चर्मकला, मिट्टी की कला, धातु कला, सुहनारी, चमारी, लोहारी सब इकट्ठा हो जाए, ये ग्राम शिल्प कहलाता है। ये ना परिभाषा में आता है। उसके बाद आता है वस्त्र बनाना, मकान बनाना, येन बनाना, तीन बनाना – ये भी ग्राम शिल्प के अंदर आता है या कुटीर उद्योग के अंदर आता है। तो कुटीर उद्योग में यही है, जो कपड़ा बनाते हैं, बुनते हैं उसको कुटीर उद्योग कह लेते हैं। ईंटा को जोड़ना भी एक कला है, शिल्प कला और पत्थर को गढ़ना, मिट्टी की मूर्ति बना देना, ये भी शिल्प कला कहलाता है। चित्रकला में वोही होता है, किसी भित्ति पर किसी पृष्ठभूमि पर जो अपने इच्छित आकार को स्थापित कर देना ये चित्रकला कहलाता है। इस प्रकार की कलाओं को कहते हैं ये सब पूरा गाँव में ज्यादा से ज्यादा प्रचलित रहे, ऐसा हम चाहते हैं। जो उस गाँव में देख करके आया अच्छा काम, वो हमने यहाँ कर लिया। यहाँ देख लिया, अपने गाँव में कर लिया। इस प्रकार से कला समृद्धि की बात बनती है। इसको बनाए रखने की आवश्यकता है।

उसके बाद आता है यंत्र कला। ये भी मनुष्य के काबू के चीज़ हो गई। यंत्र कला में cycle बनाना है, उसके लिए एक machine चाहिए। और motor engine बनाना है, उसके लिए एक यंत्र चाहिए, rail engine बनाने के लिए यंत्र चाहिए। इस प्रकार की यंत्रों की सहायता से दूसरे यंत्रों को बनाने की स्थिति आती है। और मूलतः जो यंत्र है, जिससे यंत्रों को बनाते हैं, वो भी बनाना एक कला है, वो भी तकनीकी है। यंत्रों से पुनः दूसरा यंत्रों को बनाना भी एक तकनीकी है। ये कुछ सीमित लोगों के साथ-साथ ये चल पड़ता है। हर व्यक्ति के साथ ये कला चलेगा नहीं, अभी के अनुसार। और आगे भी ऐसा ही रहेगा। किंतु ये कला, ये तकनीकी जो सब को आया रहता है, और handle करेंगे कुछ लोग। जो जितने भी तकनीकी है, लोक व्यापीकरण करने की कथा है। तकनीकी लोकव्यापीकरण करने में किसी को तकलीफ नहीं है। उसी में उत्पादन की अरमान, उत्पादन की निश्चयन, उत्पादन में विश्वास, ये तीनों

चीज़ उदय हो जाता है। तकनीकी की लोकव्यापीकरण विधि से शिक्षा में इसको प्रवाधानित करने की आवश्यकता है। ऐसा हमारा सोचना है। मानवीय शिक्षा में तकनीकी समाहित रहना आवश्यक है।

प्रश्न : बाबा तकनीकी और कला - ये दो भिन्न वस्तुएं हैं या एक ही वस्तु हैं?

उत्तर : अलग-अलग है, तकनीकी सर्वाधिक जो है यंत्रों के साथ है, यंत्र जो है ना अंततोगत्वा गति प्रदायी कार्य के रूप में ही हैं। ठीक है। एक अपन हाथ से हम कूटते हैं, किसको - लोहे को, ताप ताप करके हतोड़ी से। उसी के लिए एक hammer बना दिया, steam hammer। Steam apply किया, वो hammer ऊपर-नीचे किया, जो मनुष्य 12 घंटा जितना कूट-पीट करके करता था वो 2 मिनट में कर लिया। तो वो यंत्र बनाना तकनीकी। यद्यपि ये हथौड़ी नहीं था, उस युग के पहले हथौड़ी के उपलब्धि के बारे में भी एक तकनीकी ही मानी गई है। उसके आगे की तकनीकी वो हो गया, वो hammer point से बताते हैं। उसी प्रकार से क्या होता है, हम किसी वस्तु को पीटने के लिए शुरू किए, उसके लिए एक drop hammer नाम की एक चीज़ होती है। ऊपर खींच करके ले गये एक बहुत भारी वस्तु, नीचे वस्तु रखा है, ऊपर से गिराया, तो वो पचक करके बराबर हो गया, हम जो चाहते थे वो हो गया।

इसको drop hammer कहलाते हैं। ये सब किया जा सकता है। तकनीकी जो है मनुष्य का आवश्यकता है। सभी तकनीकी हर परिस्थितियों को मुकाबला करने के लिए सभी तकनीकी मनुष्य के हाथ में होना चाहिए। उपयोग आंशिक रूप में होता ही है। हम जितना जानता हूँ, हम उतना तकनीकी को थोड़ा ही उपयोग करा। उसमें हमारा बाल जितना है उतना तकनीकी हम जानते हैं। उसमें एक दो बाल के बराबर हम उपयोग करता हूँ। इसका एक सूत्र लिखा है - जो जितना जानता है, उतना वो चाह नहीं पाता है। वहीं drop हो जाता है बहुत सारा। और जो जितना चाहता है, उतना वह कर नहीं पाता है, और पुनः drop हो गया। जितना करता है, उतने को वह भोग नहीं पाता है, पुनः drop हो गया।

इस ढंग से समृद्धि आती है। इस ढंग की कथा लिखी हुई है। इस ढंग की मानव का कथा स्पष्ट है। तो मनुष्य को तकनीकी के लिए कम से कम 6 बिंदुएँ हैं, जो आहार, आवास, अलंकार संबंधी तकनीकी, उसको उत्पादन करने की तकनीकी, अच्छी तरह से उसको अभ्यास कराने की जरूरत। उसके बाद, दूसरा, दूरदर्शन, दूरगमन, दूरश्रवण संबंधी तकनीकी, उसको उत्पादन करने की तरीका, संभावना, इन दोनों को हम समीचीन बना के रखने की आवश्यकता है, इसी का नाम है व्यवस्था।

परिवार में हम सटीक जीने का जो तरीका बनती हैं, उस तकनीकी को हम विशालतम रूप देने चले जाते हैं, ये सब चीज़ें अपने आप से समीचीन होती हैं। अभी जितना सीख पाए हैं, परंपरा में, उतने को सिखाना बहुत ज्यादा है। तकनीकी मनुष्य के पास ज्यादा आ गया है, जीने की तरीका टेढ़ी-मेढ़ी हो गई है। कैसी टेढ़ी-मेढ़ी हो गई? कामोन्माद, भोगोन्माद और लाभोन्माद के आधार पर टेढ़ी-मेढ़ी हो गई। इसीलिए इसको एक सीधी रेखा खींचने की आवश्यकता है, लोकव्यापीकरण ही उसका सीधा रेखा है। लोकव्यापीकरण विधि से हम सभी आदमी को समृद्ध तकनीकी सम्पन्न व्यक्ति बना सकते हैं, समझदारी विधि से व्यवस्था में जीने में उद्देश्य बनाने योग्य बना सकते हैं। मनुष्य तकनीकी विज्ञान विधि से दिशा को निश्चित करने के योग्य हो पाता है। और सहअस्तित्व विधि से समझदारी

के आधार पर हम जो है व्यवस्था में जीने की पद्धति को हम पहचान पाते हैं, इसके आधार पर अपन एक अच्छी जिंदगी को जी पाते हैं, मानव इतिहास शुरू हो सकता है। इतना ही तो बात है!

32. प्रबंधन

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 11, time 44:28-47:43](#)

प्रश्न : बाबाजी ये कला मूल्य का जो मुद्दा है, तकनीकी और कला दोनों के माध्यम से हम उपयोगिता मूल्य पैदा कर रहे हैं।

उत्तर : तो हर उपयोगिता को सुरक्षित करना, number एक, सुविधा जनक बनाना, दो भाग है इसमें।

जैसा सुरक्षित होना और सुविधा जनक होना। उसको handle करने के अर्थ में सुविधा जनक होना, यही सुन्दरता मूल्य है। उसको उपयोग करने में सुविधाजनक हो, वो सुरक्षित भी हो, इसी अर्थ में सुन्दरता मूल्य है। अभी हम आपको भी देख लीजिए, हम कपड़ा पहने है, ये हमारा सुरक्षा का अर्थ भी है, सुन्दरता का अर्थ भी है, सुविधा का भी अर्थ है। यही अर्थ सब जगह में बनता है। सुन्दरता ये दो अर्थ में आता है, कला मूल्य की जितनी भी बात आता है, इसी अर्थ में आता है। अभी देखिए इसको जिस ढंग से इसको उपयोग करने की तरीका को सुविधाजनक बनाया है, ये सब सुन्दरता मूल्य के अर्थ में ही आता है, इसमें वो अंतरसुरक्षा निहित है।

प्रबंधन का क्या मतलब है? प्रबंधन का मतलब ये होता है, कोई भी हम व्यवस्था को, हम अच्छी तरह से प्रबोधित कर सके, उसको प्रमाणित कर सके, इन दोनों कार्य जिनके पास है, उसका नाम है प्रबंधन। हम प्रबोधन भी करते हैं और प्रमाणित करते हैं। इसका नाम है प्रबोधन भी और प्रमाणीकरण भी, दोनों मिलने से इसका नाम है प्रबंधन। प्रमाणित करना बहुत ज़रूरी है, प्रबोधित करना भी बहुत ज़रूरी है। हम प्रबोधित नहीं करेंगे, प्रबंधन करेंगे, झूठ, महा झूठ। हम प्रबंधन करेंगे, प्रबोधित नहीं करेंगे ये भी झूठ। हम प्रबोधित करेंगे, प्रबंधन नहीं करेंगे ये भी झूठ। प्रमाणित नहीं करेंगे, ये भी महा झूठ। प्रमाणित करेंगे, हम प्रबोधन नहीं करेंगे, ये भी महा झूठ। हम प्रमाणित करने के साथ प्रबोधन रहता ही है। प्रबोधन के साथ प्रमाण रहना आवश्यक है। इस ढंग से प्रबोधन और प्रमाण का संयुक्त रूप का नाम है प्रबंधन।

33. विनिमय कोष और श्रम मूल्य

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 11, time 47:44-1:05:15](#)

विनिमय का विधि यही है, श्रम मूल्य का मूल्यांकन, श्रम विनिमय विधि को पहचानना। एक घाट आता है, ये आदमी समझदार होने के बाद ही इसको निर्वाह कर पाता है। ये आज के जो आदमी आज जिसको महा विद्वान, महामहा उपाध्याय आप कहते हो, वो भी नहीं कर पाएगा। आदमी समझदारी के बाद ही श्रम मूल्य को मूल्यांकित कर पाता है। इसकी आवश्यकता, समझदार परिवार मूलक व्यवस्था में, ये विनिमय कोष व्यवस्था है। विनिमय कोष क्या चीज होता है? श्रम मूल्य का विनिमय करना है। उसका कोष क्या होगा? उपयोगिता मूल्य, कला मूल्य सम्पन्न वस्तुओं का भंडार। वस्तु भंडार का नाम है, विनिमय कोष। विनिमय के लिए हमारे कोष रखी हुई है, माने विनिमय योग्य वस्तुएं रखी हुई हैं। अभी कोष का मतलब क्या हो गया, वो छापाखाना में? छाप लिया फ़रियाँ, और उसको इकट्ठा करके ढेर लगा दिया, उसको आप कोष कहते हैं। चाटिए उसको! उसमें पेट भरेगा की इसमें पेट भरेगा? ये पेट भरने वाला कोष है।

उपयोगिता की वस्तुएं जहाँ प्रचुर मात्रा में हम संपादित कर रखे हैं, ग्राम के ज़िम्मेवारी से, ग्राम समूह के ज़िम्मेवारी से, क्षेत्र परिवार के ज़िम्मेवारी से या जिला परिवार के ज़िम्मेवारी से, जिला समूह के परिवार से, राज्य परिवार के समूह से प्रधान राज्य परिवार के समूह से हम जो सुरक्षित कर रखे रहते हैं हमारे उत्पादन को, ये इस प्रकार की ज़िम्मेवारी से रखी हुई वस्तुओं का नाम है भंडारण, उसी को हम कोष कहते हैं। विनिमय के लिए हम वस्तुओं को रखे हैं, इसी को हम कोष कहते हैं, 'वस्तु कोष'। वस्तु कोष किसको कहा, क्योंकि विनिमय करना है, ये वस्तु को देंगे हम, दूसरा वस्तु लायेंगे। मुद्रा की जरूरत कहाँ है? यदि मूल्यांकन करना बनता है श्रम मूल्य को, उसके बाद आप को मुद्रा की जरूरत नहीं है। ये जितने भी दगाबाज़ी की विधि बनाए हैं वो सब अपने आप से cyanide ले करके मर जाएगा।

मुद्रा विधि दगाबाज़ी का अव्वल अखाड़ा है। मुद्रा विधि ही दगाबाज़ी का मूल स्रोत है। इसको ठीक से समझने की आवश्यकता है। अन्तराष्ट्रीय कोष, दगाबाज़ी का बड़ा दगाबाज़ रहते हैं वो, दगाबाज़ों के गुरु रहते हैं वहाँ, अंतराष्ट्रीय कोष में। ये ऐसा ही बनी हुई है ये, तंत्र ही ऐसा है दगाबाज़ी किए बिना ये कोई चीज़ बनते ही नहीं है। इसको अच्छे ढंग से समझ के इसके लिए समाधान खोजने की बात है। समाधान खोजने पर यही आकार बनता है, हमारे पास प्रचुर मात्रा से गाँव की आवश्यकता से अधिक वस्तुएं सब कोष के रूप में हम रखे हैं। गाँव की दूसरे कोई आवश्यकता बनती है, उसके लिए इसको देते हैं, आवश्यकता की वस्तु लाते हैं। हमारे परिवार की आवश्यकता से जब अधिक उत्पादन कर सकते हैं, पूरा गाँव भी अपने गाँव की आवश्यकता से अधिक उत्पादन किया ही रहेगा। सीधा सीधा गणित।

प्रश्न : श्रम मूल्य का निर्धारण कैसे होगा? श्रम मूल्य के आधार पर विश्व स्तरीय व्यवस्था का व्यवहारिक रूप क्या होगा, जैसे कोई आदमी यात्रा करेगा?

उत्तर : हम इसके बारे में जो परिवार मूलक स्वराज व्यवस्था में इसका पूरा सूत्र लिखा है। व्याख्या का स्वरूप समाधानात्मक भौतिकवाद में भी आया है, आवर्तनशील अर्थशास्त्र में आता ही है। इसका सामान्य सूत्र अभी अपन एक दूसरे को समझने के लिए इतना किया ही जा सकता है, एक गाँव में ज्यादा से ज्यादा 4 परिस्थिति, 6 परिस्थिति, 10 परिस्थितियाँ होती हैं कोई फसल उत्पादन करने के लिए, जैसा चना उत्पादन करना है। चना उत्पादन करने के लिए एक गाँव में 4 परिस्थितियाँ हो सकता है, एक जगह में ज्यादा हो सकता है, एक जगह में कम हो सकता है, ऐसे परिस्थितियाँ होता है। तो श्रम लगाया, यहाँ भी वहाँ भी, एक जगह में 10 श्रम लगा, एक जगह में 4 श्रम लगा, एक जगह में 5 श्रम लगा, सब को एकत्रित किया और उसको समान बना दिया, उतना श्रम लगा, खत्म हो गई बात। इस ढंग से एक श्रम unit निकलती है। एक गाँव के स्तर में हम average निकाल दिया।

उसको 10 गाँव के स्तर में average निकाल लिया। उसके बाद ऐसा 10 गाँव मिल करके जो बनता है एक समिति, उसके average में निकाल लिया, उसके बाद विश्व स्तर पर निकाल लिया, खतम हो गया। इसको निकालने में क्या देर लगता है? हमारे पास गणना विधि है, श्रम को पहचानने की विधि है, उपयोगिता के आधार पर। श्रम नियोजन से क्या होता है, उपयोगिता मूल्य स्थापित होता है। उपयोगिता मूल्य के आधार पर मूल्यांकन, श्रम का मूल्यांकन। कुछ भी नहीं कर सकते हैं उपयोगिता मूल्य के आधार पर मूल्यांकन है तो, आप एक श्रम के जगह में 10 दिन लगाएँ तो क्या करेंगे? वो तो कुछ मिलेगा नहीं, तो हर व्यक्ति को श्रम नियोजन करना आवश्यकता बन जाएगी। और दरिद्रता कहाँ रहेगा? 20 व्यक्ति में एक व्यक्ति आज श्रम नियोजन नहीं कर रहा है, तभी भी हम दाना खा रहे हैं। एक आश्चर्य चकित बात है ये, इतना दगाबाजी के साथ भी सबको दाना मिलता है।

एक से एक दगाबाज, एक गणित आपको बताया था। हल्दी, धनिया खड़ी, एक जगह की सबसे सुगंधिदार धनिया, एक quintal 10,000/- रुपया, 5,000/-, कुछ भी मान लो 10,000/- रुपया, पिसी वोही धनिया 5,000/- रुपया। कितना अच्छी व्यापार है ये! पिसी हुई मसाला, गरम मसाला, आधा दाम में और खड़ी मसाला दुगनी दाम में, पिसी हुई हल्दी आधा दाम में और खड़ी हल्दी दुगना दाम में, आप पेपरों में देखो हर दिन। ये दगाबाजी को कोई अंत है ये? दगाबाजों के इस जमघट में, सबको दाना मिलता है आज भी, ये आलस्यवाद के घेरे में, इने गिने लोग श्रम करते हैं, उनके बदौलत इतने आदमियों को दाना मिल रहा है, ये कम चमत्कार है क्या? सबसे बड़ी चमत्कार यही है, दगाबाजों के जमघट में। यदि ये समझ में आता है तो खून सूखेगा, किसी का भी हो।

व्यापार का कुछ नमूना बताया, तरीका। परसों के दिन हम पेपर में देखते रहे धान, अपना शिखर में पहुँच गई थी, अब धान आ गया अब बिल्कुल नरमी आएगी, ये लिखा है, क्योंकि किसान को पैसा देना नहीं हैं, नरमी आएगी। उसके लिए व्यापारिक संघ का जो मूल केन्द्र है, उनके अनुमति से, जो अभी धान आएगा, उसके अनुमति से, धान का कीमत को आधा कर दिया। काहे के लिए? धान को खरीदना है। चौथाई कर दिया उनकी अनुमति से, ये लिखा रहता है। ये दगाबाजी है कि नहीं है? दिन दहाड़े दगाबाजी।

प्रश्न : श्रम मूल्य के आधार पर जब विनिमय कोश होगा, उस समय यदि यात्रा में हो आदमी?

उत्तर : आदमी अपने आवश्यकता से अधिक उत्पादन करता है, ये तो है ही है। हर परिवार के लिए अधिक वस्तु को विनिमय कोष में रखते हैं। वो issue करता है, इनके पास 10 श्रम मूल्य है, 1,000 श्रम मूल्य है, 20 श्रम मूल्य है,

ये लिखता है। कौन लिखता है? ग्राम के विनिमय कोष। उनका identity रहता है उस परिवार का। उस identity के आधार पर उनके पास जो श्रम रहता है, उसको कहीं भी आप विनिमय कर लो, जिनको देना है, वो लिखेगा, हम इसमें से 4 पाया, तुरंत उनके यहाँ से उतना श्रम मूल्य की वस्तु उनमें transfer हो जाएगा। श्रम विनिमय विधि ये है। किसी भी यात्रा में, किसी भी shop में, किसी भी बाजार में, आप अपने श्रम को उपयोग कर सकते हैं। इससे ज्यादा guaranty card कुछ हो सकता है? मुद्रा जो बात होता है, मुद्रा को आप छपा सकते हो, छापाखाना रखा हुआ है। अभी परेशानी क्या हुआ है, Reserve bank जितना छापा हुआ है, उससे न जाने कितना गुणा, जो कागज दौड़ रहे हैं, उसको कोई कल्पना नहीं कर सकता है। आपका देश का मुद्रा दूसरे देश में छपता है, दूसरे देश का छापा यहाँ होता है। इस ढंग से सभी पूरा हो गए हैं। सब का हालत bend हो गयी है।

प्रश्न : श्रम मूल्य वाला जो card है उसको भी छाप लेंगे बाबा ?

उत्तर : नहीं होता है, वो एक गाँव से होता है। श्रम मूल्य का जो card है समझदार हुए बिना व्यवस्था में जिएँ नहीं, वो भी एक guaranty card है। ये जो कहते हैं, उसके बावजूद भी यदि कूद-फाँद करना चाहते हैं तो होता नहीं उसकी व्यवस्था check balance program है उसको हम समझा देंगे।

जब भी हम दूर संचार में समृद्ध होते हैं, मान लो, हर गाँव दूर संचार से सम्बद्ध रहता है, कोई भी आदमी अपना card से कितने चीज़ को दे करके आएगा, वो तुरंत गाँव में पहुँचते ही अपने दूर संचार विधि से वो व्यवस्था हो जाएगी, और किसको देना है, ये भी record हो जाएगी। वो उतने चीज़ आपके विनिमय कोष से उनके लिए reserve है, वो जहाँ कहते हैं वहाँ वो पहुँचा दिया जाएगा। हर विनिमय कोष के साथ transportation जुड़ा रहेगा। अच्छी तरह से सुनो – विनिमय कोष के साथ transportation program रहेगा। कोई दुराचार होगा नहीं। श्रम विनिमय की एक प्रमाणित पत्रक विधि हर गाँव में स्थापित रहेगी वो। वो आप छपवा करके लाओ दूसरे जगह में से, उसी गाँव में ही जाना पड़ेगा। कहीं से आप छपवा के लाओगे, तो गाँव में जाना पड़ेगा, तब आपका पहचान हो जाएगी।

34. न्याय, संविधान और संप्रभुता

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 11, time 1:05:16-1:15:06](#)

न्याय सुरक्षा का मतलब ये है, जो मनुष्य का न्याय की बारे में बताए थी, उभय तृप्ति उसका केन्द्र बिन्दु है। Target क्या है? परस्पर तृप्ति। उसमें कहीं भी dispute आता है, उसको तृप्ति बिन्दु तक पहुँचा देना न्याय की मतलब है। और न्याय को सुरक्षित कर रखना, मतलब उस गाँव में, परिवार में अन्याय होने की कोई संभावना दूर-दूर से भी आने से रोकना। जैसा एक कोई अव्यवस्था से घटित हो जाए, अव्यवस्था से परेशान ना हो, कोई अकस्मात प्राकृतिक परेशानियाँ हो गईं, उससे परेशानी ना हो और इस सभी बातों से बचाते हुए चलने की विधि का नाम है सुरक्षा। और जो उत्पादन कार्य में सुगमता को बनाए रखें सुरक्षा। ये सभी विधा में जो हम गाँव पूरा एक सुरक्षा से घिरी हुई है।

प्रश्न : संविधान ?

उत्तर : संविधान का मूल बिन्दु है मानवीयता पूर्ण आचरण। मानवीयता पूर्ण आचरण ही संविधान का मौलिक अधिकार। स्वत्व, स्वतंत्रता, अधिकार का आधार इतना ही है, मानवीयता पूर्ण आचरण। उस आचरण को हर जगह में प्रयोग करने का स्वतंत्रता, यही संविधान है। विनियम तो समझ में आ गए, शिक्षा समझ में आ गए, तो मानवीयता पूर्ण आचरण को हर जगह में हम आचरित करने की स्वतंत्रता। स्वत्व क्या चीज़ है? मानवीयता पूर्ण आचरण, जागृति, जागृति के आधार पर मानवीयता पूर्ण आचरण। मानवीयता पूर्ण आचरण को हर देश, काल में उपयोग करने की स्वतंत्रता, इस आधार पर हम शुरू करते हैं। ये मानवीय इतिहास शुरू होने का ध्रुव बिन्दु बन सकता है।

प्रश्न : राज्यनीति ?

उत्तर : राज्य का मतलब, मनुष्य के पास तीन स्तरीय स्थितियाँ हैं। किस बात की? समझदारी की। एक समझदारी का स्तर को हम नाम दिया है, प्रबुद्धता। समझदारी = प्रबुद्धता। समझदारी को प्रबुद्धता नाम दिया है। प्रबोधन करने योग्य, प्रमाणित करने योग्य अधिकार, प्रबुद्धता। ऐसे प्रबुद्धता का मतलब होता है, समझदारी।

प्रबुद्धता के बाद आता है, संप्रभुता। पूर्णता के अर्थ में हमारा समझदारी को उपयोग करना, अर्थात् न्याय समाधान को प्रमाणित करना, समृद्धि को प्रमाणित करना, सहअस्तित्व को प्रमाणित करना, ये क्या चीज़ है? संप्रभुता। अभी हम संप्रभुता को कैसा बताते हैं? सभी जगह में गलती नहीं करना। गलती नहीं करना क्या चीज़, कहाँ से शुरू हुई? भगवान, ईश्वर गलती नहीं करता, राजा गलती नहीं करता, गुरुजी गलती नहीं करते हैं, इन तीन जगह में संप्रभुता को पहचाना गया। ये गणतंत्र प्रणाली आई उस समय में इसके ऊपर चर्चा शुरू हुई, राजा तो मर गए, अब संप्रभुता कहाँ रहेगा? उसके बाद बताया गया, उस समय की report के अनुसार, voter के पास रहेगा। क्या voter क्या गलती नहीं करेगा, इसका guaranty हो सकता है? नहीं हो सकता है। तब क्या होगा? तब संप्रभुता को पहचाना, vote देते समय में voter गलती नहीं करेगा। आज के संप्रभुता यहाँ रखा है। बाकी ये तय नहीं हुआ राष्ट्रपति नहीं गलती करता है, Prime minister गलती नहीं करता है, ये कोई चीज़ तय नहीं हुआ। उसी आधार पर जो इंदिरा

गांधी के समय में आया Prime minister पर, पार्टी अध्यक्ष पर मुकदमा नहीं चलना चाहिए। वो resolution एक पारित किया, जनता पार्टी आयी उसको cancel कर दिया। ये सब बात आपके सामने गुजरी हुई इतिहास हैं, कथाएं हैं। तो अभी संप्रभुता का मतलब वहाँ रखा है। हम क्या कह रहे हैं? समझदारी को व्यवस्था में प्रमाणित करना संप्रभुता है। सही करना = संप्रभुता। पूर्णता के अर्थ में प्रबुद्धता को प्रयोग करना। पूर्णता क्या है? क्रिया पूर्णता, आचरण पूर्णता के अर्थ में, हम प्रबुद्धता को प्रयोग करना, ये हुआ संप्रभुता।

राज्यनीति में, राज्य क्या होता है? वैभव, मानव का वैभव। मानव का वैभव बताया मानवीयता पूर्ण आचरण, मानवीयता पूर्ण आचरण को सर्व देश काल में उपयोग करना मौलिक अधिकार। यही संप्रभुता का आधार है। ये होता है राज्य का मतलब। सही कार्य व्यवहार करना ही राज्य है। उसमें मूल्य, चरित्र, नैतिकता तीन बताया है, तन, मन, धन रूपी अर्थ को सदुपयोग, सुरक्षा करना ही नैतिकता है। इस ढंग से मानव अपने मौलिक अधिकार पूर्वक संप्रभुता को प्रमाणित कर लेना ही मानव का वैभव है। सही ढंग से इसको उपयोग कर, प्रमाणित कर देना, पहचान दे देना ही संप्रभुता है। हर व्यक्ति इसको आचरण में ला सकता है। संप्रभुता सम्पन्न व्यक्तित्व हो सकता है।

सीमा सुरक्षा बल की जो बात कही गई है, उसका मानसिकता संविधान में ये व्यक्त किया है, देश के पड़ोसी देश होते हैं। पड़ोसी देश कभी भी हमारे ऊपर आक्रमण कर सकते हैं। इसीलिए युद्ध से युद्ध को रोकने की व्यवस्था देना है, राज्य व्यवस्था में, सीमा सुरक्षा के संबंध में निर्णय यही है। और देश में हर व्यक्ति अपराध कर सकता है, गलती कर सकता है, इसीलिए गलती से गलती को रोकना है, अपराध से अपराध को रोकना है, दंड व्यवस्था का मतलब ऐसा लिखा हुआ है। गलती से गलती को रोको, अपराध से अपराध को रोको, युद्ध से युद्ध को रोको, ये शक्ति केन्द्रित शासन संविधान का मकसद यही है।

35. स्वास्थ्य संयम

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video12, time 00:00-06:50](#)

स्वास्थ्य का परिभाषा यही बनता है, जीवन अपने जागृति को शरीर के द्वारा मानव परंपरा में प्रमाणित करने योग्य स्थिति का नाम है स्वास्थ्य। इसमें स्वयं में आश्वस्त होने का आधार भी स्वास्थ्य के अर्थ में आता है। क्या आश्वस्त होना है? हमारा जागृति को हम प्रमाणित कर सकें। ये आश्वस्त होने का मतलब, वर्तमान में विश्वास, भविष्य के प्रति आश्वस्त, यही कुल मिला करके स्वास्थ्य का मतलब है।

(दूसरी परिभाषा हम लेंगे जीवन और शरीर की) जीवन शरीर के साथ आश्वस्त होना स्वास्थ्य है। जीवन अपने में आश्वस्त होने का जो बात है, वो प्रबुद्धता ही है, संप्रबुद्धता ही है। यही बनाता है। स्वनुशासन उसी का नाम है।

(तो इसका मतलब ये है कि इस बात से जीवन आश्वस्त है जो मेरी समझदारी है उसको मैं शरीर के माध्यम से प्रमाणित करूँ) इसी का नाम है स्वास्थ्य।

संयम का मतलब होता है, तो संसार में सब नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य – 6 बिंदु हैं संयम के लिए – नियम से संयत है, नियंत्रण से संयत है, संतुलन से संयत है, न्याय से संयत है, और धर्म से संयत है, और सत्य से संयत है। ये किससे संयत रहना है ये? संयत रहने की 6 सीढ़ियाँ हैं आदमी के साथ। इसमें से किस सीढ़ी में हम संयत रहेंगे, कोई ना कोई एक सीढ़ी में संयत रहे, मानव अपने काम निकाल ले जाएगा। किसी सीढ़ी में यदि संयत नहीं रहेगा, वो उसके बाद में पशु मानव के संज्ञा में या राक्षस मानव के संज्ञा में वो प्रमाणित होगा।

किसी भी एक सीढ़ी में संयत रहेगा तो मानवीयता को झेल जाएगा। बाकी की एक दूसरे के साथ जुड़ी हुई कड़ी है, इससे आगे इससे आगे वो झेलने की बात आ ही जाती है। तो नियम जो होता है, आपको क्या बताया था, ठोस ठोस के साथ, तरल तरल के साथ, विरल विरल के साथ, सहअस्तित्व में होना ही नियम है। कैसा ये नियंत्रण है, सच्चाई है? है ना? तो जैसा पदार्थावस्था प्राणावस्था के लिए पूरक होना ही नियंत्रण है। प्राणवस्था पदार्थावस्था के परस्परता में पूरकता प्रमाणित होना ही नियंत्रण है। जीवावस्था और ज्ञानावस्था के परस्परता में पूरक होना ही नियंत्रण है। नियंत्रण का मतलब पूरकता के अर्थ में है। बढ़िया है ना?

मनुष्य नियम पूर्वक रहेगा तो कैसा रहेगा? प्राकृतिक नियम, सामाजिक नियम, बौद्धिक नियम के साथ नियंत्रित रहेगा। बौद्धिक नियम में नियंत्रित रहते हैं, सुख की कल्पनाएँ, सुख पूर्ण विचार, सुख पूर्ण संकल्प, ये सब चीजें हमको मिलता रहेगा। फलस्वरूप ऐसे हम काम करने योग्य होते हैं। ठीक बात हो गई?

तो सामाजिक नियम को पालन करने से क्या होता है? स्वधन, स्वपुरुष, स्वनारी विधि से जीना बन जाता है। ये सामाजिक नियम का मतलब है, इतना ही मतलब है। कोई राम कथा ना होये, पुराण भागवत भी ना होये, इतने में जीना सामाजिक नियम है। इतना में जीया जा सकता है कि नहीं जीया जा सकता? आप ही सोच लो, ठीक है? इसमें यदि रहते हैं तो क्या हुआ? हम मानव परंपरा में नियंत्रित हो गए, कितना अच्छा हुआ। मानव परंपरा में परस्परता में

हम नियंत्रित हो गए। इससे क्या उपकार हुआ ? सम्बन्धों को निर्वाह करने का अधिकार आ गया। यदि ये चीज़ नहीं होगा, संबंधों को निर्वाह करने का अधिकार कतई नहीं आना है। करोड़ों वर्ष के बाद भी नहीं आना ! कैसा उजाला आयो ? खिड़की खोलो उजाला आयो, ठीक है ? तो इसीलिए मनुष्य को कहीं ना कहीं संयत रहने की आवश्यकता है। चाहे नियम पूर्वक रहो, नियंत्रण पूर्वक रहो, संतुलन पूर्वक रहो, न्याय पूर्वक रहो, धर्म पूर्वक याने समाधान पूर्वक रहो या सत्य पूर्वक रहो, इतना ही संयमता की सीढ़ियाँ हैं। किसी भी एक सीढ़ी में जीना शुरू करते हैं, बाकी सीढ़ियाँ हम पार कर ही जाते हैं। ये बात बनाता है, ठीक है ? संयंता का मतलब समझ में आ गया ?

36. स्थिति, गति और बल

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 13, time 00:00-01:54](#)

प्रश्न : भौतिक शास्त्र का एक प्रश्न है, Newton का नियम है, उसमें कहा गया है कि यदि कोई वस्तु स्थिर है, तो वो स्थिर ही रहेगी। और यदि कोई वस्तु गतिशील है तो गतिशील ही रहेगी। उसमें परिवर्तन के लिए कोई बाहरी बल लगाना पड़ेगा। तो इसमें आपका क्या कहना है?

उत्तर : ये बढ़िया है जो कहा है। स्थिरता जो है, एक गतिशील वस्तु में ही स्थिरता को देखना बनता है। गतिशील वस्तु में कोई चीज़, वस्तु रखा है, जैसा धरती है, गतिशील है। उसमें एक camera रखा है, ये स्थिर है। इसको बदलना होगा तो ये आदमी हाथ लगायेगा, तभी बदलेगा, इस आधार पर वो कहा है। बस इतना ही है इसमें। इसमें कौन सा तकलीफ़ है?

प्रश्न : अलग से यदि हम बोलते हैं कोई वस्तु स्थिर है, तो स्थिर ही रहेगी, अस्तित्व में ऐसी स्थिर वस्तु नहीं मिलती।

उत्तर : अस्तित्व में स्थिर वस्तु नाम की कोई चीज़ नहीं है। हर वस्तु गतिशील, स्थितिशील है। स्थिति गति अविभाज्य है। जिस वस्तु का स्थिति है, उसका गति होती ही है, ऐसा बना हुआ है। जितने ग्रह गोल हैं ये सभी का सभी इसी सिद्धांत से हैं। और उसी ग्रह गोल के कोई वस्तु को, हम इसी ग्रह गोल के सब टुकड़े तो हैं। इसको हम कहते हैं वस्तु रखा हुआ है। वस्तु इसी ग्रह गोल की तो है ही है। ठीक है? इसी ग्रह गोल का कोई छोटे से टुकड़े को उधर से इधर करना होगा तो कोई बल लगता है। ये ठीक है। हरिहर!

37. सापेक्षतावाद और अनिश्चयवाद

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 15, time 00:00-21:44](#)

प्रश्न : सापेक्षतावाद नाम से एक चीज़ प्रचलित है, उसके अनुसार कोई भी चीज़ निरपेक्ष नहीं है। 2 चीज़ का सापेक्ष में ही सारी बात है, तो क्या इसको हम सहअस्तित्ववाद मान सकते हैं?

उत्तर : हमारे मानने से क्या होता है? वो जैसा व्याख्या करते हैं, वो तो सहअस्तित्व को व्याख्या नहीं करते हैं। सहअस्तित्व को ही भ्रमित हो कर सापेक्ष कहते हैं। भ्रमित भाषा सापेक्ष। पूरकता को काट करके सापेक्ष कहते हैं। हम कहते हैं सहअस्तित्व है, परस्पर पूरकता है। ऐसा शुरू करते हैं। भ्रमित होकर, इनको सहअस्तित्व का तो कोई ज्ञान नहीं है, न कोई लेनदेन है। क्योंकि काट-पीट करके एक को मोटाना है, एक आदमी काट पीटने वाला होना चाहिए, कटने वाला फसल, बहुत सारा आदमी चाहिए, एक आदमी मोटाना चाहिए बाकी सब मिटना चाहिए। उसके लिए इनका व्याख्या है सब। सापेक्षवाद का यही तो मतलब है।

प्रश्न : एक जो बड़ा major problem है, सापेक्षवाद में, कि वो होने को परिभाषित नहीं कर रहे हैं, स्थिति को परिभाषित नहीं कर पा रहे हैं, सिर्फ एक दूसरे के सापेक्ष में होने को परिभाषित कर रहे हैं। उसके आधार पर निष्कर्षात्मक कुछ निकल नहीं पाता है।

उत्तर : अस्तित्व में पूरकता सिद्धांत है। ये सापेक्षता को अपने में स्वतंत्र रूप में बताना चाहते हैं, रहते हैं पूरकता विधि से। जैसा एक रेखा खींचा, दूसरा रेखा खींचा, एक रेखा थोड़ा सा ऊंचा हो गया, एक रेखा छोटा हो गया, इसको सापेक्ष कहा जाए, इसके लिए, ऊंचाई के लिए ये छोटा पूरक है, ये नीचे के लिए ऊंचा वाला ये पूरक है, ऐसा वो व्याख्या नहीं करते हैं।

प्रश्न : उससे भी ज्यादा serious मुद्दा है बाबा, दो लकीर अगर हमने लिया, तो ये दोनों लकीर का होना, अपने आप में है, ये भी नहीं मानते हैं। ये और serious बात है कि एक के सापेक्ष में ही दूसरा है, मतलब छोटी लकीर अपने आप में एक वास्तविकता है, बड़ी लकीर अपने आप में एक वास्तविकता है, दोनों एक-एक वास्तविकता हैं, उनका होना अपने आप में एक मुद्दा है। उसका स्थिति, गति को समझना मुद्दा है, उसके बाद एक के सापेक्ष में दूसरे को समझना ये दूसरी बात है। और फिर तीसरी बात उसका पूरकता को समझना कि दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। ये एक नम्बर और तीन नंबर को हटाकर, दो नम्बर की बात करते हैं, सापेक्षवाद में। आप हैं तभी मैं हूँ ये बात बनती है, नहीं तो मैं हूँ इसको नहीं कह सकते।

उत्तर : एक ही झाड़ में एक छोटा फल होता है, एक बड़ा फल होता है। हम देखते ही हैं। हमारा गणित के नाप के अनुसार एक बड़ा होता है एक छोटा होता है। ये छोटा होने के लिए यदि गवाही करता है ये बड़ा वाला, ये बड़ा होने का गवाही करता है एक छोटा वाला, ये दोनों को बड़ा नामकरण होने का, छोटा नामकरण होने का ये पूरकता को

निभते ही रहते हैं। ऐसा है अस्तित्व में, अस्तित्व में तो model ऐसा ही है, तो उसको ये अपना मनगढ़ंत कुछ भी व्याख्या करें, उसके लिए कौन क्या करेगा, सुनने वाला जब तक है सुनाएगा आदमी।

प्रश्न : उसमें ये बात स्पष्ट होना चाहिए कि ये छोटा है, ऐसा नामकरण भले ही आप बड़े के तुलना में कर सकते हैं, लेकिन छोटा एक वस्तु के रूप में है?

उत्तर : अपने में वो सम्पूर्ण है, ये point है, ये जो छोटा जिसको कहते हैं, वो भी अपने में सम्पूर्ण है, बड़ा जिसको कहते हैं, वो भी अपने में संपूर्ण है। उसका formula लिखा इकाई + वातावरण = इकाई सम्पूर्ण।

प्रश्न : तो जो major problem है वो होने को ही हम पहले स्पष्ट नहीं करते हैं, उसके बाद उन दोनों की सापेक्षता को परिभाषित करते हैं। उस सापेक्षता के आधार पर होना है, उसको प्रतिपादन कर देते हैं।

उत्तर : जबकि सापेक्षता जो है, होने के बाद एक दूसरे की पूरकता में होता है। अपने अनुसार होने के बाद एक दूसरे के पूरकता के अर्थ में छोटे बड़े होते हैं। वैसे ही पत्थर भी, एक छोटा पत्थर, बड़ा पत्थर, होने के बाद एक दूसरे की पूरकता में, ये अपने को प्रमाणित करते हैं, जबकि दोनों अपने अपने में संपूर्ण हैं। हरी-हर।

प्रश्न : Uncertainty principle नाम का एक चीज़ है, सारी व्याख्याओं को इसके आधार पर करने की कोशिश की है।

उत्तर : Uncertainty = नासमझी। नासमझी = uncertainty। समझी = certainty। इतना लिखो, आगे चलो।

प्रश्न : परमाणु की जब चर्चा कर रहे हैं हम लोग, परमाणु के अंदर अंश गति करता है। अंशों में एक मात्रा भी होता है, मात्रा के साथ गति भी होता है, इन दोनों के संयुक्त रूप को momentum, संवेग कहते हैं। इसके उनके अनुसार ये निश्चित नहीं होता है, इनका जो दिशा रहेगी, अनिश्चित रहेगी।

उत्तर : परमाणु अंशों का गति जब एक वलय में घूमता है, गोल-गोल घूमता है, निश्चित दिशा में ही घूमता है, कभी इधर घूमें, उधर घूमें होता ही नहीं। अब किस बात की अनिश्चयता है बताओ? spin motion जो करते हैं, वो निश्चित ही करते हैं, एक तरफ करवट लेते रहते हैं। अभी जो आप धरती को देखते हो करवट लेते हुए, कितनी बार उल्टा घूमा होगा?

प्रश्न : जैसे परिवेश की दूरी है, मध्यांश से वो निश्चित नहीं होता, कभी पास भी आ जाता है, कभी दूर भी चला जाता है?

उत्तर : वो अलग चीज़ है, वो बात अलग है। वो इस ढंग से है, एक प्यार से सँभालने की वस्तु है वो, प्यार से हम एक निश्चित अपनी व्यवस्था को समीकरण करने के लिए, प्रमाणित करने के लिए कितना दूरी, कितना नजदीक तक हम प्रमाणित कर सकते हैं, वो स्वयं निर्णय किये हैं, परमाणु स्वयं निर्मित कर लिए हैं। उसके लिए आप क्या कर दोगे, मैं क्या कर लूँगा?

प्रश्न : परमाणु अंश को जो गतिपथ है, वो निश्चित नहीं हुआ, इसका मतलब ?

उत्तर : कैसा निश्चित नहीं है ? निश्चित नहीं है तो गतिपथ क्या है फिर ?

प्रश्न : कभी पास आता है, कभी दूर जाता है ?

उत्तर : क्या आपत्ति हुआ उसमें आपका ? जैसे की आप कभी पैर ऐसा कर लेते हो, आदमी बदल गए ? आपका हाथ ऐसा हो गया, आप अनिश्चित हो गये ?

प्रश्न : दूर चला गया तो उसका गति कम हो गई, पास आ गया तो गति बढ़ गई ?

उत्तर : कोई गति कम नहीं होता है, ना ज्यादा होता है। परमाणुओं का गतिपथ में जो गति है, वो यथावत है। spin motion है, वो यथावत है, स्थिति यथावत है, गति यथावत है। गतिपथ जो है कभी थोड़ा पास से चल दिए, कभी थोड़ा दूर भी चल दिए। एक तरफ जितना दूर होता है, दूसरे तरफ उतना ही पास होता है, रहता है, उतना ही। अभी ये धरती जितना भी घूम रहा है सूर्य के चारों तरफ वो भी वैसे ही है।

प्रश्न : इसको इस तरह से मान सकते हैं, रूप और गुण जो परिवर्तनशील है, यहाँ तक वो लोग देख पाये हैं, और इस आधार पर बोलते हैं कि ये निश्चित नहीं है, बदलता रहा है।

उत्तर : परमाणु अंश का रूप कभी बदलता नहीं, सभी परमाणु अंश एक समान हैं। गठनपूर्ण परमाणु एक समान है, प्राण कोषा एक समान, जागृति एक समान। चार बिन्दु इस धरती पर अभी मेरे पास, मैं जितना समझा हूँ, उसके अनुसार चार जगह में समानता को देखा। परमाणु अंश सभी का सभी समान हैं। परमाणुओं के रचना के अनुसार, जहाँ जब वो अंश काम करना है, वहाँ वो ही काम करता है। जैसा प्राणकोषा ये पैर में भी काम कर रहा है, brain में भी काम कर रहा है, हृदय में भी काम कर रहा है, अंतड़ी में भी काम कर रहा है। इसको सामान्य व्यक्ति समझ सकता है, ऐसा मेरा सोचना है।

प्रश्न : अनिश्चयता वादी सिद्धांत का प्रतिपादन जहां से शुरू हुआ, uncertainty principle जिसको कहते हैं, वो इस रूप में शुरू हुआ कि ये जो atom को देखना शुरू किया लोगों ने, जो परिवेश में घूमना है जो अंशों का, उसको वो charge कहते हैं, हम अंश कह रहे हैं, उन charges का जो location है, उसको जब तय करने जाते हैं, तो उसका निश्चित परिवेश दिखाई नहीं पड़ता।

उत्तर : हम देख नहीं पाते हैं बताते नहीं हैं, दिख नहीं पाता है।

प्रश्न : जो आप कहना चाह रहे हैं, परिवेश के आस-पास में दिखाई पड़ते हैं।

उत्तर : ठीक है ना, हम ये कहते है, हम जो देख पाते हैं, आँख तो हकीकत को देखता नहीं, आँख का माद्दा बहुत छोटा है, उस प्रक्रिया से हम सत्य को समझना चाहते हैं, वो होने वाला नहीं है। वो कभी होने वाला नहीं है, आँखों

में सत्यता आता नहीं। आँखों में जितना दिखता है, उसके अनुसार निष्कर्ष निकालते हैं, on the whole कैसा निकालोगे तुम ? आपको आँख से जैसा दिखा, वैसा निष्कर्ष निकाल लिया, निकालो।

प्रश्न : परमाणु को देखने जाते हैं, तो परिवेश के चारों तरफ एक निश्चित दूरी तक, उस अंशों का होना पाया जाता है, तो हम परिवेश तो देख पाते हैं, पहला परिवेश, दूसरा परिवेश, तीसरा परिवेश देख पाते हैं। लेकिन वो परिवेश एक बिल्कुल line में है, ऐसा दिखता नहीं, बल्कि धुँधला दिखता है, एक दूरी है हर परिवेश के साथ, जिसमें वो अंश दिखाई पड़ते हैं, ये देखा गया। इसके आधार पर जो उन्होंने प्रतिपादन किया, वो ये है कि इसका जो होना है, अंश का उस परिवेश में, इसको निश्चयता पूर्वक नहीं कहा जा सकता। एक uncertainty का amount है, एक uncertainty है, अनिश्चयता है, उस परिवेश में होने के लिए, कि उस परिवेश से वो थोड़ा हटा हुआ होता है, ये कितना हटा हुआ होगा, वो इस पर निर्भर करता है कि हम उसको बाहर से देखने के क्रम में कितनी ऊर्जा दे रहे हैं, कितना disturb कर रहे हैं। तो यहाँ से ये बात उन्होंने शुरू की, कि हम उसके होने का निश्चय पूर्वक नहीं कह सकते, की वो उस परिवेश में इसी क्षण में कहाँ पर है। इतना तो हम बता सकते हैं, कि इस परिवेश के आस-पास इस संभावनाओं के साथ होगा। इतना जो है, प्रतिपादन है वो।

उत्तर : ये प्रतिपादन अच्छा है, नासमझी का। उतना जोड़ देने पर ये ठीक पूरा हो जाता है।

प्रश्न : इसमें जोड़ना ये होगा, मेरे हिसाब से, गलती यहाँ पर नहीं है, गलती इस बात पर है कि इसके आधार पर ये निष्कर्ष निकालना कि जो ये अनिश्चयता यहाँ पर दिख रही है, उसके ठीक-ठीक स्थान निश्चित करने में, वही अनिश्चितता पूरे अस्तित्व में है। ये जो निष्कर्ष निकालते हैं।

उत्तर : एक स्थान में होने पर गति कहाँ हुआ ?

प्रश्न : गति + परस्परता का प्रभाव, उसके फलस्वरूप इतनी अनिश्चितता दिखती है।

उत्तर : और एक factor उसमें जोड़िए, हमने जो उसको disturb किया है वो factor।

प्रश्न : उसको तो count कर रहे हैं वो लोग। problem जो है वो ये है कि हम उसको generalize करने जाते हैं, कि जैसा ये अनिश्चयता उस छोटे से स्थान पर दिख रही है, वही अनिश्चितता पूरे अस्तित्व में है ?

उत्तर : हाँ, ऐसा सोचने गए, सबसे नुकसान वो ही हुआ। इसमें हमारा कहना ये है नासमझी हम कैसा करते हैं। पहला मुद्दा ये है, आँखों में किसी सम्पूर्णता समाता नहीं। दूसरा किसी वस्तु को हम अँगुली किए बिना हम पहचानते ही नहीं हैं। अपने स्वरूप से विचलित किए बिना, परेशान किए बिना हम किसी वस्तु को मूल वस्तु को देखना जानते ही नहीं हैं। तीसरा factor ये है गति और स्थिति, अविभाज्यता के साथ सर्वाधिक गति को प्रदर्शित करता हुआ, परमाणु का परिवेशीय अंशों का गति को, एक जगह में आप पाने के लिए कैसा कल्पना करते हैं ?

ये 3 factor इसके साथ जुड़ता है।

प्रश्न : एक factor और बाबा, परस्परता का प्रभाव, वो जो परमाणु और परमाणु अंश है, वो सब बाकी सब परमाणुओं के परस्परता में है, उसका भी प्रभाव है।

उत्तर : सभी रहता ही है, एक दूसरे के साथ। एक दूसरे के साथ रहना एक आवश्यकता है। ये एक दूसरे के साथ होने का फल ही है, ये अपने-अपने परिवेश में, इसके नैसर्गिकता में ये है, इसके नैसर्गिकता में ये है, इनके कारण से इनकी हँसी, इनके नैसर्गिकता से इसकी हँसी, जो इन दोनों का अस्तित्व बरकरार रहने की इसका प्रमाण ये स्वयं में सिद्ध करता है। उसके बारे में हम अपने मनगढ़ंत कहते हैं, जो परमाणु का आचरण अनिश्चित है।

प्रश्न: आप अनिश्चयिता नाम को सुनना ही नहीं चाहते, कैसे बात करें इसके बारे में ?

उत्तर : Uncertainty नाम की कोई चीज़ ही होता नहीं। अनिश्चयता नाम से यदि आप कहना चाहते हैं, अनिश्चयता नाम की कोई चीज़ होती नहीं। मनुष्य निश्चयता को पहचानने में असमर्थता बनी रहती है। वो सामर्थ्य को जोड़ा जाए।

प्रश्न : जिस घटना का वो विवरण दे रहे हैं, उस घटना को हम ठीक से explain कर सकते हैं, और इसमें गलती कहाँ हो रही है, निष्कर्ष निकालने में, वो भी हम स्पष्ट कर सकते हैं। तो घटना तो ये घट रही है कि हम परमाणु अंश को देखने जा रहे हैं, वो परमाणु अंश जो अपने आप में गति में है, स्थिति में है, एक दूसरे के परस्परता में हैं, उसके प्रभाव के कारण, सम्मिलित प्रभाव के कारण, उसका जो अपना परिवेश है, उससे इधर-उधर होते हुए दिखाई पड़ते हैं। अब हम उसको जब देखने जाते हैं, तो हमको वो उस परिवेश विशेष में नहीं दिखते, उसके आस-पास दिखते हैं। ऐसा दिखना है, उसको अगर हम कह रहे हैं कि अनिश्चयता है।

उत्तर : जो अंतिम goal है ना टेढ़ी-मेढ़ी होने के आधार पर, वो जो कहते हैं, उनको आँखों की धोखा है ये।

प्रश्न : धोखा नहीं, उन्होंने पूरा उसको देखा नहीं, इसीलिए उसको ही सिर्फ देखकर ही कह रहे हैं कि ये अनिश्चयता है, एक तो गलती ये हो रही है। दूसरी गलती ये हो रही है कि उस अनिश्चयता के आधार पर निष्कर्ष निकाल रहे हैं कि सब अनिश्चय है। जिसको उनके दिए हुए experiment को भी हम ध्यान से देखकर explain कर सकते हैं, उसको बता सकते हैं।

सापेक्षता को जो बात है, पहला मुद्दा है। हर एक परमाणु अपने वातावरण सहित परिपूर्ण है क्योंकि उसका आचरण निश्चित है। जिसका आचरण निश्चित नहीं है, वो परमाणु हुआ नहीं है। हर परमाणु का अपना आचरण निश्चित होने के आधार पर वो अणु के रूप में, अणु रचित रचना के रूप में, अपने वैभव को व्यक्त किया है। उसी भाँति एक प्राणकोषा अपने वातावरण सहित सम्पूर्ण है। वो सम्पूर्णता के साथ अपने निश्चित आचरण को देता जाता है। उसके आधार पर एक वनस्पति रचना से लेकर, मनुष्य शरीर रचना तक की, शेष रचना तक की अपने को प्रमाणित किया। इतने बात अपने को समझ में आता है। उसके बाद जीवन में जो गठनपूर्णता परिणाम से मुक्ति के लिए होना है, जीवन के स्वरूप में जीवन अपने वातावरण सहित सम्पूर्णता के साथ-साथ अक्षय बल, अक्षय शक्ति को प्रमाणित किया है। और वो ही चीज़ पुनः जागृत हो करके यथार्थताओं को, वास्तविकताओं को, सत्यता को, जीवन में आचरण में

प्रमाणित करने की कार्यक्रम के तहत क्रियापूर्णता को, आचरण पूर्णता को प्रमाणित करता है। इतनी तो कथा है ये, राम कथा! इससे हर एक अवस्था, हर एक-एक का आचरण निश्चित है, इसीलिए हर एक-एक निश्चित है। इसमें सापेक्षता का क्या मतलब आ गया? अनिश्चयता कहाँ से आता है? जब विकास निश्चित है, अस्तित्व स्थिर है। होना स्थिर है, विकास और जागृति निश्चित है, ये ही लिखा है। इसके ऊपर अपना व्याख्याएँ जो देना है, विभिन्न आयामों में, उसको mark करिए, उसको पूरा करेंगे।

38. वनस्पतियों में जीवन और प्राण कोशा

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 15, time 55:07-1:11:05](#)

प्रश्न : पेड़-पौधों में जीवन होता है?

उत्तर : ये जो बात थी, महावीर स्वामी ये कहे हैं, कि पेड़-पौधे में जीव होता है, ऐसा कहे हैं, महात्मा के रूप में, जगदीश चन्द्र बोस ने भी बताया पेड़ बात करते हैं। उन्होंने वनस्पतियों का भाषा सुन लिया, आदमी का भाषा तो नहीं सुना ना। बस इतना ही बात है। आदमी का भाषा उनको सुनना नहीं है और झाड़ का भाषा सुन लिया। हमारे यहाँ कथा बनाना बनता नहीं है क्या? ये तो आज की बात है, पहले पत्थर बात किया है ये कथा ही लिखा है, झाड़ बात किया है ये लिखे ही हैं, पक्षी का बात तो हजारों लिखा है, जानवरों का भाषा से आदमी पाठ सीखा है, अब क्या चाहते हो आप बताओ। कुत्ते से, बिल्ली से, बंदर से, क्या है वो, शृगाल को क्या कहते हो? सीयार से, सबसे जानवरों में शियार को बड़े चालाक माने गये हैं। कथाओं में ऐसा कहे हैं भाई। बहुत जानवरों से आदमी बुद्धि सिखा है, ऐसा कहत हैं। तो इस प्रकार की परंपरा को क्या करोगे? वो उसी प्रजाति के एक आदमी है क्या नाम बताया? वो बतातै है, वो झाड़ बात करता है।

झाड़ बात कर दिया ठीक है, तुम्हारा बच्चों से क्या बात किया आपने, वो तो लिखा नहीं, झाड़ का बात सीख लिया। ठीक हो गया, तो इस ढंग की बात है। तो हमने जो देखा है, ये जितने भी वनस्पती संसार हैं ये शरीर हैं, आपके शरीर, मेरा शरीर, गधे की, घोड़े की, कुत्ते की, बिल्ली की और झाड़ पौधे की, ये जितने रचनायें हैं, इन सब में प्राणकोशा नाम की एक चीज़ है। प्राणकोशा का मतलब ये होता है, साँस लेने वाली सूक्ष्मतम जो कीट हो सकता है, उसका नाम है, प्राणकोशा। प्राणकोशाओं में ये बहुत बड़ी भारी एक गुण देखा गया, हर प्राणकोशा में प्राणसूत्र नाम की चीज़ होती है, वही है कुल मिलाकर के, साँस छोड़ना, साँस लेने वाला और वो साँस छोड़ने साँस लेने का क्रिया के कारण से उसको प्राणकोशा हम नाम दिया। अंग्रेज़ी में क्या कहते हैं हम नहीं जानते।

(शेल होता है बाबाजी जिसका अर्थ है कवच। और सेल जिसका अर्थ प्राण कोशा से ही है। जीवित भी कहते है और डेड भी कहते हैं लेकिन आप जो कह रहे हैं की हर प्राण कोष में प्राण सूत्र होता है, ऐसा नहीं कहते विज्ञान में।

बाबाजी: अस्तित्व में जो एक सच्चाईयाँ हैं, सच्चाई से जुड़ी हुई भाव, किसी भाषा में भी मनुष्य से मनुष्य को यदि पहुँचता है, वो शुभ के अलावा दूसरा कुछ होता नहीं, ठीक है। यहाँ तक अपने को ठीक लगता है, अभी अपन ये सोचने की मुद्दा है, ये जो प्राणकोशा है, प्राणकोशा से रचित शरीर को जीव कैसा कह लिया? इसी आधार पर हम आपसे कहता रहा। life cell तो नहीं कह रहे हैं?

प्रश्न : नहीं बाबा, इस आधार पर कहते हैं, कि पेड़ पौधे अपना भोजन स्वयं बनाते हैं और जीव अपना भोजन स्वयं नहीं बनाते हैं, यही उन में मुख्य अंतर दिखता है, बाकी सारा चीज़ करीब-करीब एक जैसे हैं।

उत्तर : झाड़ पौधे जैसा ही है। ठीक है। पत्थर जो है ना अपना भोजन नहीं बनाता है, ये अपना भोजन बना लेते हैं, ठीक है, मान लिया। ठीक, तो कहना है, ये प्राणकोशायें जो है, ये मूलतः एक प्रजाति की होती हैं। उसमें प्राणसूत्र होता है, रचना विधि होती है, उस-उस प्रजाति की बीज में उस रचना विधि सहित कोशायें होते हैं, उसके अनुकूल परिस्थिति में जो जितने भी रसायन द्रव्यों को चाहिए, वो सम्प्राप्ति होने के पश्चात, वो प्राणसूत्र अनेक कोशाओं में अपने को बदलता चला जाता है, बढ़ाता चला जाता है। इसको प्रजनन क्रिया माना जाता है, एक प्रकार से। या multiplication। प्राणसूत्र में रचना विधि निहित रहती है, कोशा में प्राणसूत्र निहित रहता है। हर प्राणकोशा में।

प्रश्न : बीज की स्थिति में क्या होता है ?

उत्तर : बीजा की स्थिति होता है तो क्या होता है ? बीजा में प्राणसूत्र और रचना विधि सम्पन्न दो बहुत अच्छी जो वस्तु है, एक बीजा के पूर्व रूप, स्तुषि नाम की एक आकार रहता है। कोई भी बीजा को फोड़ कर के देखा जाए उसके अंदर वो जो पेड़ का एक बहुत सूक्ष्म, सूक्ष्मतम स्वरूप बन करके रखा रहता है, ठीक है ? उस स्वरूप में वो प्राणकोशायें वो सूख कर के बने रहते हैं, बीजों में। सूखे हुए अवस्था में रहते हैं। वो जिसको अभी फ्रिज में, उसमें इसमें रखना चाहते हैं, एक वर्ष, वो बीजा में हर स्तुषि सुरक्षित रहता है। इस वर्ष का बीजा, आगे वर्ष तक बिल्कुल कामयाब है। हम लोग डालते ही हैं, वो बीजा उगता ही है और उसमें से किसी percentage नहीं भी उगता है। माने 100 बीजा डालने पर 2-4 कम भी उगता होगा। तो ये बात हमने लोगों ने देखा है। ठीक है।

प्रश्न : स्तुषि में और प्राणकोशा में क्या अंतर है ?

उत्तर : स्तुषि का स्वरूप जो है ना, झाड़ को छोटा, छोटा करते-करते, उसका सुई के नोक के बराबर या छोटा स्वरूप बनाने पर जो होता है, उसमें वो प्राणकोशा सूख कर के बैठा रहता है।

प्रश्न : स्तुषि जो होती है, वो तो आँखों से दिखती है, मूंगफली का, चने का।

उत्तर : हर बीज मे रहता है।

प्रश्न : वो काफी बड़ा होता है। बाबाजी स्तुषि में एक ही प्राणकोशा होती हैं, या कई प्राणकोशा.. ?

उत्तर : तो उसमे क्या रहता है, एक से अधिक प्राणकोशा रहता है। माने वहाँ भी safety measurement है। तो कई 10-10, 5-5, 20-20 कोशाओं से वो स्तुषि बना रहता है, वो सूख कर के वहाँ बैठा रहता है। वो रासायनिक द्रव्यों को पा कर के, वो अपने जैसा प्रतिरूप बनाना शुरू करता है। प्रतिरूप बनाना शुरू करने के बाद वो इतना speed से बनाता है, जितना स्पीड से वो झाड़ बढ़ना है, उस speed से उसमे बनना शुरू कर देता है। पहले वो जहाँ स्तुषि रहती है, वहीं पहले एक को चार, दस बनता है, उसके बाद अंकुर होने की बाद उसका तने मे वो multiply होता है, प्रतिरूप बनना शुरू कर देता है। ऐसा व्यवस्था है। अभी जितने भी झाड़ है, उसका जो कोशाओं का प्रतिरूप बनता है, वो तने में बनाता है। सारदार, रसदार वो तने में ये प्रतिरूप बनाता रहता है, ऐसा है काम। पुनः बीज बनता है, बीजों में पुनः निहित होते हैं। इसका नाम है, “बीज वृक्ष न्याय”। ठीक है, ये ऐसा बनेगी महाराज, हर बीजा की गति यही है।

प्रश्न : बाबा वो प्रश्न छूटा रह गया कि पेड़-पौधे में जीवन होता है ?

उत्तर : पेड़-पौधे में जीवन नहीं है। साँस लेने की साँस छोड़ने की प्रक्रिया है, जीवन नहीं है। ये साँस लेना, साँस छोड़ने का काम प्राणकोशाओं का है। शरीर में भी साँस छोड़ना, साँस लेने की प्रक्रिया होती है, शरीर जीवन नहीं है। इतना बड़ी भारी बात बैठा रहती है। शरीर जीवन नहीं है।

प्रश्न -बाबाजी एक प्रयोग किया गया है, कि छोटे-छोटे पौधे लिए गए, एक पौधे के पास एक दुखी आदमी, या क्रोधित आदमी जाता रहा, तो उसके वृद्धि में दूसरा प्रकार का लक्षण देखा गया, कम वृद्धि हुआ, उतना ही खाद, उतना ही पानी एक व्यक्ति प्रसन्न हो कर दूसरे पौधे को दिया है, तो उसकी वृद्धि कुछ ज्यादा हुई, इस आधार पर माना गया है कि मनुष्य के भावों का प्रभाव पड़ता है। ये जो बात करने वाली बात हम कर रहे थे।

उत्तर : हाँ ठीक है, इस प्रकार से कथाओं को बहुत सारे बात कहा गया है, तो उसको जो हमारे मनोभाव से झाड़ों को व्याख्यायित करना, अभी हम ही, हम बोलते रहे, 2 प्राणकोशायें कितने प्यार से एक दूसरे को समझते हैं, एक बैठा रहता है उसके बगल से वो कैसा बैठने के लिए चले जाता है, प्यार से, वो प्यार थोड़े ही वहाँ रहता है। उसका एक नियति है, उसको वही करना है, दूसरा कुछ कर ही नहीं सकता। ठीक है। ये जो है ना, कथा बनाना, कविता बनाना मनुष्य का एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

तो प्राणकोशाओं से जीवन से बहुत दूर संबंध है। प्राणकोशायें रासायन द्रव्य से बनी हुई वस्तु है, इसका मृत्यु होती है। इसका मृत्यु का मतलब, ये परिणत हो जाता है, और होने में श्वास लेते हुए में भी देखा जा सकता है, श्वास लेने की असमर्थ स्थिति में भी देखा जाता है, जिसको मृत कोशा कहलाता है। ठीक हो गया, इस ढंग के रहते हैं ये। तो उसके बाद, मृत कोषा के बारे में आते हैं, जैसा बीज भी कहते हैं। उसके अंदर जो कोशाएं रहते हैं, सूख कर के रहते हैं, सूखा हुआ स्थिति में वो कोशाएं रहते हुए, रासायन द्रव्यों को पाकर पुनः वो श्वास लेने योग्य हो जाते हैं।

प्रश्न : मतलब बीज में कोशा श्वास नहीं करती हैं ?

उत्तर : कितना बढ़ियाँ चीज़ है। वो अभी आप fridge करने की बताते रहे ना, system वही है, नाइट्रोजन के अंदर रखते हैं, इनके अंदर भी वही वस्तु रहता है, एक वर्ष तक वो preserve करता है। वो नाइट्रोजन को आपको कहीं न कहीं से लाना पड़ता है, इसमें कुछ नहीं है। उसी प्रकार से अभी कृत्रिम गाय, भैंस के गर्भाधान कराने की जो प्रक्रिया करते हैं, उसके साथ भी वैसे ही कुछ रहता है, (नाइट्रोजन में रखते हैं) हाँ बस।

प्रश्न : वो कितना ठीक है, बाबाजी ?

उत्तर : वो कोई खास परेशानी नहीं है। यदि सफलता से उस तकनीकी को सम्पन्न कर सके, उसमें तकलीफ नहीं है। उसमें क्या देखा हमारे यहाँ गायों के साथ, उस प्रकार की प्रक्रिया करा करके देखा गया। 3, 3 बार fail हो गया। उसके बाद उसके विशेषज्ञ हैं, उनको बुलाया गए, दिखाये गए, तो वो कहते हैं वो गलत हो गया, वो जो technician है वो सही नहीं है, नहीं तो material सही नहीं है, ऐसा कहके चले जाते हैं। अब किसको पकड़ें हम।

39. समाधान और भय मुक्ति

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 16, time 42:36-52:59](#)

अभी अपन ये अच्छी तरह से समझने की कोशिश की, एक वस्तु अपने में नियंत्रण कैसा रहता है, नियंत्रित कैसा रहता है? नियंत्रण कैसा दिखता है? इस आँखों में जो नियंत्रण रेखा को देखने की बात, आँख भी गवाही देता है, कि प्रत्येक एक चाहे एक छोटे से छोटे एक क्यों ना हो, बड़े से बड़े एक क्यों ना हो, इसके सभी ओर सत्ता घिरा हुआ दिखाई पड़ती है। आँखों में दिखाई पड़ती है। यही चीज़ है जो इकाई की स्थिति, गति, मुद्रा, भंगिमा, विन्यास हर एक का नियंत्रण रेखा यही है। इसी से ये नियंत्रित रहने से और डूबे रहने से वो अपने आप से संरक्षित रहना पाया जाता है। ये मुख्य में उस बात को ध्वनित करता है, वस्तु की शाश्वतीयता, इसी नियंत्रण वश, ऊर्जा सम्पन्नता वश नित्य वर्तमान है। ये उस जगह को ध्वनित करता है। ये ध्वनि से हम नाशवाद से जैसा भयभीत होते हैं, वो भयभीती से दूर होने की एक बहुत अच्छी रस्ता है, सुलझा हुआ रस्ता है। इसमें कोई किसी का वकालत की जरूरत नहीं है। स्वयं चिंतन पूर्वक अभयता की जगह को पहचाना जा सकता है। उसके लिए ये नियंत्रण, संरक्षण की एक झाँकी सदा-सदा प्रत्येक एक के साथ सजा ही रहती है।

एक बात आपको समझ में आता है। इसी एक के संज्ञा में जो कुछ भी है, इन्हीं में कुल मिला करके यही आकर्षण, प्रत्याकर्षण, विकर्षण ये सारे चीज़, ये नियंत्रण रेखा में ही होता रहता है। नियंत्रण रेखा से बाहर जा करके कुछ नहीं होता है। अब स्वयं में एक में अनेक क्रियाएं होता है, उसमें परस्पर नियंत्रण संतुलन की बात होती है, उसमें जो कुछ भी ताकतें है, ये स्वयं के संतुलन के लिए, स्वयं लगाता है और सदा-सदा बने रहने के लिए सत्ता में नित्य संरक्षण है ही है। इस ढंग से हम नाश की भय से मुक्ति होने की मार्ग है। एक ये है। दूसरा बात आती है, नाश की भय से मुक्ति की। जीवन नित्य है, जीवन अक्षय शक्ति, अक्षय बल सम्पन्न है। जीवन का मृत्यु होती नहीं है, ना परिणाम होता है। अब होगा क्या भाई जीवन में? जागृति होगा या नहीं तो भ्रम रहेगा, दो ही धंधा है। ठीक है। इसके पहले की क्या थी? सारा भौतिक संसार में और रसायनिक संसार में श्रम, गति, परिणाम, इन तीनों पीछे पड़ा रहा। अब जीवन पद होने के पश्चात जीवन में परिणाम का बात ही समाप्त हो गई। परिणाम का बात समाप्त हो गया तो श्रम का निरंतरता हो गई, गति की निरंतरता हो गई। ऐसे तो गति का निरंतरता पहले भी था, परिणाम के साथ रहा, गति का निरंतरता। अभी परिणाम विहीन एक गति की निरंतरता हो गई। इसी को हम कहते हैं, अक्षय शक्ति, अक्षयबल। इन अक्षय शक्ति, अक्षय बल के साथ जीवन का जो वैभव है, अमरत्व के साथ पहचानने की आवश्यकता, जो जीवन का अमरत्व समझ में आ जाए। ठीक है?

ये समझ में आने से मृत्यु भय से आदमी छुटकारा पाता है। मरने की भय से माने सर्वथा मुक्त हो सकता है। यदि भय से मुक्त हो जाता है, धरती पर आदमी सर्वाधिक काम सऊर से कर पाता है। भय से मुक्त होने से सर्वाधिक कार्यों को भय से मुक्त होकर कर पाता है आदमी। भय पीड़ित रहते हुए, सही कार्य को भी हम गलत कर देते हैं, छोटी सी बात। क्या बात है? छोटी सी बात। भय के वशीभूत हो कर हर सही कार्य को, गलत कर देते हैं। भयभीत हो गए, एक आदमी हल जोतने लगा, कूड़ सीधा होवे नहीं करेगा, कूड़ ही सीध नहीं होगा। ना दिमाग ही सीध रहेगा तो कूड़ काहे को सीध होगा भाई? तो घर के अंदर रहेगा, वो जहाँ बैठना है वहाँ बैठेगा ना और ही कोई विकट स्थिति को पैदा कर

देगा। डाँटेगा, डपटेगा, ये होगा वो होगा, स्वयं परेशान रहेगा, दूसरों को परेशान करेगा। वो तो सिद्धांत ही होता है – “जो जिसके पास रहता है, उसी को आवंटित किया करता है” उस आधार पर मनुष्य को भय से मुक्त होना बहुत आवश्यक है। एक आवश्यकता। समस्या भी एक पीड़ा है, समस्या को समाधान से तृप्त करने की आवश्यकता। समाधानित रहने से, भय से मुक्त रहने से आदमी सभी कार्य को सऊर से करता है। समाधानित रहने से मनुष्य, मनुष्य के साथ जितने भी, परिस्थितियाँ आता है, उसका जवाब हो जाता है, एक दूसरे की संतुष्टि मिलने की तरीका निकलती है और प्रसन्न होने की दिन आती है, एक क्षण आती है।

इसीलिए समाधान एक बहुत ही मूलभूत आवश्यकता है, और अभयता एक मूलभूत आवश्यकता है, भयमुक्ति एक आवश्यकता है। ये दोनों होने के बाद हम समृद्धि के पास जाते हैं। ये तीनों मिलने के पश्चात सहअस्तित्व प्रमाणित होता है। इस ढंग की, मानव का जो कुछ भी झाँकी बसी हुई है, सजी हुई है, प्राकृतिक, नैसर्गिक विधि से, वो इसी- इसी को सदा-सदा बताता है। इसको मनुष्य पहचानने की व्यवस्था है। मनुष्य पहचान करके प्रमाणित करने की व्यवस्था है। पहचानने जाता है तो समझदार होता है, क्या बात है! जैसा- एक परमाणु, दूसरे परमाणु को पहचानता है, वो एक अणु के रूप में रचना हो जाता है, एक अणु दूसरे अणु को पहचानने से अणु रचित रचनाएँ हो जाते हैं। एक कोशाएँ दूसरा कोशा को पहचानने पर एक कोशाओं से रचित रचनाएँ विविध प्रकार से हो ही जाते हैं, और एक ईटाँ दूसरे ईटाँ को पहचानने की विधि से दीवाल सीधा हो जाता है। इसी प्रकार हर एक रचनाएँ एक दूसरे को पहचानने की क्रम में रखी हुई है। हर रचना, हर सही रचना, हर सार्थक रचना कुल मिलाकर के एक दूसरे को पहचानने के क्रम में रखा हुआ है। इस ढंग से बना।

उसी में, मनुष्य भी उसी में आता है, एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को पहचानने के क्रम में ही सही, गलती होती है। ठीक हो गए पूरा। चाहते क्या हैं पूछा तो, सही चाहते हैं। सही चाहना हो तो सऊर से पहचाना जाए। क्या सऊर से पहचानोगे भाई? तो मनुष्य तो, हर मनुष्य है ना समाधान चाहता है, इसलिए समाधान से जुड़ा जाए, हर मनुष्य भयभीती से मुक्ति चाहता है, अभयता से जुड़ा जाए, हर व्यक्ति समृद्धि को प्यार करता है, स्वीकारता है, इसीलिए समृद्धि से जुड़ा जाए, इसी अस्तित्व सहज रूप में ही हम सहअस्तित्व में हैं, इसलिए सहअस्तित्व से जुड़ा जाए। जोड़ने की 4 तरीका हुई, 4 आयाम हुई। आप हम मंगल मैत्री, समाधान पाने का और सुखी होने का 4 आयाम हुई। सहअस्तित्व विधि से हम सुखी हो सकते हैं, अभयता विधि से सुख की संभावना बन जाती है, समृद्धि विधि से सुख की संभावना आती है, समाधान विधि से सुख की संभावना आता है। सुख की संभावना का 4 dimension अपने आप से रखा हुआ है। इसको प्रयोग करना है नहीं करना है, उसको decide करना है। ये तो व्यक्ति ही करेगा। प्रयोग करना है, तो समझदार होगा ही, नहीं प्रयोग करना है, तो समझदार होगा नहीं। ठीक है। समझना वस्तु की ही होगा। समाधान वस्तु के रूप में क्या चीज है। अभय, अर्थात भय से मुक्ति, वास्तविक रूप में है क्या चीज, वस्तु के रूप में? वस्तु के रूप में जाते हो तो “विश्वास”। विश्वास का धारक वाहक आदमी। वस्तु के रूप में, गति के रूप में विश्वास है ये। अभयता का जो सकारात्मक भाषा है, वो विश्वास है। सदा-सदा वर्तमान में विश्वास रखना ही, मनुष्य का भय से मुक्ति का प्रमाण है। और मनुष्य, मनुष्य से भयभीत होकर के मिलने की जगह में विश्वास पूर्वक मिलता है, सुख की संभावना, समाधान की संभावना बनता है कि नहीं बनता है? तो भयभीत होकर के एक दूसरे से मिलने से कहाँ संभावना बनता है, सुख की संभावना तो करोड़ों मील दूर भागाता है। तो मनुष्य को परस्पर मिलने के लिए

विश्वास चाहिए, परस्पर मिलने के लिए साथ-साथ होने का अरमान चाहिए, सहअस्तित्व चाहिए। मनुष्य से मनुष्य मिलकर जीने के लिए समृद्धि चाहिए और समाधान निरंतर चाहिए। ये 4 चीज़ को अपने में संजो के रखने के लिए मूल मंत्र है समझदारी। समझदारी आने के बाद जो ईमानदारी, समझदारी के साथ ईमानदारी वर्तता है, ये चीज़ें आने लगती हैं। उसके साथ जिम्मेदारी होने से और प्रमाणित होने के पास में होते हैं, भागीदारी कर देने पर प्रमाणित हो ही जाते हैं। इस विधि से हम अपना पहचान, समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व पूर्वक अस्तित्व में प्रस्तुत करना सफल हो जाता है।

40. कम्पन तरंग से ज्ञानोदय

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 17, time 00:00-21:10](#)

प्रश्न : कंपन प्रदत्त तरंग से ज्ञान का उद्घाटन का व्याख्या ?

उत्तर : जैसा हम कभी भी आँखों से देखते हैं, हाथ से देखते हैं, और किसी भी विधि से हम देखने का प्रयोग करते हैं, तो उससे जो कुछ भी व्यंजना होती है, जैसा आँख के ऊपर प्रतिबिम्ब आता है, स्पर्श के साथ ठंडा, गर्मी आता है, नाक के साथ सुगंध, दुर्गंध आता ही है, इसी प्रकार जो सारे विधि से देखने की विधियाँ हैं, उसको हम स्वीकारने पर जीवन में एक कंपनात्मक गति होती है। वो कंपन स्वयं में कहाँ से आ गई? जो मेधस तंत्र में जो कंपन पैदा हुई, इन सबसे व्यंजित होने के लिए, ये कैसा व्यंजित हो गया भाई, स्वीकार कैसे कर लिया? पहले से जीवन शरीर को जीवंत बनाए रखा था, इसीलिए व्यंजित हुआ। यदि जीवन शरीर को जीवंत नहीं बनाए रखेगा, ना ठंडी लगेगी ना गर्मी। आप देखते ही हैं, जब जीवन शरीर को छोड़ देता है, वो ले जा करके जला देते हैं। कहाँ ठंडी लगता है, कहाँ गर्मी लगता है?

प्रश्न : जीवंत बनाए रखने के लिए जीवन क्या प्रक्रिया करता है ?

उत्तर : जीवंत बनाए रखने के लिए, पहले अपन एक बार हो चुके हैं इसको record किये हैं। क्या है, शरीर की रचना प्राणकोशा से है, प्राण कोशाएँ छलनी के रूप में पूरा रचना को मांस रचना, रस रचना, व सप्त धातु रचना किया रहता है, और इनमें आर पार होने की विधि, एक जीवन परमाणु में अर्हता रहता है। (आर पार होने भर से..) हाँ, इसमें खिड़की बने ही रहती है, इसी का नाम है छलनी। छलनी है तभी तो आर पार है। ठीक है? इसमें जीवन जो है ना, हर जगह में से घूमता ही रहता है, इसलिए हर प्राणकोशा जीवंत रहता है। जीवंत का मतलब क्या हो गया? जीवन के जीवित रहकर शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धेन्द्रियों का संकेतों को ग्रहण करने योग्य रहता है। यदि शरीर जीवंत नहीं रहेगा, वो इसको ग्रहण करेगा नहीं। उसका प्रमाण यही है, कोई-कोई जगह में कोशाएँ बिल्कुल मृत रहते हैं। उसको क्या कहते हैं? मूर्छित हो गये हैं, मर गये हैं।

प्रश्न : बाबा पेड-पौधे की जो प्राण कोशिका है, उसमें तो जीवन नहीं घूमता है, फिर भी जीवित रहते हैं?

उत्तर : वो जीवंत नहीं रहते हैं, सप्राणित रहते हैं।

प्रश्न : बाबा, सप्राणित और जीवंत में अंतर स्पष्ट अभी हो नहीं पाया ?

उत्तर : देखिए सप्राणित रहने से, मनुष्य की शरीर में जीवंत रहना पता लगता है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस गन्धेन्द्रियों को ग्राही विधि से, और वो विधि झाड़ में होता नहीं। इतना ही बात है।

प्रश्न : अभी जैसे बात हुई मनुष्य शरीर में कोई जगह सुन्न हो जाता है, सुन्न होना एक तो ये हो सकता है, कि कोशिकाएँ ही खराब हो गई हों, जिसके कारण सुन्न हो गया, या दूसरा ऐसा भी कारण हो सकता है, कि कोशिकाएँ ठीक हैं लेकिन जीवन उस जगह को जीवंत नहीं बना पा रहा है?

उत्तर : ऐसा कुछ नहीं। कोशा सप्राणित रहेगा तो जीवंत बनाए रखना, जीवन से बन जाता है। कोशिका को सप्राणित रहना आवश्यक है, तभी जीवन कोशाओं को जीवंत बना के रखता है। जीवंत बना के रखने का मतलब ये है शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धेन्द्रियों की ग्राहिता, वो इस पूरे रचना में बना रहता है। कुल मिला कर के ये ही है।

प्रश्न : सप्राणित प्राणकोशाओं में भी शब्द का, स्पर्श का, गंध का प्रभाव पड़ता है?

उत्तर : प्रभाव पड़ना अलग है, स्वीकारना अलग है, प्रभाव तो हवा का प्रभाव आपके ऊपर रहता ही है। सारे हवा का प्रभाव को हम नाक से जितना लेते हैं, उतना ही हमारा उपयोगिता है, स्वीकारना उतना ही है। कैसा है बढ़िया? बढ़िया है ना, बढ़िया हो गया। हमारे पास अनुपाती व्यवस्था है, मनुष्य के पास। किस आधार पर? जीवंत रहने के आधार पर। इनके पास अनुपातीय व्यवस्था नहीं है। तो हवा आयेगा, पूरा हवा झाड़ पर प्रभाव डालेगा ही। और मनुष्य के पास क्या है, पूरा हवा से कितना हवा हमको चाहिए वैसा वो control कर लेता है, घर बना लेता है, गुफा बना लेता है येन कर लेता है तीन कर लेता है, पचास कर लेता है।

प्रश्न : बाबा यदि शरीर के किसी एक भाग को अपन खूब गर्मी देंगे, तो वो तो पूरा का पूरा स्वीकार करेगा?

उत्तर : जब तक वो जीवन उसको बनाए रखने के लिए तत्पर रहता है, उससे ज्यादा यदि आप जला दोगे, छोड़ देता है, उतने को छोड़ देता है या पूरे शरीर को जला दोगे, जीवन शरीर को छोड़ देगा। ये तो देखते ही हो, कई लोगों को आग लगाते हैं, कोई-कोई बच भी जाते हैं, क्यों बचते हैं? जीवन उसको बचाने की इच्छुक रहता है, इसलिए बच लेता है। जब जीवन ये मान लेता है कि इसको बचाया नहीं जा सकता, शरीर ही छोड़ा, भाग गए, उसके बाद कहाँ से बचाओगे। ये तो रोजमर्रा की आई हुई गवाहियाँ हैं, हजारों गवाहियाँ, करोड़ों गवाहियाँ हैं इसका। तो इस ढंग से हम एक अच्छे ढंग से इसको सजा सकते हैं। उस ओर ध्यान ना दें तो आपकी उदारता है। उसको कोई कहने नहीं आएगा, आपको जो है ना घुटी पिलाने कोई नहीं आएगा। आपकी आवश्यकता है, आप स्वयं अपने को लगाना पड़ेगा, इसको विवेचना कर लेना पड़ेगा, इसमें विश्वास रखना पड़ेगा, यथास्थिति से, आपका मनगढ़ंत विवेचना से आपका कोई कल्याण होने वाला नहीं है। वस्तु जैसा है, वस्तु को वैसा ही विवेचना करिये। ठीक है। तो जीवन शरीर को चलाने के लिए, कोई भी रचना चलाने के लिए मेधस तंत्र की आवश्यकता है, जबकि झाड़ जाति में कहीं भी मेधस तंत्र नहीं है। हम कहते हैं कि झाड़ में जीवन होता है। हम कहते हैं तो, हविस पूरा कर लो ना भाई, वैसा ही तुम भी हो, ये भी है, मैं भी हूँ, चलो आगे, आप हम को भी काटने दो, चुल्हे में डालने दो। क्या बात है ये? मनुष्य की सूझबूझ से ही मनुष्य अपने में बहुत सारे परेशानियों को ओढ़ा रहता है, चादर बनाके। अपने ही कल्पनाओं से, ठीक है। उसका क्या परिहार है भाई? उसको अपन भ्रम नाम दिया। भ्रम नाम देने के पश्चात उसका परिहार कैसा करोगे पूछा? तो जैसा है वैसा अध्ययन करो। कहे के लिए चक-पक करें। जैसे- पानी प्यास बुझाता है ये पता लग गया, ठीक है ना, पानी को ऐसे ही समझे रहो। ठीक है ना। और पानी में क्या होता है? पूछा जाये तो उसको यदि विश्लेषण, संश्लेषण करने जाओगे, वो तो आपको और भरोसा दिला देगा, ये प्यास बुझाने की योग्य है। पहले उसका प्रयोजन

को पकड़ करके, प्रक्रिया को पहचानना, प्रक्रिया से प्रयोजनों को पहचानना। दो विधि से अध्ययन हो सकता है। किसी भी वस्तु का प्रयोजन को सहअस्तित्व विधि से, समाधान विधि से, समृद्धि विधि से, अभयता की विधि से आप पहले पहचानिए। वांछित इतना ही है। इसके अलावा कोई चीज़ आपके लिए वांछित वस्तु नहीं है।

इस सूत्रों से हर वस्तु को प्रयोजन के रूप में पहचानिए। पहचानने के बाद उसका विश्लेषण, संश्लेषण, खण्ड, विखण्डन जो कुछ भी करना है करिए, आप को संबोध होगा। प्रयोजन को पहचाने बिना ही काट-कूट दिए तो क्या होगा भाई? जैसा- बच्चों के हाथ में कोई खिलौना दिया, फूल दिया, उसको ऐसा-वैसा नोच-नाच कर के रख दिया, क्यों? उसका प्रयोजन को पहचानते नहीं हैं, नोच-नाच के रख दिया, खतम हो गया, ठीक है ना। तो वही प्रयोजन को यदि, फूल का प्रयोजन को यदि पहचानोगे, तब क्या करोगे, फूल ज्यादा समय तक उस प्रयोजन से सम्पन्न रहे, ऐसा कोई व्यवस्था करेंगे। उसका प्रमाण ये (गुलदस्ता) रखा है। कैसा रखा है? आप ही रखा है। ठीक है ये बात। इसमें जो शोभा है, हमको ये व्यजित होते रहे, ये इस फूल की हमारे बीच की संबंध है। उसके लिए ज्यादा देर रहने योग्य आपने बना लिए। ठीक है ये? तो प्रयोजनों को पहचानने के बाद ही विश्लेषण, संश्लेषण किया जाए। किन बातों में? हम नहीं जानते हैं उन चीज़ों को। मैं जो जिस चीज़ को जान लिया हूँ, विश्लेषण पूर्वक, उसको वैसा ही समझा जाए, उसका प्रयोजनों को समझा जाए, तब वो पूरा हुआ। हम विश्लेषण करें, प्रयोजन को हम समझे नहीं हैं, वो क्या हो गया? “नीम हकीम खतरे जान”।

प्रश्न : कंपन प्रदत्त तरंग से ज्ञान का उद्घाटन होता है?

उत्तर : कैसा हुआ ये, ये क्या हुआ, कैसा हुआ, इसका नेत्र में आने से, स्पर्श में आने से, गंध में आने से, मस्तिष्क में, मेधस तंत्र में इसका संकेत पहुँचता है। वहाँ एक तरंग पैदा होता है, वो तरंग से ज्ञान अर्जन होता है। (ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से) ज्ञानार्जन होता है, जीवन को, ठीक है, एक ये हुई। उसके बाद वही ज्ञानार्जन को जीवन, मेधस तंत्र में प्रसारित करता है, तब ज्ञान प्रमाणित होता है।

प्रश्न : ये गति प्रदत्त तरंग से क्रिया का संपादन हो गया?

उत्तर : हाँ, क्रिया का संपादन होता है और ज्ञानोदय जो होता है, वो मेधस तंत्र के द्वारा जीवन सुनने से वो ज्ञानोदय हो जाता है।

प्रश्न : बाबा ये ज्ञान तो नहीं है, बल्कि ये पहचानना होगा?

उत्तर : ठीक है ना। जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना, ज्ञान का चार पैर। उसमे से एक पैर आपको समझ में आता है तो, बाकि के तीनों को खोजोगे, बात ठीक है। कोई एक पैर तो आता है, शरीर के द्वारा। (बाबा कंपनात्मक प्रदत्त तरंग से ज्ञान का उद्घाटन होता है, इसमें जो है..) कौन सा कंपन कहाँ, मेधस तंत्र में जो कंपन पैदा हुआ, ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा, जो मेधस तंत्र में जो कंपन पैदा हुआ, तो ज्ञानेन्द्रियों में क्या हुआ, वो ज्ञानोदय जीवन को हो जाता है, ये लिखा है महाराज। प्रश्न : अच्छा जीवन सीधे जो है, किसी कंपन से ज्ञान प्राप्त नहीं करता क्या?

उत्तर- पहले तो इतना तो समझो, बाद की बात वो, यहाँ तक ठीक हुआ की नहीं।

प्रश्न : हुआ बाबा ये तो शरीर मे जो हो रहा है, उसकी बात कर रहे हैं। लेकिन हम लोग जो समझना चाहते हैं ज्ञान का मतलब, अस्तित्व अनुभव हो गया, बोध हो गया, जीवन बोध हो गया ।

उत्तर : वो भी इसी तंत्र मे आता है। इसमे जो है, इस ढंग से क्या हुई, हमारा पाँच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा, ज्ञान को प्रमाणित करने का, ज्ञान को प्राप्त करने का रस्ता एक बना। ठीक है, उसके बाद होता है, जीवन स्वयं ज्ञानार्जन करे। ये शरीर, ये जो संवेदनाएं, इन्द्रियों से, स्पर्श ना होते हुए जीवन स्वयं ज्ञानार्जन क्या करता, उस बात पर जाना चाहिए। (इस क्रम में मेधस की भागीदारी फिर नहीं होती) इसमें मेधस का भागीदारी नहीं है। जीवन स्वयं करता है। किस अर्थ में? मेधस द्वारा हम इसको प्रमाणित कर सकते हैं। इस अर्थ में ज्ञानार्जन करता है। ये है, ये मुख्य बात है।

हम कैसा करते हैं? तो संबंध। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधेन्द्रियों से संबंध कहाँ पता लगता है, कुछ नहीं होता है। भाई का संबंध, हाथ से छूने से पता लगता है, आपको लगता है, आप बोलो ना भाई, आपको पता लगता है भाई को छूने से भाई का संबंध पता लगता है? नहीं लगता है। चाटने से भी नहीं लगता है। समझने से ही लगता है। ये कैसा होता है? पहला बात। इसके लिए आता है, तो प्रत्येक एक सम्पूर्णता से जुड़ी हुई है। ये ज्ञान जीवन में प्रतिष्ठित होता है, जैसा अणु से अणु, अंशो से अंश जुड़ी हुई हैं। जीवन से जीवन, और एक धरती से सौर व्यूह, सौर व्यूह से आकाशगंगा ये सब एक से एक जुड़ी हुई है। इसीलिए सब नियंत्रित है। एक के साथ एक मिलकर के एक व्यवस्था को प्रमाणित कर ही रहे हैं। ये तो हमको पता ही लगता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति से एक व्यक्ति का संबंध है। वो व्यक्ति का संबंध में एक भाई संबंध है। उसका जो अर्थ है, परस्पर अभ्युदय के लिए प्रयत्नशील है, यत्नशील है, कार्यशील है, ये उसका मूल रूप है। झाँकी ऐसा सजती है। वो, ये जो संबंध को पहचानने वाला है इसमे, जितने भी कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रियों का कोई संबंध नहीं। यद्यपि ये सब कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्रमाणित करने योग्य है, इसीलिए संबंध है। क्योंकि जीवन और शरीर का भी तो संबंध है। ठीक है? शरीर के द्वारा जो संबंधों को पहचानते हैं, वो सब क्या है, गर्मी-ठंडी, अच्छा लगते तक, बुरा लगते तक संबंधों को पहचाना जाता है। ठीक है?

तो जीवन से क्या पहचाना जाता है? संबंधो को प्रयोजनों के साथ पहचाना जाता है, जाना जाता है, माना जाता है, ये तीनों होने के बाद ये तीनों चीज़ जीवन में ही निहित रहता है। इसमें इन्द्रियों का प्रयोग नहीं। किसको पहचानने के लिए? मूल्यों को पहचानने के लिए, कोई भी उसमे वस्तु नहीं है। किसमे? इन्द्रियों मे। तो जीवन में ही मूल्यों को पहचानने की सामर्थ्य है, किन्तु इन्द्रियों द्वारा, मूल्यों को मैं पहचाना हूँ, इसका guarranty आपको दिला देता है। क्या बात है! बात सही हो गई। तब हम समझदारी और व्यवहार के बीच में और मधुरिम स्थिति पैदा किया, उसका नाम है, “समाधान”, जिसका नाम, ऐसी मधुरिम परिस्थित को हम प्रमाणित करते हैं, इसी का नाम है, “समाधान”। ठीक हो गये? तो इस ढंग से जीवन अपने में तरंगायित कैसा होता है? परस्परता की संबंधों के साथ कंपनात्मक गति होती है, उस कंपन से, उससे व्यंजित होने से, संबंधो से व्यंजित होने से, प्रयोजनों से व्यंजित होने से, कैसा व्यंजना? साक्षात्कार होने से, बोध होने से, अनुभव होने से, तीन विधि से व्यंजनाएँ होते हैं। इन विधा में जो व्यंजनाएँ हो पाते हैं, उसको हम कार्य में, व्यवहार में प्रमाणित भी करते हैं, समाधान को हम प्रमाणित करते हैं। ठीक है ना। समाधान के साथ बाकी तीनों आता ही है, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व ये आते हैं। इस ढंग के सुख पूर्वक जीने की रास्ता, संबंधो को पहचानने के साथ, मूल्यों को निर्वाह करना स्वयं स्फूर्त होता है, जिससे समाधान के साथ हम जीते हैं।

प्रश्न : जीवन कंपनात्मक गति के माध्यम से बिना मेधस को प्रयोग करते हुए, स्वयं में समझता है, ये थोड़ा सा छूट गया बाबा, फैल गया थोड़ा मामला और ठीक से समझना चाहते हैं?

उत्तर : यही बात कहा है, बिना मेधस की सहायता की सम्बंधो का पहचान होता है, होने का साक्षात्कार।

प्रश्न : बाबा जीवन तो यहीं बैठा है, उसको साक्षात्कार दूर की चीजों को कैसा करेगा?

उत्तर : जीवन में जो होता है ना, जीवन में अक्षयबल, अक्षयशक्ति कार्य करता है, ये बताया गया। अक्षय शक्ति दूर-दूर तक, अपने को फैला के देखने की व्यवस्था रखा है। (बाबा तो क्या जीवन का पुंज वहाँ तक फैल के जाता है?) “कल्पना” कल्पनाएँ फैलती हैं, अध्ययन के समय में वो वस्तु तक फैलता है।

प्रश्न : पुंज वहाँ तक फैल जाता है, अगर मैं दिल्ली के बारे में सोच रहा हूँ, तो मेरा पुंज यहाँ भी है, दिल्ली तक फैल गया।

उत्तर : प्रमाणित होने की स्थिति में। ठीक है?

प्रश्न : बाबा थोड़ा सा ये बात स्पष्ट नहीं हो रहा है, जैसे जीवन है, इस पूरे शरीर में भ्रमण करता है, यही उसका कार्य, गतिपथ है। तो जब मैं सामने वाले पहाड़ के बारे में सोचने लगता हूँ, तो क्या ये कार्य गतिपथ बढ़कर पहाड़ तक पहुँच जाता है?

उत्तर : आपका विचार शक्ति पहुँचता है, और शक्ति और बल दो बात कहा है आपको, शक्तियाँ दूर-दूर तक फैल जाती हैं। उसका माध्यम है, वातावरण।

प्रश्न : कैसे होगा?

उत्तर : कैसे होगा! तरंग विधि से होगा।

प्रश्न : बाबा मतलब ये तरंग से बाजू वाला कण में फिर बाजू वाला कण में ऐसा।

उत्तर : इस ढंग से हो कर दिल्ली तक हम connect हो जाते हैं।

प्रश्न : माने भौतिक रासायनिक परमाणु हैं, यहाँ से बैठ के मैं दिल्ली के भौतिक रासायनिक परमाणु को हिला पाता हूँ।

उत्तर : हाँ, करते ही हैं। आप ना मानो ये ठीक है, अच्छे अदमियों का काम है वो करते ही यही हैं, धंधा-पानी।

प्रश्न : अच्छा और वो जो कंपन जो लौट के आता है?

उत्तर : उसको जो है ना, सुनने की अर्हता जीवन में होता है। वो संकेतों को ग्रहण कर लेता है।

प्रश्न : बाबाजी जैसे रेडियो में करते हैं, या टेलीविजन में करते हैं, आस-पास की चीजों को कंपित करा देते हैं।

उत्तर : वैसे ही है वो। ये जो है ना micro, micro, micro किसी micro frequency में, जीवन संकेत प्रकृति के साथ दौड़ता है। उसका जो दौड़ने का प्रतिक्रिया क्या होता है? दौड़ के आना, क्रिया का प्रतिक्रिया समान। उस आधार पर बात बनता है।

प्रश्न : मतलब रेडियो और टेलिविज़न का जो कार्य प्रणाली है, वो जीवन में समाई है वो और ज्यादा सूक्ष्म है।

उत्तर : वो जीवन में समाई है, बहुत सूक्ष्म रूप में होता है। इस ढंग से हम ज्ञानार्जन करने की विधि रखी हुई है। और ज्ञानार्जन किये तो क्या होगा? उसको विवेक में, विज्ञान में, पहचानना होता है। उसको एक तरीका, arrangement देना होता है। इसका नाम है, विवेक और विज्ञान। विवेक में क्या हो जाता है पूछे? लक्ष्य को पहचानना होता है। विवेक का अंतिम प्रयोजन विवेचना, विवेचना का अंतिम प्रयोजन लक्ष्य को पहचानना। लक्ष्य को पहचानने के क्रम में शरीर का कोई मतलब नहीं है, मेधस तंत्र का मतलब नहीं है, इसीलिए विवेक का प्रयोगों को हम पूरा का पूरा ज्ञान के ही स्थिति में हम कर लेते हैं। उसके बाद आता है विज्ञान। विज्ञान में दिशा निर्धारित करना पड़ता है, उसके साथ क्या होता है, तो जो प्रक्रियाओं का चित्रण बनता है। कैसा वो दिशा निर्धारित होगा, वो चित्रण बनने लगते हैं। वो चित्रण जो है ना शब्द से जुड़ता है। शब्द पुनः अर्थ से जुड़ता है, संप्रेषण होता है एक दूसरे के। अभी जो हम कर रहे हैं, वो ही कर रहे हैं।

41. विचारों का स्थान और प्रभाव

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 17, time 21:10-32:10](#)

प्रश्न : किसी स्थान में अच्छे vibration हैं, इसी अर्थ में जैसे मान लिया, ये एक आश्रम है, यहाँ से सभी लोग सुकून, शांती पा के जाते हैं। वो जहाँ भी रहते हैं, वहाँ इस आश्रम के बारे में सोचते हैं, तो यहाँ रहने वाले व्यक्ति को अच्छा लगता है। किसी स्थान का vibration अच्छा होने का क्या मतलब है ?

उत्तर : मतलब यही है, पहले से हमारा परिकल्पना है, ये अच्छा जगह है, एक ये है, इससे भी हमारा ही vibration पहले से प्रस्तुत है। और दूसरा ये विधि है, यहाँ अच्छे लोगों का विचार करना, सोचना, करना, जीना बना ही रहता है, इसीलिए अच्छा लगता है। इसमें कौन सा अलग बात है भाई।

प्रश्न : अच्छे विचारों का, अच्छी इच्छाओं का, अच्छे चिंतन का कोई प्रभाव, वातावरण में रहता है क्या ? जिसको कोई भी व्यक्ति महसूस करता है ?

उत्तर : गतिशील रहता है, ये तो आप मानोगे, अच्छे विचार भी गतिशील है, बुरे विचार भी गतिशील है। इसको समझो, हमारे में ये filter करने की यंत्र रखी हुई है, जीवन में, अच्छे को ग्रहण करते हैं, बुरे को ग्रहण नहीं करते हैं। जैसा चावल को हम पकाना है, पत्थर को अलग करते हैं, चावल को पकाते हैं।

प्रश्न : एक नया व्यक्ति यहाँ पर आँवरी आश्रम में आया, उसको इस आश्रम के बारे में कुछ भी नहीं पता और इस आश्रम के बारे में एक – दो करोड़ लोग बहुत अच्छी भावना रखते हैं, कि ये बहुत अच्छी जगह है, और एक नया व्यक्ति इस आश्रम में पहुँच जाता है तो उसको बहुत अच्छा लगने लग जाता है। तो क्या एक – दो करोड़ लोग इसके बारे में अच्छी भावना रखते हैं वो भी प्रभावित रहता है की नहीं ? ये आपका कहना है।

उत्तर : जो कुछ भी हम सोचते हैं, वो प्रवाहित होता ही है। अच्छा सोचो, बुरा सोचो। एक तो बात हो गई। यहाँ अच्छे लोगों का सोच, इसके साथ यदि जुड़ी रहती है, प्रभावित रहता ही है। एक तो बात ये है। वो आया हुआ व्यक्ति सर्वप्रथम अच्छाई को ही खोजता है, बुराई को खोजता नहीं। आदमी का ये वर्चस्व है। कहीं भी आप किसी के पास जाओगे, यदि पूर्व परिचित नहीं है, उनके अच्छाई को ही आप खोजते हो, स्वीकारते हो, ये समझ में आता है। इसका एक मोटी सी एक उदाहरण – कहीं भी हम रास्ता में जाते रहते हैं, रास्ता भटके रहते हैं, तो आसपास में किसी आदमी, जिसके प्रति हमारा कोई जान पहचान नहीं है, उनसे पूछते हैं, भैया, इस गाँव के लिए रास्ता कहाँ है, वो ये डगर है, ऐसा कह देता है, उसमें हम चल देते हैं। हम न पहले हम उनको देखे नहीं रहते हैं, न सुने नहीं रहते हैं, पूर्ण विश्वास से उसमें जाते हैं वो (गाँव) मिलते ही हैं।

प्रश्न : अच्छे विचार, बुरे विचार तरंग के रूप में जो गतिशील रहते हैं, अच्छे और बुरे जो विचार है, क्या उनके तरंगों के कंपन में अंतर होता है ?

उत्तर : उसमें ऐसा सोचना चाहिए, एक receiver नाम की चीज़ होगी, माने ग्राही। ग्रहण करने वाला एक क्रिया होगी, विसर्जन करने वाला एक क्रिया होगी। विसर्जन में तरंग पैदा होता है, और ग्रहण में तरंग ग्रहण होता है। इस विधि से अस्तित्व में जो है, जो अभी धरती की वातावरण में ज्यादा से ज्यादा बुरे विचार भ्रमण करता रहता है, कम से कम अच्छे विचार भ्रमण करता है, इसीलिए धरती की बहुत सारा जगह खराब लगता है, बहुत कम जगह अच्छा लगता है। उसके लिए क्या सहायक वस्तु है पूछो। वहाँ स्वयं में निवास करने वाले एक सहायक होता है, आसपास की परिस्थितियाँ दूसरा सहायक होता है। और वहाँ जो सबसे ज्यादा वहाँ रहने वाले उसका वर्चस्व को बनाए रखते हैं। सबसे अच्छे से अच्छे जगह में भेदे आदमी को देखकरके आदमी उतना ही डरता है, जितना खराब जगह में रह करके डरता है। तो डरावनी जो बात है (भय) तो मनुष्य की अस्वीकृति का द्योतक है। हम को अस्वीकार है, इसीलिए हम डरते हैं। तो अस्वीकार वाला जो bundle है अभी मानव के पास ज्यादा है, स्वीकार वाला कम, इसी आधार पर आप हम ज्यादा भाषा का प्रयोग करते हैं, वस्तु को ग्रहण करने की जगह में। जय हो मंगल हो कल्याण हो।

प्रश्न : विचारों के आधार पर जो व्याख्या किया आपने क्या यही telepathy है ?

उत्तर : हाँ, उसी के आधार पर व्याख्याइत होती है, जो आप में ग्राहिता की प्यास और विसर्जन की तकनीकी, दोनों एकत्रित हो जाती है, ग्राहिता की प्यास भी बना रहता है, विसर्जन की ताकत भी रहता है, और इन तरंगों को पैदा करने में आप समर्थ हो जाते हैं। हम दिल्ली में बैठा रहता हूँ हमारे में भी ऐसा ही component fit रहता है इसलिए हम आपकी बात सुन भी लेता हूँ, हमारी बात आपको सुना भी देता हूँ। इसी को telepathy कहते हैं।

प्रश्न : एक प्रचारित विचार है वो कितने लम्बे काल तक बना रहता है, अगर ऐसी कोई स्थिति बनती हो तो ?

उत्तर : ऐसा कुछ नहीं। एक क्या होता है बाबा, एक तो बात आप समझों हर आवेश सामान्य होना चाहता है, ये बात आपको समझ मैं आता है। तो हम पैदा किया, जिस तरीके से वो जा करके सूक्ष्म, सूक्ष्मतरंग तरंग के रूप में काम करता है, उसके बाद सामान्य हो जाता है।

प्रश्न : जैसा कहा जाता है, महाभारत काल की आवाज अभी भी है।

उत्तर : वो सब कथा सुनते रहो।

प्रश्न : जैसे आवरी आश्रम के बारे में मेरी भावनाएं बहुत अच्छी हैं, मैं इसको बहुत अच्छा समझता हूँ, और मैं आवरी में रहता हूँ तो भी मेरा अच्छा वाला प्रभाव यहाँ रहेगा, यदि मैं यहाँ से एक हजार किलो मीटर दूर रहता हूँ तो तो भी वो प्रभाव रहेगा। परंतु किसी वजह से यदि इसके बारे में मेरे विचार बदल जाते हैं अभी, तुरंत, तो तुरंत वो प्रभाव खत्म हो जाता है या कुछ समय बाद खत्म होता है ?

उत्तर : प्रभावित नहीं कर पाता है, ये माना जाए, उस मुहूर्त से आपके ऊपर प्रभावित होने वाली जो receptivity थी वो बंद कर दिए हो इतना ही न किये हो।

प्रश्न : मेरा प्रभाव अभी लोगों पर पड़ रहा है यहाँ जो लोग आ रहे हैं मैं इसको अच्छा मानता हूँ तो लोग इस जगह को अच्छा मानते हैं उसके पीछे मेरा भी एक विचार कारण है, तो जैसे ही मेरा विचार परिवर्तित हो जाता है उसी क्षण से ये बंद हो जाता है क्या या एक दो घंटे बाद ?

उत्तर : आपका समप्राप्ति की विधि है वो बंद हो जाता है।

प्रश्न : मेरी संप्राप्ति की विधि तो बंद हो गयी लेकिन मेरे से दूसरों को जो प्राप्त हो रहा है ?

उत्तर : वो तो आप जो दे रहे हो वो मिलता रहेगा।

प्रश्न : उसी क्षण से बंद हो गया ?

उत्तर : आपके पास दो क्रिया होता है न, पहुँचाने वाला, ग्रहण करने वाला। अभी ग्रहण करने वाला बंद कर दिया तो आपको ये आश्रम अच्छा है ऐसा नहीं दिखा। आप जो पहुँचाते रहते हो पहुँचाते रहो, प्रभाव पड़ता ही रहता है।

प्रश्न : जैसे अभी तक मैं अच्छा विचार पहुँचा रहा था, तो उनको अच्छा मिल रहा था। अब मैंने अच्छा विचार अपना बंद कर दिया, अब मैंने बदल दिया उसको उलट कर दिया तो वो बुरा वाला विचार उन तक कब पहुँचेगा ? तुरंत पहुँच जाएगा ?

उत्तर : पहुँचाने वाला आपका capacity अलग है, वो दरवाजा अलग है, ग्रहण करने वाला दरवाजा अलग है। आप ग्रहण करने वाले दरवाजे को बंद करने पर ही ये जगह खराब दिखना शुरू किया, अब आप जो पहुँचाते हो पहुँचता रहेगा।

प्रश्न : यदि पहुँचाने वाले को मैं change कर दिया ?

उत्तर : चेंज किया तो वो ही जाएगा।

प्रश्न : उसी क्षण से ?

उत्तर : हाँ।

प्रश्न : और पहले वाला खतम हो गया, उसी क्षण से ?

उत्तर : जो तरंग पैदा हुआ है वो सामान्य होने की जगह में ही जाता है।

प्रश्न : उसमे कितना समय लगता है ?

उत्तर : उसमे समय कुछ नहीं, आपने शब्द बोला, हमको बोला, हम सुन लिया/ नहीं सुना। खतम हो गई बात।

प्रश्न : ये तो शब्द का कंपन है खतम हो गया।

उत्तर : वैसे ही विचार का भी वैसे ही है।

प्रश्न : कुछ घटनाएं जो भविष्य में होने वाली हैं, वो दिखाई दे जाती हैं।

उत्तर : मनुष्य का कल्पनाशीलता की एक क्षेत्र बना रहता है, हर व्यक्ति का। उस कल्पनाशीलता के क्षेत्र के अंदर, भावी क्षणों में घटित होने वाले बहुत सारे झाँकी, कल्पना में आ जाता है। उस आधार पर हम सोचते हैं, पहले से हम ऐसा देखा, घटित हो गया। ऐसा कहते हैं।

प्रश्न : भूतकाल में जो घटनाएं घट चुकी हैं, जिनको हम जानते नहीं हैं, उनको जब ध्यान से देखा जाए, तो क्या उसमें से कुछ घटनाएं दिख जाती हैं, समझ में आ जाती है क्या ?

उत्तर : भूतकाल का जितने भी घटना है, किसी ना किसी की स्मरण की संप्रेषणा होना चाहिए, स्मरण, संप्रेषणाएं होती रहती हैं, उन वैचारिक संप्रेषणा में कोई ना कोई संप्रेषणा करता रहता है, आप देख लेते हो। उस घटना की स्मृति किसी ना किसी जीवन में रहती ही है, वो संप्रेषणा जो है आपके कल्पना रेंज (range) में आ गई, आपको वो डिजाइन (design) मिल गई आप सोचा की ऐसा घटित हो गया।

42. अनुभव - जानना, मानना, पहचानना और निर्वाह करना

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 17, time 32:10-44:10](#)

प्रश्न : बोध और प्रमाणिकता का तृप्ति बिन्दु अनुभव है, अनुभव को इस आधार पर अच्छे से परिभाषित करने की जरूरत है, क्योंकि अभी अनुभव में पूरे चित्र दिखेंगे, पूरी वस्तु दिखेगी ऐसा हम लोगों ने समझ कर रखा है।

उत्तर : बोध के बारे में ये बताया है, अनुभव की रोशनी में, स्मरण पूर्वक, इन दोनों के बीच में वस्तु का बोध होता है। इसी का नाम अध्ययन है। अनुभव का रोशनी में वो photography है ही है। क्या photography है? जो बोध किए हो। रूप, गुण, स्वभाव, धर्म जो कुछ भी आपको बोध हुआ।

प्रश्न : क्या बोध में रूप गुण भी होता हैं?

उत्तर : एक बार यहाँ से शुरूवात करो, आगे filter लगाएंगे।

प्रश्न : अनुभव की रोशनी क्या चीज़ है? इस को clear कर दीजिए।

उत्तर : अनुभव की रोशनी है तृप्ति। जीवन तृप्ति उसका नाम है। जो आपमें भी होता है, मुझमें भी होता है। तृप्ति स्थली का नाम है अनुभव। तृप्ति स्थली का स्रोत, सोचते हैं? करने की एक स्रोत है, सोचने की एक स्रोत है, विचारने की एक स्रोत है, बोलने का एक स्रोत है और प्रमाणित करने का एक स्रोत। इन सभी स्रोतों से हम तृप्त होने का स्थिति का नाम है 'अनुभव'। उसका प्रमाण क्या है? और हम यदि व्यवहार में प्रमाणित करने जाते हैं, समाधान होना ही होना। चोर सब बाहर चले गए ना? सारी चोरी चली जाती है बाबा, यही तकलीफ़ है इसमें! हम जब कभी भी प्रमाणित हुए समाधानित होना है, समाधान होना है। क्या समाधान है? जो हमने बोध किए थे, प्रमाणित किए, इन दोनों में तृप्ति मिली, इसका नाम है 'समाधान'। कार्य कारण का पूर्ण तृप्ति, कार्य को भी हम समझे हैं, कारण को भी हम समझे हैं, इन दोनों की तृप्ति बिन्दु। कारण के अनुरूप कार्य हो गया, कार्य के अनुसार कारण संतृप्त हुआ, प्रमाणित हुआ।

इसको हम तृप्ति बिन्दु के रूप में पहचानते हैं, इसका नाम है समाधान। और कार्य और फल। कार्य और फल के साथ यदि तृप्ति मिलती है, उसका नाम है अनुभव, समाधान। जैसा आप कोई कार्य किया, वो सफल हो गया तो तृप्ति मिलती है ना? हर जगह में कार्य और कारण की तृप्ति, विचार और कार्य की तृप्ति, सोच और निर्णय की तृप्ति और पाया हुआ जितना भी ज्ञान है उसका वितरण और उसके फलन में तृप्ति, ये तृप्तियाँ मिलती रहती हैं, ये निरंतर तृप्ति की रास्ता बनी हुई है। वो तो अतृप्ति की जगह-जगह में जीने के लिए हम घर बनाते हैं, घोंसला बनाते हैं। निरंतर जो तृप्ति है अस्तित्व में वो ही अनुभव है।

प्रश्न : बाबाजी जानने मानने की तृप्ति बिन्दु साथ-साथ है, या जानने की अलग तृप्ति, मानने की अलग तृप्ति?

उत्तर : जानने मानने की तृप्ति, दो component होंगे, हर जगह में। दो component के बीच में जो संगीत होता है, वो ही तृप्ति है। जानने मानने की तृप्ति, जानने से मानने में जो हमारा पूरा सटी हुई जगह, मानने से जानने की सटी हुई जगह वो तृप्ति बिन्दु है। जानना, मानने में कोई विरोध नहीं कर रहा है, negation में बात करें, बल्कि सकारात्मक रूप में स्वीकार रहा है। जानने वाला जो भाग है, मानने को स्वीकार कर रहा है। मानने में जानना अपने आप में स्वीकार है। अब इसी का सारा projection है, मूल में ये दो ही component हैं।

प्रश्न : क्या इसके बाद मानने और पहचानने में भी ऐसे ही तृप्ति बिन्दु?

उत्तर : हाँ, ऐसे ही है, जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना चार भाग। अब अंतर्मुखी विधि से क्या है? जानना, मानना, पहचानना तीन component पूरा हो जाता है। निर्वाह करना, एक component शरीर के द्वारा निर्वाह होना है। माने तीन भाग केवल जीवन में ही workshop हो जाता है, एक भाग जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में workshop होता है। इसका परिणाम क्या है? समाधान, सफलता = समाधान। क्या सफलता? जानने, मानने में सफलता। एक दूसरे के बीच में संगीत, तृप्ति, मानने और पहचानने में तृप्ति, 2 तृप्ति बिन्दुएं मिल गई और पहचानने, निर्वाह करने में तृप्ति, पुनः निर्वाह करने और जानने में तृप्ति। इस ढंग से 4 तृप्ति बिन्दु मिलता है। इसमें हर दिन आवर्तनशील होता रहता है, कोई क्षण इससे रिक्त नहीं हो सकती है। कोई कार्य इससे रिक्त नहीं हो सकती है।

प्रश्न : जानने, मानने की 5 बिन्दुएं हैं, ऐसे आप समझाते रहते हैं, अस्तित्व, विकास क्रम, विकास, जागृति क्रम, जागृति।

उत्तर : जानने की बिन्दु इतना है, इसमें हम प्रामाणिक होने की तरीका सहित मानना होता है। यदि जान लिया हमने उसको प्रामाणिक होने की तरीके सहित उसको मानना बनता है। आप हूँ कह दिये तो मानना हुआ नहीं।

प्रश्न : दूसरे को समझाने योग्य हूँ, ऐसा भी हो गया। अस्तित्व सत्ता है, प्रकृति है, उसको जान लिए। ऐसा ही जीवन भी जान गए, मान गए, तो जीवन जागृति भी जानना, मानना पड़ेगा।

उत्तर : जानने, मानने की तृप्ति बिन्दु = अनुभव। पहले वो formula को fix करो। इसको ठीक से समझो। मानना कब हुआ बताया? हम प्रमाणित करने की component के साथ-साथ हम मानते हैं, उसका प्रमाण क्या है? हम प्रमाणित कर देते हैं। आप जाने हो, माने हो, इसको आप प्रमाणित कर देते हो। किस आधार पर? पहचानने, निर्वाह करने के आधार पर।

प्रश्न : जैसे जीवन जागृति भी जानने, मानने की एक बिन्दु है, तो जीवन जागृति को प्रमाणित कर देंगे, उसके बाद अनुभव होगा?

उत्तर : जानने के बाद मानना होता है। वस्तु को हम बोध करने के बाद, वस्तु को हम प्रमाणित करने योग्य हूँ, इस बात को मानना होता है। मानना क्या चीज़ है? हम प्रमाणित कर सकता हूँ, इसको मानना।

प्रश्न : कर सकता हूँ या कर दिया हूँ?

उत्तर : प्रमाणित करने के बाद कर दिया हूँ, ये आवाज निकलता है। शुरुआत जो है अध्ययन से हम जान लिया, वो जानने की कोई प्रक्रिया पहले से है ही। उसी प्रक्रिया से या दूसरे उनसे संभावित प्रक्रिया से मैं प्रमाणित होता हूँ, या हो जाऊंगा, हो सकता हूँ, इस ध्वनि में आता है, इसका नाम है मानना। जैसा- कोई आदमी खाना बना रहा है। उसको एक आदमी देख रहा है, मैं भी कर सकता हूँ, इस जगह पर आते हैं। वो प्रक्रिया को जानना तो हो गया खड़े-खड़े, उसके बाद एक निश्चित विधि से हम इसको कर सकता हूँ, करूँगा, कोई ना कोई जगह। करूँगा जगह में आते है, तो संकल्प हो गया, कर सकता हूँ, के जगह में हम मान लिए, कर दिया जगह में प्रमाणित हो गए।

प्रश्न : जानने के बाद प्रमाणित होने के बीच में क्या दूरी है?

उत्तर : दूरी कुछ भी नहीं है हमारे बेवकूफी के अलावा। जानने, मानने की दूरी की यदि कल्पना करेंगे वो हमारा बेवकूफी के अलावा दूसरा कोई वस्तु नहीं है। जानने और प्रमाणित होने के बीच भी दूरी नहीं है। अगर दूरी है, इसका मतलब जाना ही नहीं है। ये कितनी भारी प्रहार है, आज के intellectuals अधमरा हो जाता है। जानने का प्रमाण मानना है, मानने का प्रमाण पहचानना है, पहचानने का प्रमाण निर्वाह करना है, निर्वाह करने का प्रमाण है, प्रमाण को पुनः जानना। क्या बात है! ये चार ही पैर से चलेगा।

43. बोध साक्षात्कार

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 17, time 44:10-01:02:51](#)

प्रश्न : बोध का क्या मतलब है ? पहले आप जैसे जीवन क्रिया को समझा गया, चिंतन करने से वो बोध में जाएगी, अनुभवगामी विधि से।

उत्तर : अध्ययन में जो वस्तु है, क्या ? संबंध एक वस्तु है, वास्तविकता है। वास्तविकता होने के कारण एक वस्तु है। व्यापक एक वस्तु है, क्योंकि व्यापक एक वास्तविकता है, जीवन एक वस्तु है, क्योंकि जीवन एक वास्तविकता है, जीना एक वस्तु है, क्योंकि जीते ही हैं। एक वास्तविकता है। तो जो जीवन साक्षात्कार हो जाए, किसमें ? चिंतन श्रेष्ठ में, जीवन में। जीवन साक्षात्कार होने के लिए दूसरा कोई काँच नहीं होता है। जीवन में ही जीवन साक्षात्कार होता है। साक्षात्कार हुआ उसका बोध हो जाता है। साक्षात्कार होने के बाद ही बोध होता है। माने हम जो अध्ययन कराते हैं। शब्द छोड़ करके अर्थ में जाता है तो साक्षात्कार होता है, अर्थ साक्षात्कार हुआ। अर्थ का बोध हो गया। बोध का मतलब अर्थ स्वीकृत हो गया। ये जो साक्षात्कार हुआ उसका स्वीकृति हो गई जीवन में, वो अपना स्टॉक हो गया, इसका नाम है, समझ, जानना। जानने की बात पूरा हो गया इसी प्रकार जो जो मुद्दा है, अस्तित्व एक मुद्दा है। अस्तित्व को जानना, एक पहला बात।

प्रश्न : बाबाजी क्या ऐसा भी हो सकता है कि साक्षात्कार तो हो गया है, परंतु वो स्वीकार नहीं हो रहा है ? ऐसा होता है कभी ?

उत्तर : ऐसा होता नहीं, साक्षात्कार हुआ तो हो ही जाता है।

प्रश्न : जागृति जैसे पता चल गया क्या है, साक्षात्कार हो गया, परंतु अपना जीने की निष्ठा प्रिय, हित, लाभ में ही हैं।

उत्तर : तब तो वो बात नहीं हुआ, प्रमाणिकता का पक्षधर नहीं हुआ। साक्षात्कार ही नहीं हुआ। साक्षात्कार हुआ तो स्वीकार होता ही है।

प्रश्न : साक्षात्कार हो गया तो स्वीकृत हो गया, पर उसमें अगर प्रमाणित होने की निष्ठा नहीं हुई है ?

उत्तर : अब वहाँ एक स्टॉप है। साक्षात्कार होने के बाद प्रमाणित होना है कि नहीं होना है, उसमें आपका स्वतंत्रता बनता है। साक्षात्कार बोध के पश्चात हम प्रमाणित होना चाहता हूँ, नहीं चाहता हूँ ? यहाँ एक रेस्ट हाउस (rest house) है, इसको आप कन्सिडर (consider) कर सकते हैं। हम समझ गया हूँ हम प्रमाणित होने की क्या जरूरत है। ऐसा एक जगह बन सकता है, उससे प्रमाणित होना तो होगा नहीं। प्रमाण के बिना आप अपना संतुष्टि लगा सकते हैं, तो आप लगाए रखिए। यदि आप प्रमाणित होने के लिए तत्पर होते हैं वो संकल्प हो ही जाता है।

प्रश्न : जैसे साक्षात्कार हुआ, उस समय बोध होगा ही ? दोनों अलग अलग क्रिया हैं, इसको कैसे समझें ?

उत्तर : साक्षात्कार से आदमी को ज्ञान का हर इम्पल्स (impulse) रोमांचित करता रहता है। साक्षात्कार लगातार है, पल्स (pulse) है, संगीत है, लय, ताल युक्त है।

प्रश्न : साक्षात्कार की वस्तु और बोध की वस्तु बिल्कुल एक है। दोनों क्रियाओं में अंतर क्या है, समझ में नहीं आ रहा है?

उत्तर : जैसा शब्द का अर्थ, अर्थ का साक्षात्कार और बोध। साक्षात्कार होता है तो बोध होता ही है, जैसा एक राग आदमी गाता है, उसको भैरवी नाम दिया और दूसरा राग का दूसरा नाम दिया। इन दोनों का अलग अलग तरीके की साक्षात्कार होता है। लय, ताल का चित्रण होता है। ताल का जो स्वरूप है, किसी काल खण्ड को नाप करके बताता है। ये चित्रण में आता है। स्वर जो है, साक्षात्कार में आता है, स्वर यदि पहचानता है। जैसा- सात स्वर होता है, उन स्वर में से कोई चीज़ पहचान यदि होता है, वो साक्षात्कार में ही होता है। इसका उल्टा हुआ, स्वर जानना नहीं हुआ वो, अभी पहचानना हुआ। ये पहचान होने से रोमांचकता होता है। ये राग साक्षात्कार होना आदमी की एक सहज अधिकार है। ऐसा भी आदमी सोचा है, पूर्व काल में। “रसो वै सः” जो सोचा गई थी, उस संबंध में यही फलक्रम है। उसके ऊपर काफी प्रयोग हुई है, वो कैसे- कैसे पतन हुआ बाद में अपन विचार करेंगे। अभी जो है मनुष्य को साक्षात्कार होने का जो बात है, जो कुछ भी सामने वाला गाता है, उसमें एक स्वर है, एक ताल है, स्वर का साक्षात्कार होता है, यदि रोमांचित होना होता है तो। स्वर का अर्थ में जाने के बाद जानना ही हो गया। ठीक है ना। स्वर का साक्षात्कार होने मात्र से रोमांचकता होता है, स्वर में एक अर्थ है, वो साक्षात्कार होने से वो बोध हो जाता है। इसका मतलब ये हुआ, स्वर होने मात्र से बोध के लिए वस्तु पूरा नहीं हुआ। स्वर का अर्थ सहित स्वर हो वो बोध में जाता है।

प्रश्न : ये इसीलिए कम समझ में आया, क्योंकि स्वर ऐसे भी पता नहीं?

उत्तर : कोई ऐसा उदाहरण, जैसा आप ज्यादा frequency, low frequency में बात करते हो, हम धीरे भी करते हैं, जोर से भी बोलते हैं। तो जोर से बोलते हैं तो भी आपको पता लगता है की नहीं, इसका नाम है साक्षात्कार। क्या चीज़ है? ज्यादा बोला ये साक्षात्कार हुआ। बोलना चित्रण नहीं होता है, स्वर चित्रण के सीमा में नहीं आता है। स्वर और अर्थ में जो भेद है, उसको आपको बताना चाहते हैं। अब जोर से हम बोला ये आपको साक्षात्कार हो गया इससे आप पीड़ित हुए।

प्रश्न : बाबाजी मैं दूसरा एक उदाहरण देता हूँ, “मुझे प्यास लगी है, पानी पीऊँगा” ये वाक्य मैं बोल दिया, इसका एक अर्थ है, इस अर्थ का बोध होगा, साक्षात्कार या चित्रण?

उत्तर : ये साक्षात्कार होगा। करने का चित्रण होगा। पानी पिलाने की, पीने की चित्रण होगा, पानी का साक्षात्कार होगा, बोध होगा। इसका दो पार्ट (part) हो गए, पीने की क्रिया का चित्रण होता है, पिलाने की क्रिया-कलाप का चित्रण होता है, पानी का साक्षात्कार होता है, बोध होता है।

प्रश्न : बोध क्या होता है पानी में?

उत्तर : पानी है इसकी स्वीकृति रहता ही है बुद्धि में, या हो जाता है, दो में एक होता है।

प्रश्न : ऐसा एक उदाहरण जिसमें सिर्फ साक्षात्कार हो, बोध ना हो ?

उत्तर : ऐसा होता नहीं, साक्षात्कार हो बोध ना हो ऐसा कोई अर्थ नहीं होता है। उसी के लिए हम लॉन्च किया था स्वर को। स्वर में ही आता है वो। तो वो स्वर से ही बात फ़िल्टर होता है वो। तो हमको स्वर साक्षात्कार हुआ, अर्थ साक्षात्कार नहीं हुआ, बोध में नहीं गया। बोध यदि होता है तो हमारा वस्तु होता है। उसका प्रमाण ये ही है।

प्रश्न : साक्षात्कार में वस्तु हमारा नहीं होता ?

उत्तर : ऐसे वस्तु जो दो पार्ट में हैं, एक ही पार्ट में हैं वो तो उसमे तो कोई शंका ही नहीं वो सीधे ही जाता है। जो दो पार्ट में हैं, ऐसे चीज़ें हमको पहले साक्षात्कार होते हुए बोध में नहीं पहुँचता है, क्योंकि उसका प्रमाणित हम नहीं कर सकते हैं।

प्रश्न : बाबाजी वस्तु का स्वभाव, धर्म इन दोनों का साक्षात्कार होता है और दोनों का ही बोध होता है।

उत्तर : क्योंकि रहता ही है वो, वो रहता ही है अस्तित्व में। ये स्वर क्या है? ये हम अपने हैसियत से प्रदर्शित करते हैं। स्वर, ताल ये दोनों प्रदर्शन हैं, उसमे निहित अर्थ अस्तित्व में है।

प्रश्न : जो नाड़ी देख के रोग को पहचानते है? स्वास्थ्य को पहचानते है, ये साक्षात्कार है, बोध है, चित्रण है?

उत्तर : ये जो है ना इसको कहा जाए साक्षात्कार तक का ही चीज़ जाता है, संकेतो का अर्थ जो है, शरीर में जो होने वाली क्रिया के रूप में उसमें पहुँचता है, उसको साक्षात्कार तक कहा जा सकता है। स्वास्थ्य का बोध रहता है, वो हमारा स्वत्व है, स्वस्थता का बोध हमारे पास रहता है, तभी हम चिकित्सा कर पायेंगे।

प्रश्न : मतलब एक संतुलन की स्थिति है, उसका अन्य को बोध है पहले से, नाड़ियों का, उसकी अपेक्षा में ज्यादा कम हो गया तो हम सोचते हैं। वो क्षणिक रहता है पर साक्षात्कार है।

उत्तर : हाँ, ऐसा।

प्रश्न : किसी वस्तु का साक्षात्कार हुआ, उसका बोध हुआ, बोध हुआ तो जानना हो गया ?

उत्तर : देखो, कई ऐसे चीज़ हैं, लक्षणों का साक्षात्कार होता है, वस्तु का साक्षात्कार, बोध दोनों होता है। वस्तु नित्य वास्तविक वैभव है, इसीलिए वस्तु नित्य होना पाया जाता है। इस विधि से कुछ लक्षण साक्षात्कार तक जाता है, उसमें वस्तु ना होने के कारण वो बोध होने से रह जाता है, उसमें से वो स्वर को बताया। वैसे ही स्वास्थ्य, जो रोग को हम देखते हैं, इसमें आवेश का साक्षात्कार होता है, क्योंकि जो रसों का आवेश को चित्र में लाना होता नहीं। चित्र में सीमित नहीं होता है। धातुओं का असंतुलन को चित्र में लेना संभव नहीं है, अभी सारा मेकनिज़म कहाँ फैल है?

धातुओं का असंतुलन को आप ग्राफ में नहीं ला पायेंगे, चित्र में नहीं ला पाएंगे। आप हाथ से जो चित्र कर सकते हो वो सब यंत्र करेगा।

प्रश्न : नाड़ी का जो असंतुलन है, दाब, दबाव, रेडियोग्राफी में दिखता है, वो तो चित्रण है।

उत्तर : वो सब आता है, नाड़ी को हम थोड़े कह रहे हैं, कि साक्षात्कार है, नाड़ी का संकेत, जो चीज रसों में असंतुलन, धातुओं में असंतुलन इसका साक्षात्कार होता है, जो चित्र में नहीं आ पता है, और क्योंकि वो वस्तु नहीं है, माने उसका निराकरण के लिए आवश्यकता है, इसीलिए वो, बोध और स्वत्व के रूप में जाता नहीं।

प्रश्न : संतुलन का पहले बोध रहता है, नाड़ी में, बोध रहने के बाद ही उसके प्रकाश में हम रोग को पहचानते हैं। रोग को पहचानना साक्षात्कार माना जाएगा ?

उत्तर : रोग में वो जो चित्रण में नहीं आता है, वो भाग का नाम है, साक्षात्कार। मनुष्य जो चित्र लिख नहीं पाएगा, वो सब साक्षात्कार में ही हम पहचानेंगे। साक्षात्कार में पहचानने के बाद उसका चिकित्सा देंगे।

प्रश्न : जानना, आत्मा में होता है ?

उत्तर : जानने का जो प्रक्रिया होता है, बोध जानने का चिरस्थली है। जानने के पहले साक्षात्कार है, बोध हो गया माने हम जान लिया, हम उसके बाद मान लेते हैं, कैसा मान लेते हैं ? हम प्रमाणित करने के लिए तत्पर होते हैं, तब मानते हैं। बोध से संकल्प में आते हैं। इसका तृप्ति अनुभव में ही होता है, क्योंकि अनुभव के रोशनी में ही बोध हुआ रहता है। अनुभव में जो हमारा बोध है वो फोटोग्राफी रहता ही है पहले से। हम उसको प्रमाणित करने पर वो तृप्ति मिल जाती है। प्रमाण और बोध की तृप्ति मिल जाती है।

बाबाजी आप जो बोलते हो अनुभव की रोशनी में बोध होता है, अनुभव की रोशनी को तृप्ति की रोशनी भी कह सकते हैं ।

उत्तर : तृप्ति का बिन्दु हमारा बोध से बिल्कुल संगीतमय होना आवश्यक है। उसके बीच में कोई शब्द, कोई तर्क, कोई कारण, कोई गुण, कोई क्रिया, कोई तरंग, कोई भी चीज हिंडरेन्स नहीं है, इतना कॉम्पेक्ट है।

प्रश्न : एक बार जो बोध हुआ। तृप्ति का अर्थ में बोध हुआ है, तृप्ति प्रमाणित करने से होता है। तृप्ति का अर्थ में बोध हुआ है उसको प्रमाणित करने के अर्थ में फिर बोध हुआ।

उत्तर : प्रमाणित करने पर तृप्ति हुई। उस तृप्ति को हम अनुभव कह रहे हैं।

जो मनुष्य तृप्त होने की बातों पर, तृप्त होने की मुद्दे पर, बातें तो हम आदिकाल से मनुष्य तृप्त होने की सुनते ही रहे, चाहत के रूप में, तृप्त होने का एक मुद्दा आज तक बना ही रहा। इसमें ये पूरा सहअस्तित्ववादी चिंतन, मानव केन्द्रित विधि से आने के आधार पर, तृप्ति मुद्दा को समझदारी के रूप में पहचाना गया। इसको पहचानने के बाद प्रमाणित करके देखा गया। समझदारी के अनुसार आदमी प्रमाणित हो गए। मैं प्रमाणित हुए, माने आप भी हो सकते हो, ऐसा

हो गया। इस ढंग की प्रमाण। इसमें मैं प्रमाणित हूँ, ये सच्चाई है। इसमें समझदारी के अनुरूप हमारा व्यवहार में प्रमाण हो जाता है। व्यवहार में प्रमाणित होने के बाद, समझदारी की तृप्ति हो पाता है। इस ढंग से पहले समझदारी, उसके बाद ईमानदारी, उसके बाद जिम्मेदारी, उसके बाद भागीदार, भागीदारी के आधार पर फल परिणाम, फल परिणाम के आधार पर फिर समझदारी, ये चारों घूम जाने से तृप्ति बिन्दु के रूप में मनुष्य की हर क्षण तृप्ति है, ये पता चला।

44. अंतर मुखी एवं बहिर्मुखी - 1

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 18, time 00:00-10:30](#)

ये अंतर्मुखी, बहिर्मुखी का झगड़ा क्या है? ये बात आई। उस पर हमारा निष्कर्षों को अभी बताना चाहते हैं। अंतर्मुखी का मतलब है, समझदारी को उपार्जित करना, मूल्यांकन करना। समझदारी प्रमाणित हुआ, नहीं हुआ इसको मूल्यांकन करना, अंतर्मुखी कार्य है, और समझदारी को उपार्जित करना, अंतर्मुखी कार्य है। अभी हम कोई चीज़ अध्ययन कराता हूँ, जीवन में अपने ही मन से, इसको स्वीकारना ना स्वीकारना, इसको हर विद्यार्थी सोचता ही है। जैसा आप भी ये बैठे हैं, हमारे बात आप सुनते भी हैं, सुनके भी बहुत सारे बातों को आप सुनने के बाद उसके अर्थ में जाते हैं, अर्थ में जाने के बाद उसका स्वीकृति होती है, उसको प्रमाणित करने योग्य बन जाते है। अर्थ स्वीकृति होने से समझदारी हुई, अर्थ स्वीकार नहीं हुआ तो केवल सुना है। ऐसा बात बन गया। उसमें अपन ये भी एक जगह में आए कि अर्थ स्वीकार होना चाहिए। अर्थ यदि समझ में नहीं आया तो शब्द का कोई मतलब नहीं है। उसको और जगह में भी ले गए, किसी का नाम होगा तो वो नामी मिलना चाहिए। जैसा आपका नाम है, आप का नाम याद करने मात्र से आप मिले नहीं हैं। हम नाम का बड़ी ख्याति गया।

"राम से अधिक राम का नाम", ये भी हम बताना चाहा। इस प्रकार से बहुत सारे वितण्डावाद पैदा हुआ। अन्त में ये निकलती है, यदि किसी का नाम है तो वो नामी मिलने पर ही तृप्ति होती है। नाम से कोई तृप्ति होने वाला नहीं है, यहाँ इस निष्कर्ष पर हम आ गए। मैं उस पर तुला हूँ। उसी आधार पर अंतर्मुखी जो बात होती है, ये अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन के अनुसार ज्ञानार्जन, विवेकार्जन, अथवा समझदारी से सम्पन्न होने की प्रक्रिया है। तो अभी तक अपना सोचना ये था समझदारी एक बहुत बड़ी भारी समझदारी का ही अर्थ है, माने अंतर्मुखी कार्य एक समझदारी ही है, अंतिम समझदारी, ऐसा सोच लिया। इसीलिए ये छाती का पीपल हो गया। कैसा पीपल हो गया? अंतर्मुखी जिस जिसने घोषणा किया अपने को, संसार से द्वेष के अलावा दूसरा कुछ किया नहीं। संसार को दुख रूप माने बिना अंतर्मुखी कोई होता ही नहीं है। संसार को क्लेश रूप माने बिना अंतर्मुखी हो ही नहीं सकते। इसका ये दो सूत्र है, और संसार को क्लेश रूप आदिकाल से वेदांतियों ने बताया ही है।

कर्म भी क्लेश कारण हैं, इसीलिए संसार और संसार के काम दोनों क्लेश का ही अर्थ है, ऐसा बताया। क्लेश से राहत पाने के लिए पुण्य की बात किया। पुण्य की बातों में वो कैसे गुजरा - वो पहले अपन चार वर्ण, चार आश्रम, उसके बाद उपासन विधि, ये सब आ कर के ये गुजरते हम एक जगह में आ गए हैं विज्ञान युग की एक चरण में। जिसमें विज्ञान स्वयं एक प्रकार से स्तंभित, कुंठित, निरुत्तरित होने की जगह में हम आ चुके हैं। क्या स्थिति मे आ गए? किस आशय से स्तंभित? सर्वप्रथम विज्ञान ये अपना अरमान बताया कि प्रकृति पर हम विजय पायेंगे। विजय पाने का काम करेंगे। वो नहीं हो पाया। उससे वो स्तंभित हैं। ठीक है। विज्ञान से मनुष्य को अमन चैन मिलेगा, मनुष्य सुख, शांति से जीएगा, ये दूसरा घोषणा। वो हुआ नहीं। और ये कलह, झगड़ा और समस्याएं हर दिन बढ़ता गया। ये तो मनुष्य के संदर्भ में हुआ। सबसे बड़ा समस्या ये आ के खड़ा हुआ, सारे मनुष्य के ऊपर तलवार ऐसा घूम गया, ये धरती ही बीमार हो गया, धरती बीमार होने से अनजान, जान, ज्ञानी, विज्ञानी सब के सिर पर एक ही तलवार घूमने लग गई।

मनुष्य इस धरती पर रहेगा, नहीं रहेगा? ये प्रश्न चिन्ह आ गई। इससे वो कुठित हो गए। ठीक है। ये कुल मिलाकरके विज्ञान संसार की गति, उसका फल, परिणाम, उसके आधार पर विज्ञान की स्थिति इस ढंग से समीक्षित हो पाता है।

इसके पहले अध्यात्मवाद में अंतर्मुखी बात आई थी। क्योंकि संसार को क्लेश रूप समझा, अंतर्मुखी होने से ही कहीं ना कहीं राहत है। अंतर्मुखी का अंतिम छोर समाधि बताया, उसके पहले ध्यान बताया, ध्यान में भी काफी राहत मिलती है, ऐसा बताया। उसमें काफी लोग अपने को जूझा, जूझने के बाद समाधि में भी कोई-कोई गया होगा, अंतर्गतत्वा समाधि के बाद भी, जैसा मैं समाधि को देखा, समझा, उस स्थिति में हम ना तो हम ज्ञानी हूँ, ये भी नहीं बता सकते थे, न ये भी नहीं बता सकते थे। हम अज्ञानी हूँ, बड़ा मुश्किल की कथा है। ये भी हम नहीं बता सकते थे कि हम सुखी हो गया हूँ, ये भी हम घोषणा नहीं कर सकते थे हम दुखी हो गया हूँ। उस जगह में आए। तब हम को पता चला शस्त्रों में लिखा है, समाधि का सुख "सुख, दुख से परे"। इसी को देख करके लिखा होगा ऐसा हमने सांत्वना लगाया।

तो जिस बात के लिए, समाधि के लिए हम प्रयत्न किया, वो मिला नहीं। मूल मुद्दा यही था, ये जो बंधन और मोक्ष की बात कहते हैं, पूरा वेदान्त को पढ़ने के बाद यही प्रश्न चिन्ह बनती है। ये "ब्रह्म ही बंधन का कारण है"। उसका छोटा सा स्वरूप यही है, आत्मा के रूप में ब्रह्म, जीवों के हृदय में बैठ गया, अब जीव जो है, भ्रम वश कर्म बंधन में आ गया। उसके बाद मोक्ष कैसा होता है, बोले, आत्मा परमात्मा में विलय हो जाता है, ये बताया। तो जब जीव के हृदय में आत्मा नहीं रहता, जीव जो है ना अपने आप से मुक्त था ही। काहे के लिए उसमें बैठ गया भाई? एक बुद्ध आदमी भी नहीं बैठेगा, इतने बड़े भारी ज्ञान क्यों बैठ गया उसके अंदर। इस प्रश्न का उत्तर कोई दिया नहीं, ना शस्त्रों में लिख पाए हैं। उसको हम स्वयं ही खोजने के लिए गए, अंतर्गतत्वा ये हुआ, हम बंधन और मोक्ष की बात समझने की कोशिश किए। उसमें हमारा सारा प्रयास के अंत में ये निकल गया।

भ्रम = बंधन

जागृति = बंधन मुक्ति

एक छोटी सी चीज के लिए, ये सब पहाड़ खोदना पड़ा, इसमें 25-30 वर्ष लगा। अंत में ये पता चला भ्रम = बंधन। भ्रम कहाँ से आता है? उसका उत्तर मिला, जीवन जब तक शरीर को जीवन माना रहता है, तब तक भ्रम। जागृति कब से है पूछे तो जीवन को जीवन माना जाए, शरीर को शरीर के रूप में पहचाना जाए, जीवन को जीवन के रूप में पहचाना जाए, जीवन के आवश्यकता को पहचाना जाए, शरीर के आवश्यकता को पहचाना जाए, इन दोनों को निर्वाह कर, व्यवहार कर प्रमाणित किया जाए।

इसके लिए क्या किया जाए? इसके लिए ये किया जाए, समझदार बना जाए। समझदारी का बात पूरा हो गयी, कि अस्तित्व को समझने से समझदार, जीवन को समझने से समझदार, मानवीयता पूर्ण आचरण को समझने से समझदार, उसको प्रमाणित करने से प्रमाण। इस ढंग से बात बनी। ये हमारा अनुभव की पूरा का पूरा झांकी ऐसा सजी।

उसके बाद ये अंतर्मुखी, बहिर्मुखी की बात आई। उसमें व्यवहार में जब तक हम अंतर्मुख में जो समझदारी को उपार्जन करते हैं, उसको व्यवहार में हम प्रमाणित नहीं करते हैं, हम समझदार होने का कहाँ प्रमाण है। तो अंतर्मुखी होने का प्रयोजन यदि समझदारी के अर्थ में हम प्रयोग कर सकेंगे, वो लाभदायी होगी। ऐसा मेरा कहना है। इस विधि से अंतर्मुखी- बहिर्मुखी का प्रमाण, व्यवहार में ही मनुष्य प्रमाणित करेगा और कहीं प्रमाणित करने की जगह नहीं। ठीक है।

अभी आप देखेंगे चित्रकूट में आप चले जाइए, जहाँ कहीं भी बैठा रहता है साधू, पूछा - कैसा है बाबा “आनंद” कहता है, तो कुल मिलाकर के लोग आया हुआ मुट्ठी भर चावल के लिए बैठा रहता है दस पैसे के लिए बैठा रहता है, आनंद बताता रहता है। ले भाई बाँटिये आनंद को। चित्रकूट में जाकर देखिए।

45. अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी - 2

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 18, time 10:30-33:42](#)

प्रश्न : साधु वेशधारी को साधुवाद क्यों बोलते हैं ?

उत्तर : कहते हैं, साधु वेश वाले को, उसको ऐसा सोच लेते हैं ठीक है, साधु वेश वालों को हम ऐसा देखते हैं। कोई साधु वेश नहीं लगाया भाई? हम वहाँ काशी में जो बैठे रहते हैं, विश्वनाथ जी के पास बहुत सारे। उसको पूछे, कैसे हो भाई? बोलते हैं भगवान का कृपा हैं, विश्वनाथ जी का कृपा है, ऐसा कुछ कहते हैं। दो पैसे देने से उससे तृप्त रहते हैं, वो अपने ढंग से काम करते हैं, ये सब चीजें हम देखा हुआ बात है। तो भाषा और आनंद। आनंद यदि जीवन में होता है, वो परंपरा में प्रमाणित होता है। क्या प्रमाणित होता है भाई? समाधान के रूप में पहले प्रमाणित होता है। हमारा कार्य व्यवहार में समाधान आता है। वो आपको भी मूल्यांकित करने में आता है, मुझको भी मूल्यांकित करने में आता है, दोनों में तृप्ति होती है। यदि समाधान आता है उसका आगे की मुद्दा ये है, हम समृद्धि पूर्वक जीने योग्य हो जाते हैं, ये दूसरा प्रमाण है, दूसरा milestone है ये। इस channel को छोड़कर अपन भागना चाहेंगे, वो बनेगा नहीं। तो पहले हम समझदार होने का पहला प्रमाण समाधान है, उसके बाद दूसरा मुद्दा समृद्धि, तीसरा मुद्दा में वर्तमान में विश्वास। वर्तमान में विश्वास करना ही हम अभयशील होने का प्रमाण है। वर्तमान में विश्वास हो जाए तो हम भयभीत काहे को? जैसे हम आप बैठे हैं, हमको इस क्षण के प्रति खूब विश्वास है, तो कौन कट्टा बंदुक लेकर बैठे हो? इस क्षण में आपको, हम सबको विश्वास है कि हमारे ऊपर कोई खतरा नहीं, कोई भी जोखिम नहीं, कोई परेशानी नहीं है, कोई आपदा नहीं है, ये इसी बात का द्योतक है। ये वर्तमान में विश्वास को रखे रहना, ये अपने आप में समझदारी का एक वैभव है, सिद्धि है, चमत्कार है, कुछ भी आप कह सकते हैं। चौथा वैभव यही है, हम सहअस्तित्व में सदा-सदा प्रमाणित होते हैं। साथ-साथ में जी कर हम खुशहाली मनाते हैं। यही प्रमाण है।

प्रश्न : एक बार प्रमाण शब्द को भी स्पष्ट कर दीजिए?

उत्तर : ये चारों चीज गवाहित हो जाएं, यही प्रमाण है। जीने का प्रमाण यही है। ये हो गया पूरा का पूरा मसाला। ये किसका आवश्यकता है? ये पूरे के पूरा मानव का अपेक्षा है ये। ये हुआ समझदारी का एक प्रमाण। दूसरे ओर, जीवन से जुड़ी हुई समाधान। अभय भी, माने वर्तमान में विश्वास भी, जीवन से जुड़ी हुई है। सहअस्तित्व में जो है ना खुशहाली मनाना, ये भी जीवन से जुड़ी हुई है। शरीर से जुड़ी हुई क्या चीज हो गई? केवल समृद्धि हुई। शरीर के लिए समृद्धि चाहिए, जीवन के लिए ये तीनों चीज चाहिए। इस प्रकार से क्या हुआ, जो जीवन की तीन पैर, शरीर का एक पैर मिल कर के मानव का 4 पैर। क्या हो गए, जुगाड़ क्या हुआ? जीवन का तीनों वैभव सीधा-सीधा और शरीर के लिए एक वैभव मिल करके चारों वैभव के साथ मानव परंपरा सुखी रहता है। क्या प्रमाणित होने का फल है ये? समझदारी प्रमाणित होने का फल है। इसमें आप हम सहमत हो सकते हैं कि नहीं हो सकते हैं, ये सोचने की मुद्दा है। यदि इससे हम सहमत होते हैं तब अपन एक निष्कर्ष निकाल सकते हैं। अंतर्मुखी बहिर्मुखी का प्रमाण व्यवहार में ही है और कहीं प्रमाण नहीं है। यदि मान लें अंतर्मुखी जितने भी प्रयास है वो समाजीकरण हो गया, या मानवीकरण हो गया। यदि हम इसको ऐसा सोच लें, कि नहीं भई, अंतर्मुखी, अंतर्मुखी ही रहेगा, बहिर्मुखी, बहिर्मुखी ही रहेगा।

बहिर्मुखी काम पापी, चांडाल ये सब हैं ही हैं और अंतर्मुखी कार्यक्रम विशेष हैं ही हैं सिद्धी, चमत्कार सब हैं। यदि ऐसा सोचेंगे, ये मानव परंपरा का छाती का पीपल हो के ही रहेगा। ये हमारा मंतव्य है। इसमें हम ना तो परिवार को पहचान पायेंगे, ना समाज को पहचान पायेंगे, ना व्यवस्था को पहचान पायेंगे, ये deviations हैं।

यदि इसको एक जगह में लाकर सार्थकता बनाना है, ये हमारा जिम्मेदारी है, आज वर्तमान के बुद्धिमानों का बुद्धि जीवियों का। इन दोनों को एक जगह में देखने की तौर तरीका, इसकी आवश्यकता, इसका प्रयोजन। इन तीनों दिशा में हम प्रमाणित होने की आवश्यकता है। इन तीनों जगह में यदि हम टिक पाते हैं, तो वर्तमान के लिए हम उपयोगी हैं, नहीं तो इस वर्तमान के लिए हम उपयोगी नहीं हैं। आप ये मानिये। तो इसमें उदारता की आवश्यकता है। अभी तक इतिहास के अनुसार अंतर्मुखी विधि से क्या-क्या घटित हुआ? बहिर्मुखी विधि से क्या-क्या घटित हुआ? इन दोनों का अवलोकन करने की बात है। बहिर्मुखी प्रयास से विज्ञान अपने चरमोत्कर्ष में आया और धरती को बरबाद करने की जगह में आ गया, माने सम्पूर्ण संकट से अपन घिर गए। संकट जो है न एक ऊँट में, एक ऊष्ट में सब के ऊपर एक सा है (धरती बीमार होने का संकट सभी को एक समान बाधित करता है)।

प्रश्न : विज्ञान बहुत सारा भौतिक शक्तियों को मानव के हाथ में ला कर दे दिया, आदमी समझदार नहीं था इसलिए दुरुपयोग करने के क्रम में अपने आत्म विनाश तक पहुँचा। विज्ञान ने नाश किया ऐसा कहने के बजाय मानव का नासमझी वश ऐसा हुआ। ऐसा कहना ज्यादा उचित है। विज्ञानी कौन थे? विज्ञानी भ्रमित होने के कारण, अंततः जो भी किया पाया। अंततः विनाशकारी ही सिद्ध हुआ।

विनाश तक पहुँचाने में किसकी भूमिका रही, आदमी की ही रही। आदमी स्वयं को नियंत्रित नहीं कर पाया चाहे बड़ा आदमी ही क्यों न हो, अपने स्वार्थ के लिए?

उत्तर : यहाँ से ये ठीक हो जाता है। विज्ञान इसीलिए हम नाम दिया, परम्परा के आधार पर, है तो विज्ञानी ही किया है। मेरे अनुसार भी, आप भी वो ही कहना चाहते हैं, हम समझता हूँ अपन एक मत हैं इसमें। विज्ञान परंपरा ये कहता है आदमी को मानता नहीं है। विज्ञानी को count नहीं करता है, विज्ञान को count करता है। count करने वाला आदमी ही है। ऐसा बनी हुई है, तो विरोधाभास है ये मूल में। खैर वो तो परंपरा के रूप में आया ही है विज्ञान ये कहता है, विज्ञान ये कहता है। विज्ञानी ऐसा कहते हैं ऐसा नहीं कहते हैं, ऐसा बनी हुई है। उसी आधार पर हम ऐसा भाषा प्रयोग कर दिया, आपको ओर ज्यादा काफ़ी संतुलित हो सकता है, ठीक है? तो इस जगह में हम आने के बाद बहिर्मुखी विधि से, (ये बहिर्मुखी की बात) क्लेश की संभावना बढ़ा या घटी पूछा जाए, आदमी के मन में तो क्या निकलता है? जब सारा मनुष्य ही नाश होने के जगह में लाद दिया, क्लेश का संभावना बढ़ी की घाटी? ये सोचने की बात है।

प्रश्न: विज्ञान की वजह से सुविधाएँ बढ़ी हैं , हाँ ये कह सकते हैं कि विनाश की संभावनायें भी बढ़ीं ।

बाबाजी: अंतर्मुखी विधि से समाधान क्या हुआ ? समाधान के लिए हम सारा अंतर्मुखी विधि को अपनाया, तो उसमें समाधान मानव जाति के लिए कहाँ से आकार पहुँचा? वो भी पहचानने की आवश्यकता है। उसमें जाते हैं तो ये कहते हैं आप स्वयं अंतर्मुखी हो करके देखो। हमने पूछा आपको समाधि हुआ क्या? बोले ये पूछने का अधिकार

आप को नहीं है, तुम स्वयं समाधि में जा करके देखो। ऐसा हमको बताया, यही आज भी बोलेंगे। अंतर्मुखी का जो वैभव है, कोई चीज़ सम्पदा होगा, वो मानव कुल के परंपरा में कहीं उतरा नहीं, यदि वैभव होगा। यदि वैभव नहीं होगा तो बात दुसरी है। इसको कहने के लिए हम तैयार नहीं हूँ कि अंतर्मुखी विधि से किसी को कोई वैभव का एहसास नहीं हुआ, ऐसा हम कहने को तैयार नहीं हैं, किन्तु जो कुछ भी अहसास हुआ होगा, वो मानव परंपरा को छूया नहीं है, प्रवाहित नहीं हुआ।

इस बात को हम गवाही दे सकते हैं। तो क्या परंपरा को अंतर्मुखी विधि से व्यक्ति केन्द्रित स्वरूप में छोड़कर क्या परिवार, समाज, सार्वभौम व्यवस्था ऐसी जगह की कल्पना में जा सकते हैं? यदि हाँ तो उसका प्रमाण प्रस्तुत होना चाहिए, यदि नहीं तो पुनर्विचार करना चाहिए। ऐसा मेरी प्रार्थना की मतलब है। यदि पुनर्विचार करने की बात आती है, यही आता है हम प्रमाणित होना बहुत निहायत आवश्यक है। प्रमाण बिंदु जो है ना व्यवहार में ही है। व्यवहार परस्पर मानव के साथ ही है और नैसर्गिकता के साथ ही है। पर्यावरण के साथ है और मानव के साथ हमारा संबंध है। इसी सम्बन्धों में हम प्रमाणों को प्रस्तुत करना है, किस प्रमाणों को? समझदारी के प्रमाणों को। ये तो माना गया कि अंतर्मुखी आदमी समझदार है ही, ये अंतर्मुखी आदमी भले ही न माने किन्तु लोग तो मानकर ही बैठे हैं। हम समझता हूँ बहुत प्राचीन काल से ये परम्परा रही है ऐसे मानना। उसका गवाही मैं ही हूँ, उसमें हमको कोई शंका नहीं है। सर्वोपरि समझदार आदमी यही है, हम लोग अंगुली न्यास कहते रहे, वो आदमी है तो व्यवहार को छूना।

हम आपको एक बार बताया, रमण महर्षि जैसा एक आदमी। हम उस समय में बचपन था, वहाँ के सारे बुजुर्ग, परिपक्व आदमी, सभी लोग कहते हैं ये ब्रह्मज्ञानी है। हम भी जा करके उनसे मिला हूँ। उसके बाद हम यही आशा रखे थे, जैसा हमारा रवैइया है, उस ढंग से उनके साथ पेश आए नहीं हम, वो लोगों के सहमति जैसा था वैसा उनके साथ हम पेश आए। उसके बाद हम ये सोचते रहे इनसे कोई ना कोई चीज़ मानव के लिए संगत विधि निकलेगा। अंत में क्या किया “Who I am?” एक किताब लिखा, उनके मरने के बाद छपा वो। सन् 1952 में उनका शरीर शान्त हो गया। उसके बाद वो किताब छपा हुआ है, वो किताब को संयोग से हम अमरकंटक में देखा। वो पूरणा जी तीर्थ हमको लाकर दिखाएँ। उसमे वेदांत, शास्त्र, दर्शन है उसी को वो समर्थन करते हैं। आप समर्थन दे के चले गये, उसका प्रयोजन बता नहीं पाए, तो क्या होगा? व्यवहार से छूता नहीं है, अछूता रहा। उससे ज्यादा आशा रखा हुआ आदमी हमारे मन में और कोई नहीं है। वास्तव में समाज को कुछ दे जाएगा, ऐसा हम जो छानबीन करके सोचे थे, एक ही आदमी वो भी नहीं दे पाया। अब उसके बाद क्या किया जाए? ये रिक्तता जो है, मानव परम्परा से दूर होने की आवश्यकता। इधर से कोई चीज़ मिलता नहीं है, इधर में गुणात्मक परिवर्तन कैसा होगा? जिस प्रकार की विन्यास से, कार्य से, मुद्रा से, भंगिमा से, स्थिति से, हम ये सोचते हैं इनसे सभी कुछ मिल सकता है, वहाँ से यदि कुछ भी नहीं मिलेगा, उसका दुसरा भाषा से बहिर्मुखी कार्य सब क्लेश और द्वेष की काम है और अंतर्मुखी क्लेश, द्वेष से मुक्त है, ये कुल मिला करके basic है। तो यदि क्लेश, द्वेष से मुक्त आदमी है, वो व्यवहार में यदि प्रमाणित नहीं हो पाता है तो क्या होगा? जब आदमी को देने के लिए कोई धन ही पैदा नहीं होगा, कब तक अंतर्मुखी को अगोरा जाए? ये तो मान लिया ये तो अपराध कारवाई करेंगे।

प्रश्न : अभी का अंतर्मुखी बहिर्मुखी दोनो अलग-अलग चीज़ है, प्रमाणित होने के क्रम में दोनों साथ-साथ बने रहते हैं। प्रिय, हित, लाभ में जीना मतलब बहिर्मुखी, ज्ञान, समझ के साथ प्रमाणित होना अंतर्मुखी।

उत्तर : अंतर्मुखी में यदि साक्षात्कार हो जाता है, बोध हो जाता है, अनुभव हो जाता है, प्रमाणित हो जाता है, क्या चीज़? मोक्ष। उसको व्यवहार में प्रमाणित करिये। उसके लिए आवाज़ है कि व्यवहार से मोक्ष से कोई लेन-देन नहीं है। शास्त्रों के अनुसार ऐसा निकलता है। शास्त्रों में लिखा हुआ है “आत्माअर्थम् सकलम् त्येजते”। परिवार को त्याग दो, गांव को त्याग दो, देश को त्याग दो, ये सबको चलते-चलते “श्रेयाअर्थम् आत्माअर्थम् सकलम् दहते”, सब को त्याग दो कहे। प्रमाणित कर दो, ये कहीं भी शास्त्र में लिखा नहीं। वो क्यों? शास्त्र ही प्रमाण है। ये त्याग दिया, हो गया, खतम हो गया। ऐसा उसका आवाज़ होता है। अभी शास्त्र का आवाज़, घटना का गति, दोनों को मिलने से ऐसा आवाज़ बनता है।

प्रश्न : शास्त्रों का सार लेकर तुलसीदासजी ने रामायण को रखा। एक आदमी जो घर छोड़ता है, साधना करता है, ज्ञान को उपलब्ध हो जाता है, उसके बाद अभिव्यक्त करता है, ऐसा उसका categorisation है।

उत्तर : ज्ञान व्यवहार में प्रमाणित होगा कि नहीं, पहली बात ये है। होगा तो वो कहाँ है? उसको पकड़ा जाए। अभी वो ही pulse है, और कोई नहीं। अपेक्षा तो यही है। वो अपेक्षा पूरा नहीं हुआ, अब क्या किया जाए? हमारा जैसा २५-३० वर्ष होते तक, अंतर्मुखी वालों से ना तो हम व्यवहार तक छूने का कोई चीज़ मिला, बहिर्मुखी होने वालों से अंतर्मुखी को छूने का कोई चीज़ मिला नहीं, अब क्या किया जाए? ये हमारा दम घुटने की कारण रहा।

ये हमारा बाप-दादा इतना जोरदार तप करने के बाद भी, ये बहिर्मुखी की छोर तक ये पहुँच नहीं पाए, तो बहिर्मुखी छोर वाले, एक से एक दिग्गज, वो सब अंतर्मुखी तक पहुँच नहीं पाए, अब कहाँ जा करके मरे हम? जो वशिष्ठ, विश्वामित्र, इन लोगों का अध्ययन करने लगे। अंततोगत्वा श्राप देने में, शब्द देने में या अनुग्रह करने में लग गए। कथाओं में ऐसा लिखा भी लिखा है। इन सब कारणों से हमको एक झंझावात परेशान किया, वाकई में यही बात है अंतर्मुखी से बहिर्मुखी से कहीं मिलना ही नहीं है, एक दूसरे ही दुनिया हो गया, एक दूसरे ही दुनिया हो गया, ये कब तक चलेगा? कब तक आदमी कुर्बान होता रहेगा प्रयोजन विहीन क्रिया में? बहिर्मुखी में कोई प्रयोजन नहीं निकलता, समाधान नहीं मिलता। अंतर्मुखी में कोई प्रयोजन नहीं निकलता, समाधान नहीं मिलता, अब क्या किया जाए? इसमें हमारा संकट घर आया। हमारा संकट घर आने से जो कुछ भी परिस्थितियाँ हमने बनाई थी, वो सबको छोड़-छाड़ करके हम उसके ऊपर तुल गाए, जो कुछ भी होना था, हो गया।

अभी के स्थिति में, हमारे अनुसार, समझदारी को यदि अंतर्मुखी का उपज माना जाए, ये व्यवहार तक छू जाएगी। यहाँ हमारा प्रमाणिकता का समर्थन है।

(अभी तक जो हुआ, उससे अगला और उससे ज़्यादा शानदार कदम है।)

यदि सारा अंतर्मुखी प्रयास को, अभी तक जितने भी तप हों, जप हों, सब किये, सबको समझदारी के capsule में हम देख पाएँ। समझदारी ही वास्तव में अंतर्मुखी वैभव का स्वरूप है। इसमें हम यदि आश्वस्त हो सकते हैं, वो समझदारी व्यवहार में प्रमाणित होती है।

46. अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी - 3

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 18, time 33:42-01:12:00](#)

प्रश्न : अध्ययन के संबंध में आपने लिखा है “क्रिया का अध्ययन, ऋणात्मक व धनात्मक, रूप, गुण, स्वभाव, धर्म से संबंधित रहेगा ही। अध्ययन के ऋणात्मक पक्ष से विकास संभव नहीं, केवल परीक्षण, निरीक्षण, सर्वेक्षण की संज्ञा उचित है। धनात्मक विकास के लिए मूलतः उद्देश्य की कल्पना, या आभास, या आवश्यकता की अनुभूति रहना आवश्यक है, जिसके लिए सर्वप्रथम अध्ययन, द्वितीय प्रयोग व अभ्यास, तृतीय अवस्था में उपलब्धि है।” इसका व्याख्या कर दीजिए?

उत्तर : प्रमाण के उपलब्धि में हम तृप्त होते हैं। मानव समझदारी को यदि प्रमाणित करता है, वो उपलब्धि है, उपलब्धि के against में हम तृप्त होते हैं। व्यवहार में प्रमाणित हो जाता है न समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व, फलस्वरूप हम तृप्त होते हैं। हम प्रमाणित हुए, इसका गवाही भी हो जाएगी और दूसरे को भी ऐसा होता है कि प्रमाणित हुए। ये ऐसा हो जाता है। ये हमारी तृप्ति स्थली बनी। पहले हम तृप्ति स्थली को कहाँ खोजते रहे? माने बहिर्मुखी विधि में तृप्ति स्थली यही है। ये तृप्ति इकट्ठा होते-होते जीवन का पूँजी बन गई। एक तो समझदारी भी, तृप्ति भी, दोनों चीज़ जीवन अपने में अपनाता ही रहेगा। इस ढंग से समझदारी को उपार्जित करना एक बात, प्रमाणित करने के लिए अभ्यास करना। समझदारी को उपार्जित करना भी एक अभ्यास हो सकता है, इसको भी हम नाम दे सकते हैं। अध्ययन करना एक अभ्यास है, ऐसा भी कह सकते हैं। किंतु अध्ययन करके प्रमाणित करना अभ्यास है, तो समझदारी को प्रमाणित करना अभ्यास है, यहाँ आ के हम टिकते हैं। पहले से अभ्यास की बात यह है, अभ्युदय के अर्थ में किया गया सम्पूर्ण कायिक, वाचिक, मानसिक, कृत, कारित, अनुमोदित सभी क्रियाकलाप अभ्यास है।

कायिक रूप में शरीर के रूप में जो कुछ भी किया धरा, मानसिक रूप में जो कुछ भी किया धरा, वचन के रूप में, शब्द के रूप में जो कुछ भी किया धरा, वो कृत, स्वयं से किया हुआ, दूसरो से कराया हुआ और अनुमोदित, अनुमोदन दिया हुआ, ये सब मिल करके हमारा अभ्यास है। अभ्यास में समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व प्रमाणित होना है। ये हमारा व्यवहार प्रमाण का स्वरूप है। मानव जाति में इसके प्रति क्या सहमति उपार्जित कर पायेंगे, या उपार्जित करना जरूरी है, जरूरी नहीं है, इस पर प्रकाश डाला जाए। क्या कहना है आपका ? इसमें सहमति, जिम्मेवारी के प्रति हम समाज में प्राप्त किया जाए, इसके लिए प्रयत्न किया जाए, नहीं किया जाए, इस पर सोचिए। ये सार्वभौमी करण होता है, मानव के लिए स्वीकृत होता है, इस आधार पर सार्वभौम व्यवस्था स्थापित हो जाएगा।

प्रश्न : ऋणात्मक अध्ययन और धनात्मक अध्ययन को थोड़ा स्पष्ट कर दीजिए?

उत्तर : धनात्मक अध्ययन, ऋणात्मक अध्ययन का मतलब ये है, गुणात्मक विकास के लिए जो कुछ भी हम करते हैं, जैसा समाधान के लिए जितने भी हम अध्ययन करते हैं, वो धनात्मक अध्ययन है। प्रमाणित होने के लिए जितने भी अध्ययन करते हैं, ये धनात्मक अध्ययन है।

वो ही चीज़, समस्या पैदा करने के लिए जितने भी अध्ययन करते हैं, जैसा धरती को बरबाद करने के लिए अध्ययन किए, ये ऋणात्मक अध्ययन है। आपके सामने गवाहित है। ये जीतने भी adulteration करने के लिए अध्ययन किए हैं, ७० मंज़िल के घर में रहते हैं, adulteration का काम करते हैं, ये ऋणात्मक अध्ययन है।

corruption के लिए, उनको कैसा बरबाद किया जाए, इन को कैसा लूटा जाए, इन को कैसा नख मारा जाए, ये जो सोचते हैं ये अध्ययन है, ये ऋणात्मक अध्ययन है।

प्रश्न : तो क्या विज्ञान का जितना अध्ययन है, ऋणात्मक अध्ययन है?

उत्तर : आप आगे चलकर के खुद ही मूल्यांकन करोगे, हम एक सूत्र दिया है।

प्रश्न : जो ऋणात्मक अध्ययन है अगर वो धनात्मक अध्ययन के रोशनी में होता है तो सार्थक होगा ? क्या ऐसा कहा जा सकता है ?

उत्तर : ऋणात्मक रहेगा ही नहीं रे। ऋणात्मक धनात्मक जो शक्तियों का अध्ययन है, इन शक्तियों का अध्ययन भौतिक संसार की है। आचरण का ये अध्ययन है, आचरण का अध्ययन में ऋणात्मक आचरण में आदमी दुखदायी होता है। पूरकता विधि को पहचाने बिना धनात्मक अध्ययन होगा नहीं। एक छोटा सा कैपसूल में कितने सारा चीज़ रखा हुआ है, देख लीजिए। गलती को वर्णन करने में कौन सा महत्वपूर्ण भूमिका होगा जिस में हमारा कौन सा सम्पदा या सम्मान होने वाला है ? संसार को कौन सा सम्मान होगा ?

प्रश्न : हम को ये संपदा जो मिली है, आपको अन्तर्मुखी विधि से ही मिली है, जो आज हम सुन रहे हैं।

उत्तर : नहीं। ये मिला है हमको अन्तर्मुखी विधि को परीक्षण करने में, मूल्यांकन करने के क्रम में मिल गया। संयम में अन्तर्मुखी नहीं है। समाधि हुआ, ये अन्तर्मुखी विधि से हुआ। उससे कुछ मिला नहीं। मैं जिन सवालों का उत्तर खोज रहा था मिला नहीं। उसमें जो है, प्रचलित संयम की विधियों को हम छोड़ दिया, उसकी सिद्धियों की अपेक्षा हम छोड़ दिया। हमने अपने ढंग से संयम का डिजाइन किया, उसमें प्रयत्न किया तो ये सब आ गया।

प्रश्न : समाधि के बिना संयम संभव नहीं होगा ?

उत्तर : ये ठीक है, इसमें हम सहमत है। किन्तु संयम से प्राप्त वस्तु है पुनः वो संयम से मिलेगा, इसको हम छोड़ दिया, उसको हम काट दिया, उसमे बिल्ली कटाई हो गई। हम ऐसा गुजरे आप ऐसा गुजर सकते हैं। 2,000 करोड़ bifercation से हम कहीं पहुँच गए, तो आपको सीधा रास्ता हम लगा लिया।

प्रश्न : समाधि के बाद या समाधि के आस-पास आदमी को जो सिद्धियाँ मिलता है, वो शास्त्रों में भी लिखा है, आपने सोचा सिद्धियों के चक्र में आपको नहीं पड़ना है। आपने बिल्कुल उसका निर्वाह किया, दूसरा समाधि के बाद संयम की स्थिति में सिद्धियाँ आती हैं, वो भी छोड़ दिया। उसके बाद जो आपका मूल सवाल था, उस उत्तर के प्राप्ति के लिए आपने संयम किया, आपको जवाब मिल गया।

उत्तर : जो जवाब मिला हमको, उसको हम शनैः-शनैः अध्यवसायिक विधि से लगाने पर पता चला मानव के लिए संपदा है। पहले हमारे लिए संपदा है, अब ये मानव का संपदा है। तब पता चला हमको जो मिली हुई है, ये मानव का पुण्य का फलन है, ऐसा हम conclude करते हैं। उसको बड़प्पन कहो, अच्छा कहो, बुरा कहो, हमको जो अंतरात्मा से समझ में आता है, हम जो निर्णय कर पाया, वो यही है। क्योंकि इतनी बड़ी भारी चीज़ के लिए हम खोज ही नहीं किए थे, कहीं ना कहीं मानव जाति की आवश्यकता रही होगी तभी आई। उसमें और एक चीज़ हम देखा, इससे बड़े मुखोल और कुछ नहीं हो सकता। इसको मुखोल कहा जाए। इतने दिग्गज विद्वान, ये तिनका के ओट में पहाड़ रख करके, सारे आदमी को कगार में ला लिया मृत्यु की, वो कैसे हमारे हाथ में लग गया, हम सोच-सोच के हैरत हूँ। इसमें कोई बहुत बड़ी भारी चीज़ नहीं हुई है, आपको सही बता रहा हूँ। व्यापक की बात पहले से कहा है। दूसरा वस्तु के बात भी बहुत कहा गया है, परमाणु का बात भी बहुत कहा गया है।

अब संकट की तरीका को भी मूल्यांकन कर चुके हैं, संकट की बहुत सारी गांठों को आदमी सूँघ-सूँघ के देख लिया है। इसमें ये सूझ क्यों नहीं आया, केवल व्यापक को लेने के लिए गए वो बर्बाद हो गए, केवल वस्तु को लेने गए ये भी बर्बाद हो गए, ये दोनों का योगफल में क्या निकलता है, उसको एक बार try करने के लिए एक आदमी प्रयोग नहीं किया, ये एक आश्चर्यजनक बात है! हम जैसा एक निरीह आदमी, संसार के सामने एक निरीह हूँ मैं, नगण्य हूँ, छोटा आदमी हूँ, छोटे से छोटा आदमी हूँ। ऐसा आदमी के हाथ में इतनी बड़ी एक पूँजी हाथ लग जाना। बहुत ही मुखोल, बहुत आश्चर्यजनक बात, मौलिक। इसमें एक ढील, पोल, कहीं भी कोई संध में नहीं है। अब अस्तित्व में इसके अलावा कुछ है भी नहीं है। व्यापक और इकाई, इसके अलावा वस्तु ही नहीं है। पूरा वस्तु इतने में मुट्ठी में आता है। अब इतना दिन इतने मेधावी, इतने तपस्वी, कितना कथा सुनते हैं तपस्वियों का, कहीं आप पार पाओगे क्या? हम जो इतना प्रयत्न किया, हमारा एक sincerity हमारे पास है। वो वाइअबल है। वो मौलिक है, उसमें हमको ढील पोल नहीं दिखा। हम जो करना चाहे वो कर डाले, खत्म हो गई बात। जो परिणाम हो जाए, हो जाए। परिणाम कौन हमको पता नहीं था। परिणाम जो मिला महाराज जी, वो फल परिणाम अमूल्य। जैसा-जैसा हम फैलाते जाते हैं, लगता है ये एक ही धरती के आदमी नहीं हैं, सर्व धरती के आदमी के लिए ओढ़नी है ये। ऐसा लगता है हमको। भले हम अत्याशावादी हो गये हों, या आशावादी हो गए हों, हम ये नहीं कह सकते। असलियत ऐसे ही है। अच्छा, कौन सा मोड़ मुड़ा छूटता है? इतना जटिलतम प्रश्न था ये, अन्तर्मुखी बहिर्मुखी, किसी बाप का योग्यता नहीं हुआ इसका कोई जवाब निकाल सके। सारा आय आय टी (IIT) मर गया, वो लिखे है बहिर्मुखी होने से विज्ञान विकसित होता है, अंतर्मुखी होने से आवश्यकता कम होता है। आवश्यकता बढ़ जाने से विज्ञान की विकास होता है, आवश्यकता कम होने से अंतर्मुखी होने से विज्ञान की विकास नहीं होता है। इसीलिए थोड़ा देर आवश्यकता को कम करने के लिए अन्तर्मुखी थोड़ा देर रहें और थोड़ा देर बहिर्मुखी भी रहें। ये कुल एसन्स पार्ट ऐसा लिखा हुआ है। इसको क्या लिखा है वो? ह्यूमनिज़म नाम रखा है, “मानववाद”, ये लिखा है। थोड़ा देर अंतर्मुखी रहो, जब आवश्यकता काम हो जाएगी, थोड़ा देर बहिर्मुखी रहो, विज्ञान विकसित हो जाएगी, आपका आवश्यकता पूरा हो जाएगा। ऐसा वो कहते हैं, क्योंकि वहाँ पे सब विज्ञान के विद्यार्थी हैं, उनको ऐसा लिखना ही है।

बहिर्मुखी होने से व्यापकता के साथ हम जूझना है। बहिर्मुखी होने से एक-एक के साथ जूझना है। दोनों जगह में जूझने की बात, संघर्ष करो तो क्या गलती बोला है महाराज? “जीने दो और जियो” कहाँ आता है इसमें? यदि दोनों विद्या

में, अन्तर्मुखी में भी आप जूझते रहो, संघर्ष करते रहो, बहिर्मुखी में भी जूझते रहो, संघर्ष करते रहो। राहत का स्थली कहाँ है? तो उसमें ये पाया IIT के नक्श में अन्तर्मुखी की नाम लें, बहिर्मुखी की जो बात है संग्रह करने वाला, उसको पक्का कर लें।

प्रश्न : धनात्मक अध्ययन में आपने 3 स्टेप्स बताए। पहला अध्ययन, द्वितीय प्रयोग और अभ्यास, तृतीय उपलब्धि। इसमें अध्ययन पूरा हो गया इसका क्या प्रमाण है?

उत्तर : अध्ययन पूरा हुआ इसका मतलब है हम प्रमाणित करने के लिए उद्यत हो गए, प्रयोग और व्यवहार के लिए।

प्रश्न : ये तो साथ-साथ चलेगा, अध्ययन भी चलेगा, प्रयोग और अभ्यास भी चलेगा।

उत्तर : अध्ययन काल में तीन स्टेप्स हैं। उसको बाद में बताएंगे। अध्ययन हो गया के बारे में अभी चल रहे हैं। अध्ययन होने के बाद प्रयोग और व्यवहार में हम आ जाते हैं। वो प्रमाणित होना शुरू करते हैं। उपलब्धि के रूप में, अनुभव का प्रमाण। अनुभव जो है, जैसा हम बोध हुआ, उसको प्रमाणित करने के लिए प्रवृत्ति हुई, उसका नाम है संकल्प, उस संकल्प का नाम है ऋतम्भरा। सत्य भरी हुई संकल्प का नाम है ऋतम्भरा। क्या सुंदर सुखद नाम है आप सोच लो! वो प्रमाणित होने ले लिए जब चल देता है व्यवहार में और प्रयोगों में समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व प्रमाणित होता है। ये प्रमाणित हो गया, हमारा अनुभव का प्रमाण यहाँ हो गया व्यवहार में। जब कभी भी हम संकल्पित हो गए, हमारा अनुभव का pulses चलने लग गए। धक-धक-धक, वो जो उड़ाते हैं ना गाड़ी, ऐसा उड़ने लगता है। उसके बाद उसको कोई रोक नहीं सकता है। हम संकल्प कर लिया हमको प्रमाणित होना है, उसको रोकने वाला ताकत इस अस्तित्व में नहीं है। प्रमाणित हो के ही रहेगा वो। कितना अद्भुत बात है। ऋतम्भरा की बात कहाँ से आ गई, समझदारी को प्रमाणित करने की बात है।

प्रश्न : अध्ययन होने के बाद, संकल्प के बीच में रुक सकते हैं?

उत्तर : संकल्प के बाद रुक नहीं सकता। संकल्प से पहले, बोध होने के बाद, प्रवृत्ति यदि नहीं होता है प्रमाणिकता के लिए, taste नहीं बनती है, उस जगह में आदमी रुक सकता है, बोध के बाद।

प्रश्न : प्रवृत्ति नहीं बनती को बाबा ठीक कर दीजिये। हिम्मत नहीं बनती ऐसा कहिए।

उत्तर : कुछ भी कारणों से कहिए, पहले आयु आता है, स्वयं का मूल्यांकन आता है, मूल्यांकन में स्वयं का लाइफ स्टाइल की इतिहास आता है। ये सब को ले करके आदमी कहाँ रुक जाता है, इसको बताया नहीं जा सकता, इसको बताने की जरूरत भी नहीं है कहता हूँ मैं। बहुत डिटेल में जाता नहीं क्योंकि हम को उसमें कोई प्रयोजन दिखता नहीं। इस ढंग से एक स्थली तो है ये।

प्रश्न : एक बारीक सवाल – जहाँ तक रुकने की सम्भावना बनी रहती है, उस स्थिति को हम बोध नाम दे सकते हैं?

उत्तर : उसको थोड़ा सा टेस्ट करना पड़ेगा। इसका एक मिसाल निकला, डॉ चावला। अंतिम भाषा उन का ये रहा, हमको ये बताया, देखिए इससे अच्छा कोई प्रोजेक्ट नहीं है। अभी तक तो धरती में इससे अच्छा प्रोजेक्ट निकला

नहीं है। इसमें पूर्णतः हम सहमत हूँ। हमको लगता है हमको करना भी चाहिए। वो ही लखन झा की एक आदमी बिहार में ऐसे ही बोला। किंतु चावला का व्यक्तित्व ये था, हमारा लाइफस्टाइल जैसे भी हम ले के चले आएँ हैं, उसको हम बदलते हैं, तो लाइफस्टाइल जो पीछे वाला है, बदलने वाला जो स्वरूप है, उसमें हमारे घर के लोगों को ही भरोसा दिलाने में हम असमर्थ हैं। एक कष्ट वो अपना बताए। इसलिए हम लाइफस्टाइल के रहते, हम इसको बदलने में असमर्थ हूँ, ये उन्होंने अपना ध्वनि बताया। एक तो model ये हुआ।

एक बिहार के लखन झा के एक आदमी हैं, वो दरभंगा विश्वविद्यालय में उप-कुलपति रहें हैं। वो आदमी पहले दिन से ही नौकरी में एक रुपया ले कर बाक़ी सब को दान करता रहा। स्वतंत्रता के बाद वो गांधी स्मारक के लिए डोनेट करता रहा, वो करता रहा। उन्होंने अंतिम बात ये हमको बताया हम शंकराचार्य जी के साथ, मिश्रा, जैसा उन्होंने काम किया था, बोले मैं आपके साथ वैसा काम करना चाहिये, किंतु हमारा आयु ऐसी जगह में पहुँच गया है हमारा आँख काम नहीं करता है, हम करने में असमर्थ हूँ। उनका एक अनुस्मरण यहाँ उद्घारण करना चाहते हैं, हम गए उनके गाँव। गाँव जाने के लिए एक नदी पार करना था। नदी में घुटने भर पानी। गाड़ी इस पार छोड़ करके, पार करके जब उनके गाँव में enter हुए, गाँव की शिष्टता को देखा गया, जो गली इतना, यदि आदमी थोड़ा सा टेढ़ा होकर के चलना है, नहीं तो इस तरफ़ की काँटा या इस तरफ़ की काँटा कपड़े को ले लेगा। जबकि काफी घर 50 मीटर पीछे हैं। इतने अच्छे लोग हैं! जब उनके घर गए, उनके घर के सामने संयोग से एक विशाल मैदान। घर के दरवाज़े के अंदर पहुँच करके “मैं नागराज”। खड़े हो गए वो आदमी। राम रहीम के बाद ये बताए “कैसा कृपा हुआ?” “हमारा कृपा ऐसा हुआ आप ये बताओ आपका निष्ठा किसमें है? मतलब तुम बहुत सारा भाषा जानते हो, योग जानते हो, समाधि जानते हो, ध्यान जानते हो, कुरान जानते हो, बाइबल जानते हो, ऐसा तुम्हारा ख्याति। ऐसा कौन सा बिंदु है जिसमें आपका निष्ठा है?” मैंने पूछा। उन्होंने बोला, संयोग से या संकोच से, हम चातुर्वर्ण – चार वर्ण, चार आश्रम – में विश्वास रखता हूँ। हम प्याज भी नहीं खाता हूँ। बिहार में वामाचार्य होते हैं, प्याज के बिना वामाचार्य चलता नहीं है। उन्होंने पहले हमको आश्वस्त किया हम प्याज नहीं खाता हूँ, हम शाकाहारी हूँ। हम पूरा सर्विस का समय स्वयं पाकि विधि से व्यतीत किया, अभी हम बच्चों के हाथ का खाते हैं। अभी हम खड़े हैं, बैठे भी नहीं हैं। हमने बोला “चातुर्वर्ण जो विधि है, द्वेष ईर्ष्या को छोड़ कर, ये चातुर्वर्ण का कोई गति नहीं है, इसमें आपका क्या कहना है?” वो कहता है कि मैं सहमत हूँ। अब ये बताओ, पहले तुम बोले चातुर्वर्ण में निष्ठा है, चातुर्वर्ण की ये हालत है, तुम्हारी निष्ठा की क्या हालत है? इसी लिए तो हम शहर छोड़ करके गाँव में आकार बैठा हूँ, इससे कुछ नहीं होता है। वो ८० वर्ष के आगे की आयु के आदमी हैं। तो मैंने बोला “तुम्हारा निष्ठा का कीमत क्या होगा? निष्ठा से कुछ निकलेगा नहीं।” उसके बाद हम बैठे।

प्रश्न : बाबा आपने असली बात नहीं बताई – गुरु कृपा का स्वरूप जिसको हम मानते हैं – जन्मों जन्मों की गाँठ जिसको हम ढोते हुए चले आ रहे हैं, उसमें आग लग जाए, आदमी उभर जाए।

उत्तर : सार बात तो यही है। उसके बाद बैठने के बाद १ १/२ घंटा उनके साथ सुख लिए, उसके बाद खाना खाए। उनके शिष्टता विनम्रता, इस भाग को यदि हम ठीक से चित्रित करूँ, उसके सामने अपन सब बोलें हैं। दो तीन घंटा उनके साथ रहे। वो आदमी कहा अब आगे की काम क्या होगा? आगे की काम में यदि भीगना है, एक शिविर लगाना चाहिए, मिश्रा बोला। आपको शिविर स्थली को हमें दिखाना होगा, यदि बनता होगा तो रहने के लिए एक जगह,

खाना बनाने का आदमी को दिखाना होगा। बाकी हम अपने हाथ-पैर से आएंगे, अपने हाथ-पैर से जाएंगे, हाथ-पैर की पसीने की खाएँगे। आप लोगों को ना हमे खिलना है ना खुशामद करना है। उसने मिश्रा को बोला तुमने सारा समस्या को हल कर दिया। ऐसा बोला वो आदमी वो ध्वनि हमको भी बहुत खराब लगा। हमने मिश्रा को बोला इनके साथ हर स्थिति में हमको सम्मान को बचा करके चलना चाहिए। ये एक सुखद स्मरण बताया। उनका अभी भी हमारे मन में जो स्थान है, उनका शिष्टता, उस आयु की विनम्रता, ये दोनों चीज़ तो हमारे पास हो नहीं सकती। शिष्टता विनम्रता के आधार पर हमको तोला जाए हम बहुत छोटा दिखूँगा। सच्चाई यही है बेटा। आदमी बोला वही शंकराचार्य से जुड़ करके नाम दिया।

अभी यही सबसे बड़ा अड़चन इस देश के लिए, बाकी देश के लिए ये अड़चन नहीं है अंतर्मुखी बहिर्मुखी वाला कचरा, दूसरे देश में ये कचरा पट्टी नहीं है। हमारे देश में ही ये कचरा पट्टी फँसा है। इसको यदि आप बटोर सके, आपका ऐतिहासिक उपलब्धि है। चाहे तुम मानो चाहे ना मानो। तुम्हारा अन्तरात्मा के यदि तृप्ति का वस्तु होगा तो इस कचरा को अलग करा दो। तुम्हारा मानव जाति के साथ बड़ी उपकार होगा। हम बहुत अच्छा भाषाकार नहीं हैं, इसमें सभी फँसते हैं – भाषाकार, कलाकार, वो कार, ये कार, सब कार फँसते हैं। और सबके लिए भाषा बहुत भारी ज़बरदस्त कथा है। वो पकड़ तुम्हारे पास है, वो भाषा हमारे पास नहीं है। आपके पास भाषा है, भाषा के आप धनी हो, हिन्दी जगत में। उसको प्रयोग आप कर सकते हो। वस्तु लगा दो, वस्तु सहित भाषा का प्रयोग करना यदि बनता है, मैं समझता हूँ ये कचरा पट्टी बटोरा जा सकता है। हम तो धक्का-मुक्की दे देता हूँ, फटाफट। अपना मूल्यांकन सही करो, खुश रहो। हम तो धक्का-मुक्की देता हूँ फटाफट, उससे बहुत सारे लोग उखाड़ जाएँगे। ये ग़लत बात नहीं है। अच्छे-अच्छे लोगों का नाड़ी कपकपी में फँस जाता है। क्या किया जाए, कैसे इस आदमी से पेश हुआ जाए, ऐसा होता है। ये तो हमारे साथ घटित घटनाएँ हैं। किंतु आपके पास उस सब को बच करके चलने का भाषा है, कर सके तो कर लो। करने का उद्देश्य होता है तो ये बहुत अच्छा काम है, ऐतिहासिक काम। अंतर्मुखी बहिर्मुखी का झंझट कैसे पटता है, अंतर्मुखी का जितना भी हमारा प्रयास है, घोर अभ्यास है, वो सब समझदारी के केंद्र बिंदु में हम प्रयोजन के रूप में पहचानना शुरू करते हैं। और उसके बाद समझदारी को व्यवहार में समाधान, समृद्धि, अभय, सहस्तिव रूप में प्रमाणित करें व्यवहार। बहिर्मुखी वाला भी तो यही चाहता है। अंतर्मुखी वालों को भी ये चाहत बन जाए, शायद आदमी जात को दो भाग में फाड़ने वाला अंतर्मुखी बहिर्मुखी, वो फट जाए। ऐसा कुछ किया जाए। ऐसा सोचता हूँ मैं। ठीक है ना।

47. अध्ययन के तीन चरण

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 19, time 00:00-05:50](#)

प्रश्न : अध्ययन के 3 चरण को स्पष्ट कीजिए?

उत्तर : अध्ययन जो हमने किया है, जैसा हम अस्तित्व में अध्ययन किया। पहले दृष्य को देखा, दृष्य में वस्तु होता ही है। व्यापक भी एक दृष्य ही है, एक-एक भी दृष्य ही है, पहला ये समझ में आया। मैं दर्शक हूँ, मैं ये दोनों को देख रहा हूँ, इसको मैंने पहचाना। ये बात शायद हर विद्यार्थी के लिए जरूरत है। एक बात यहाँ पट गई। दूसरा बात आयी – जब जीवन को देखा, जीवन क्रिया कलाप को देखा, जीवन का स्वरूप को देखा, जीवन का लक्ष्य को देखा, जीवन शक्ति, बल को देखा, ये जीवन ज्ञान यही है। ये पता चला, और इसका ज्ञाता जीवन ही है, मैं ही हूँ ज्ञाता, ये आया। अस्तित्व के साथ द्रष्टा, जीवन के साथ ज्ञाता। ज्ञेय के बारे में आगे, तो पूरा सह अस्तित्व ही ज्ञेय है। उसी के साथ में मानवीयता पूर्ण आचरण, एक त्व सहित व्यवस्था के रूप में हर एक में है, ये बात निकल के आई। सम्पूर्ण व्यवस्था है ये, व्यवस्था में भागीदारी है। मानव को व्यवस्था और व्यवस्था में भागीदारी होने के लिए ज्ञान भी चाहिए, दर्शन भी चाहिए, आचरण भी चाहिए। ये बात आई। इस ढंग से हमने पढ़ा। ये पढ़ाई मैं समझता हूँ, अभी आगे पीढ़ी को भी यही पढ़ाई चाहिए।

एक step तो ये हो गयी। तो पहले step में विद्यार्थी को ये ज्ञान देना जरूरी है। तुम समझने योग्य व्यक्ति हो, समझने योग्य विद्यार्थी हो, तुम समझ सकते हो, ये भरोसा दिलाना अध्यापक का पहला काम। अध्ययन कार्य का पहला step ये होगा। उसके बाद कोई ना कोई भाषा विधि होगी। चाहे इंग्लिश में पढ़ाओं, हिंदी में पढ़ाओं, उसमें पढ़ाओं, इसमें पढ़ाओं और कोई ना कोई भाषा में तो आप पढ़ाओगे ही। भाषा एक भाग है, किसके लिए? अध्ययन कार्य के लिए। भाषा में अभी तक अपन सोचते रहे, व्याकरण भाषा को नियंत्रित कर सकता है, करता है। अभी तक की अवधारणा यही है। और संस्कृत भी वैसे ही मानता है, तो हमारे अनुसार इसको बदल दिया। वस्तु बोध होना ही भाषा का नियंत्रण है, सार्थक है। बोलिए साहब, pulse कहाँ से बदल गया। वस्तु बोध यदि नहीं होता है, व्याकरण को तुम कुछ भी लगाते रहो, क्या हो जाता है भाई।

प्रश्न : शब्द की हेराफेरी होती रहेगी, वस्तु तो पकड़ में आयी नहीं।

उत्तर : ये बात। “नहि नहि रक्षति डुकृड्करणे” शंकराचार्य जी भी इस बात को गाके गया, तुम व्याकरण की छंद कुछ भी नहीं काम करेगा, ज्ञान ही करेगा बोल के गए वो, ज्ञान के बारे में अभी अध्यात्म ज्ञान को बताया, अध्यात्म को बताया व्यवहार से कोई लेन-देन नहीं हैं। ऐसा बात सब हो गई। ये बात पूरा हो गया न। यहाँ हम पहुँच गए। तीसरा step वस्तु बोध। तो शब्द के बाद वस्तु बोध यदि होता है, शब्द का अर्थ वस्तु है, वस्तु बोध हो जाता है, तब हमारा अध्ययन हुआ। यदि वस्तु बोध नहीं हुआ है, तो शब्द तक हम रह जाएंगे। शब्द तक भी हम तब तक पहुँच नहीं पायेंगे, जब तक हम समझ सकता हूँ, हम प्रमाणित हो सकता हूँ, आदमी ही एक मात्र वस्तु है, जो समझ सकता है,

प्रमाणित हो सकता है, ये हैसियत को यदि हम उभारेगें नहीं, शब्द भी ठीक से सुनेगा आदमी, ऐसा भरोसा किया नहीं जा सकता।

इस ढंग से अध्ययन का तीन step बताया-

पहले परस्परता में विश्वास, उसके बाद शब्द का प्रयोग, श्रवण, उसके बाद शब्द से इंगित वस्तु का बोध।

ये 3 step में अध्ययन सार्थक होता है, इसमें कोई step को छोड़ा नहीं जा सकता। ये बेकार है ऐसा नहीं है, पहले step, अंतिम छत नहीं है। हमको वस्तु बोध होने से ही हम अंतिम step में पहुँचा। वस्तु बोध होने के बाद प्रमाणित होने के लिए प्रवृत्ति, उसके बाद संकल्प, संकल्प के बाद प्रमाणीकरण, व्यवहार में, ये सारा काम आता है। ठीक है ये। इस ढंग से अध्ययन का तीन स्थिति को मैंने देखा है, इसकी आवश्यकता पर आप हम आगे चल करके संवाद होगा और निर्णय होगा। यदि आवश्यकता है तो इसको पूरा बरकरार रखा जाए। ठीक है?

48. समापन

 विडिओ संदर्भ देखें: [Video 19, time 5:50-24:00](#)

प्रश्न : बाबा जी, आपने संपूर्ण जीवन भर में जो कुछ भी जाना, और जैसा आपने महसूस किया एक आदमी की तरह, और जैसा संपूर्ण मानव जाति के लिए उसको आवश्यक, प्रयोजनशील, कल्याणकारी समझकर आपने प्रस्तुत किया, ये तकनीक की ये महिमा है कि सारे जीवन भर की यात्रा का जो सारभूत है, उसको हम लोगों ने चार दिनों में कैसेट के भीतर भर लिया। आने वाली सदियों में जब आदमी विकट-विकट समस्याओं में, सवालों में, स्थितियों में फसेगा, तो आपके द्वारा बोले हुए ये जो सूत्र हैं, जो दिखने में बहुत छोटे से लगते हैं, जिनमें कई बार पढ़ने से, हमको कई बार गागर में सागर भरे जैसा अनुभव होता है। मानव जाति को किस तरह जैसे बिजली है आकाश में, इस तरह मानव जाति को किस तरह समस्याओं से निकालने में, समस्याओं से उबारने में ये सूत्र, ये आपकी बातें किस तरह से उपयोगी हो जाएंगी, इसको सोच करके मन कभी-कभी अभिभूत हो जाता है।

आपका एक सुखसानिध्य इतने दिनों तक इस गाँव को, इस आश्रम को, इस इलाके के भाइयों और बहनों को प्राप्त हुआ, इसी क्रम में इस क्षेत्र के जो वैज्ञानिक हैं, चिंतक हैं, शोधकर्ता हैं, वे लोग भी आप से आकर विभिन्न विषयों पर विभिन्न तरह से सवालों की बौछार करते रहे। जैसे युद्ध के क्षेत्र में चारों तरफ से गोलियाँ बरसती हैं, ऐसा। मुझको दो चीज़ याद आती हैं, कि जैसे जब आदमी को पता हो सही का तो ये सवालों की बौछार उनको फूलों की तरह लगती है, और अगर सही का पता ना हो, तो सवाल गोलियों की तरह आके जिन्दगी में चुभते हैं। हम लोगों ने एक और सत्य को देखा कि इतने सारे सवाल और इतने सारे फैले हुए विषय, बहुत से विषयों का तो हमारे जैसे सामान्य लोग नाम तक नहीं जानते। anthropology क्या है, विज्ञान की और धारा की उपधारा क्या है। उसमें मेंडल का नियम क्या है, हम लोग तो नाम नहीं सुने। तो ऐसा तो आपके साथ भी हुआ होगा क्योंकि आप भी नहीं सुने हैं।

आपको भी इस तरह विधिवत कॉलेज स्कूल में पढ़ने का मौका नहीं मिला, उसके बावजूद भी जिस तरह इन सवालों की बौछारों के बीच में आप, इनका विधिवत, चाहे engineering का सवाल हो, चाहे genetics का हो, चाहे वो धर्म का हो, तंत्र का हो, शास्त्र का हो, इतिहास का हो, कला, साहित्य, संगीत, पुराण, नक्षत्र विज्ञान, ज्योतिष, स्वास्थ्य शास्त्र, माने जितने सारे शास्त्रों को, हम समझ कर उसमें विशेषज्ञ होने की आज सोच भी नहीं पाते, आज के दुनिया में, एक विषय को पढ़ते - पढ़ते आदमी थक जाता है, उसमें थोड़ा बहुत काम कर लेता है, उमर खतम हो जाती है। तो इतनी सारी बातों को बिना जाने, एक अस्तित्व दर्शन के आधार पर आपने जैसा उसको पेश किया, आपने जैसा उसको समझा और जिस बारीकी से और जिस गहराई से आपने उत्तरों को इतनी सहजता से जो प्रस्तुत किया है, वो अपने आप में देखने लायक अनोखा विषय था। तो सवालों का उत्तर तो निश्चित हो गया है, उसकी अपनी महिमा और गरिमा तो है ही, लेकिन ये Video recording में हमने आपकी एक-एक मुद्रा को, आपने अगर एक फूल की पंखुड़ी को हिलाया भी है, आपने अगर चेहरे को थोड़ा उपर नीचे किया है, वो सारी चीज़ें कैद हो गई हैं। तो मुद्रा, अंगहार, भंगिमा, इस सब के द्वारा जो सवालों के उत्तर के स्वरूप में निकले हुए जो शब्द हैं, वो आने वाले जमाने के लिए एक बेशकीमती थाती होगी, ऐसा हम लोग सोचते हैं और साथ ही इसकी audio recording, Video recording तो हो ही गई है। इसके साथ जो संदर्भित विषय हैं, वो subject wise

उनको अलग-अलग संभव होगा तो विधिवत संपादित करके उसको प्रकाशित करने के लिए भी हम लोग सोचते हैं, ताकि विभिन्न विषयों के जो विशेषज्ञ हैं, उनके लिए उनकी विशेष उपयोगिता, प्रयोजनीयता बढ़ जाए।

अब कार्यक्रम के समापन के तरफ हम लोग बढ़ रहे हैं, तो इस कार्यक्रम के एक अन्तिम समापन समारोह के बाबत, हम लोगों ने जैसा देखा जैसा महसूस किया वो तो हमारे दिलो दिमाग में है, पर आपने जिस तरह से उत्तरों को प्रदान किया और इतने इतने विषयों और इतने सारे लोगों को जो संतुष्ट करने के क्रम में, इसके आधार क्या रहे हैं और अंतिम समापन आशीर्वचन के रूप में आप क्या कहना चाहेंगे, उसको सुनने की जिज्ञासा है।

उत्तर : बहुत बढ़िया। ये आत्मीयता का ही सूत्र मैं मानता हूँ। आत्मीयता विधि से ही ऐसे सुनने के लिए, सोचने के लिए, निर्णय लेने के लिए, जीने के लिए, होने के लिए, अपने आप से, मायने, स्वयं स्फूर्त हो पाता है। मैं इस बात को ऐसा अनुभव कर रहा हूँ, जीवन मे जो अक्षय बल, अक्षय शक्ति वर्तमान है,

वो किसी दबाव से, किसी प्रभाव से, किसी प्रकार की भौतिक संसार से, वो उदयास्त होने की जगह में नहीं है। मुख्य बात इतना ही है। वो चीज़ आपके जीवन में भी वैसे ही है, ये बच्चों का जीवन में भी वैसे ही है, बुढ़ों की जीवन में भी वैसे ही है। पीछे जो कई शरीर यात्रा करते हुए जो बीत गए हैं, यात्रा के, शरीर यात्रा के रूप में, जीवन तो वहीं के वहीं है, उन सारे जीवन में वैसे ही अक्षय शक्ति, अक्षय बल निरंतर विद्यमान है। पहली बात तो ये विश्वास मुझे मैं है। वैसे ही मेरे जीवन मे भी ऐसे ही अक्षय शक्ति, अक्षय बल है ही। उसकी अक्षयता का मतलब है, कभी समाप्त नहीं होना है। वो जागृत होने के आधार पर, वो ही यदि भ्रमित होने की आधार पर किसी न किसी सवाल, किसी न किसी परिस्थिती, हमारा सीमा में हम जो गढ़ी हुई कोई चीज़ होने के स्थिति में, हम उसके अंदर छुप जाते हैं, हम कहीं न कहीं वहाँ ,रुक जाते हैं, हम कहीं न कहीं हमारा जो गति की आवरोधक स्थिती बन ही जाती है, हम कुंठित हो जाते हैं, जवाब देने में असमर्थ हो जाते हैं, यही आज तक गुजरी बीती हुई जो पगडंडियाँ हैं। इन पगडंडियों से ही मेरा भी यात्रा शुरू हुआ होगा, आपका भी यात्रा शुरू हुआ होगा, हर

मनुष्य जाति का यात्रा यहीं से शुरू हुआ है और हर पगडंडी में आदमी कहीं ना कहीं राजमार्ग का परिकल्पना, ख्वाब, अपेक्षा, आवश्यकता, कुछ ना कुछ तो करते ही रहा है। इससे अच्छा होना चाहिए, इससे अच्छा होना चाहिए, इससे सही होना चाहिए, इससे सही होना चाहिए, इससे और लोगों को मिलना चाहिए, और लोगों को मिलना चाहिए, इस प्रकार से मनुष्य की शुभाकांक्षा यें सदा-सदा काम करते ही आए हैं। मेरे अनुसार ऐसे जो मानव परंपरा में शुभाकांक्षा का जो एक बहुत बड़ी भारी राशी हो गई रही होगी, तब उस अभीष्ट की पूर्ति के लिए, प्रकृति में ऐसे ही उदार मुझको महसूस होता है, अस्तित्व स्वयं में परम उदार रूप में ही है, इस अर्थ में अस्तित्व नित्य वर्तमान, नित्य प्रकाशमान, निरंतर रहस्यों और चमत्कार से मुक्त और विद्यमानता से भरपूर। कोई ऐसा भाग नहीं है, अस्तित्व अपने को किसी से ढक लिया हो, छुपा लिया हो। ऐसा कोई वस्तु मैंने नहीं देखा। संपूर्ण अस्तित्व ही बिल्कुल खुला मैदान, खुला चित्र, और खुला एक समझदारी, खुला एक निरंतर समाधान, खुला एक प्रमाण है। ऐसा मुझको दिखती है। और ये सदा-सदा बना रहता है। सोये रहते हैं तभी भी बना रहता है, पड़े रहते हैं बना रहता है, आप से बात करता रहता हूँ बना रहता है, चलता रहते हैं तभी भी बना रहता है। यही कुल मिला करके इसका मूल वस्तु है। इसी को मैं भाषा में कहता हूँ अनुभव।

अनुभव बिन्दु में आदमी का होना ही, ये अक्षय शक्ति का वैभव अपने आप से अस्तित्व के अनुरूप, अस्तित्व जैसा साफ-साफ प्रकाशमान है, विद्यमान है, वर्तमान है, वैसे ही हमारे सारे का सारा जीवन शक्तियाँ वर्तमान, विद्यमान, वैभवशील हो जाता है। उस वैभवशीलता में एक ही है, एक दूसरे के लिए हम संप्रेषणा, अभिव्यक्ति नाम की एक जो क्रिया कलाप है, उसको हम संपादित करते हैं। यद्यपी अस्तित्व स्वयं अभिव्यक्त है, संप्रेषित है। अस्तित्व में जो नहीं हैं, उसको हम कुछ भी नहीं कर सकते हैं। सोच भी नहीं सकते हैं। स्पष्ट होना तो बहुत दूर है। अस्तित्व में जो कुछ भी है, उतने ही हम सोच सकते हैं, समझ सकते हैं, अभिव्यक्त कर सकते हैं, संप्रेषित कर सकते हैं।

उसमें एक ऐसा संयोग और बुजुर्गों का आशिर्वाद, सर्व मानव का एक अभीष्ट, ये दोनों शायद एक जगह में आ गया। कल किसी मुद्दे पर अपन सोचते रहे, कहीं से भी दो शक्तियाँ, दो गतियाँ एकत्रित होने से, दूसरे शक्ति और गति में परिणित हो जाता है, बताते रहे। इसी प्रकार से सर्व मानव का अभीष्ट, अस्तित्व सहज अभिनव जो यथास्थितियाँ, इन दोनों का कहीं मुलाकात हो गई हैं, वो कहीं न कहीं प्रतिबिंबित होना ही था। ये कोई जरूरी नहीं है, मुझे ऐसा प्रतिबिंबित नहीं होता होता, और किसी से होता, आपको होता, आपको होता, आपको होता। किसी न किसी से तो लाता ही। प्रकृति की, सम्पूर्ण प्रकृति नियति के अनुसार ही, अपने नृत्य को सजाया है, वैभव को सजाया है, खूबी को सजाया है, संगीत को सजाया है, निरंतर एक प्रकार से हमारे सम्मुख पाठ ही पाठ है, झाँकि ही झाँकी है। हम पढ़ने में जितना मन लगाते हैं, निष्ठा लगाते हैं, वो उतने ही हमारा स्वत्व होता जाता है। शायद इसी क्रम में मुझको ऐसा कुछ हो गई, हमारा त्रिशा और जो अस्तित्व की एक परम उदारता, इन दोनों की कहीं मुलाकात हो गई, उस बीच में हुई वैभव इस प्रकार से आने लगी। यही गुरु मंत्र है।

तो अब रह गया आप लोगों का अनुपम, स्नेह कहो, विश्वास कहो। तमाम प्रकार की लोगों के बीच में हम पहुँचा, कुछ लोगों ने कुछ कहा, कुछ लोगों ने कुछ कहा। तुमने हिंदी भाषा को अपना करके तुम अपने जो प्रगती था, भविष्य था, इस विचारधारा का भविष्य को तुमने अंधकार में डाल दिया, ऐसा बोले। मैंने उसके एक छोटा सा प्रयोग किया – आप लोग बाकी भाषा जानते हैं कि नहीं? कहते हैं हाँ, आप इसको समझते हैं कि नहीं? समझते हैं। तो उस भाषा में तुम ही कह ले, तू ही कह ले भाई। हमको उर्दू भाषा नहीं आता, आपको तो आता है, आप ही कहो, आप काहे के लिए उर्दू भाषा सीखे हो। आप ही कह लो। ये कोई नियम नहीं है, एक ही व्यक्ति सभी भाषा में, अपने को प्रस्तुत करना। ये तो ज्यादाती होगी। बहुत है, हम बिना पढ़े ही, लिखे ही, और स्कूल ना जाते हुए भी, हम किसी एक भाषा में अपने को, जैसा भी टेढ़े हैं, मेढ़े हैं वस्तु को अपने स्वरूप में हम प्रस्तुत करने में हम सफल हैं। वस्तु को सफल करने में हम अपने में सफल होने का एक सुख हमको मिला है। वही सुख हमको जियाता है।

प्रश्न : ये जो सुख की स्थिति है, वो एक तरफ तो आपका अनुभव है और दुसरे तरफ अभिव्यक्ति में आप समर्थ हो गए, ऐसा जो दो तरफा जो संयोग बना।

उत्तर : वही तो, वही तो सुख हुआ, ये केवल अनुभव हुआ तो हम अभिव्यक्ति में यदि असफल होते ना, हमारे में ये रौनक नहीं होता। जिस रौनक से हम जीता हूँ। ठीक है, ये तो आप मानोगे, ये शरीर का रचना वगैरह जो सामान्य लोगों के जैसा ही है, ये रौनक अपने जगह में करोड़ों में एक ही दिखता है। ये दोनों चीज़ को हम अनुभव करते हैं।

क्या चीज़ है ये? जीवन का जो महिमा है, शरीर में जब घुलने लगता है, तो वो अपने वैभव को स्वयं बोलने लगता है, बिना बोले बोलने लगता है, ऐसा भी हुआ है।

प्रश्न : हर अंग से बोलता है बाबा, खाली मुंह से नहीं बोलता है।

उत्तर : वही आपने अभी उद्गार दिया, हर मुद्रा, भंगिमा, अंगहार में बोलती हुई सूचनाएं, मनुष्य के सभी अंग-अंग को मन को चुभता है। जो आपने बताए है, वो वोही है। जो इसका जो अभिव्यक्ति की सौरभ, मन में ही पहुँचता है। ये कान में, नाक में, हाथ में, पैर में नहीं पहुँचता है। अभिव्यक्ति की सौरभ, सुगंधी, नृत्य, ये मन में ही पहुँचता है। फलस्वरूप मन अपने आपसे खिल उठता है, हंस उठता है, वो अंग अंग में दिखता है।

इस प्रकार से जीना एक आवश्यक है मनुष्य को। ये भी नहीं है। हर मनुष्य को इस प्रकार से जीने की आवश्यकता है। इससे क्या हो जाता है पूछो। जैसा अस्तित्व निराला है, कोई छुपा हुआ, लुका हुआ नहीं है, वैसे ही हम हो जाते हैं। कुल मिला करके मैं ऐसे ही हूँ, कोई लुका हुआ नहीं, कोई छुपा हुआ नहीं, कोई दुराना नहीं, कोई संकट नहीं, कोई परेशानी नहीं, कोई समस्या नहीं। हर जगह में समाधान ही समाधान, हर जगह में हंसी ही हंसी, हर जगह में संगीत ही संगीत, हर जगह में लय ही लय, हर जगह में स्वर ही स्वर, बेसुरा तो होता ही नहीं है। ये मुख्य बात है, मुख्य बात यही है।

अब इसमें वैज्ञानिक, विवेक सम्पन्न विधि से सोचने पर यही आता है, आदमी व्यर्थ की दुख मोलता है। अस्तित्व में दुख नहीं है भगवन। क्या सुन रहे हो? अस्तित्व में दुख दर्द नहीं है। अस्तित्व में केवल संगीत है, सुख है, समाधान है, सफलता है। इसके अलावा कुछ भी नहीं है।

सारा नियति को क्या कहते हो? ये पत्थर से ले के मनुष्य तक जो व्यक्त किया है, ये सुख अभिव्यक्ति की, तकलीफ का अभिव्यक्ति है? आप स्वयं सोच लो। कितना सुखद विधि से ये अभिव्यक्त हुआ है, और इससे ज्यादा क्या गवाही चाहते हो। तो हम अपने ही भ्रांति वश, सीमायें बांध कर, हविसें बांध कर, हम परेशानी मोल लेते हैं। हविस का मतलब यही है, जिसको पहले से कहते आए हैं शेख चिल्ली, उस प्रकार से हमारा मन गढ़ंत आकारों को बनाकर, वो ना टिकने वाला आकारों को बना कर, हम टिकाऊ बनाने जाते हैं, तब हम परेशान होते हैं। बात इतनी ही है, तीसरा कुछ भी नहीं है, दूसरा कुछ भी नहीं है। उस रेखा को लाँघना ही शायद हम जागृति कह रहा हूँ। उसको लाँघना बहुत सुगम है, अभी आप हमारे सम्मुख जो चीज़ आयी है, ये स्वभाविक रूप में ये अपने को मार्ग दर्शन करता है। जय हो, मंगल हो, कल्याण हो।

कितना अच्छा है बाबा, हम लोग उस जमाने में पैदा हुए, जहाँ “साँस लेना भी सजा लगता है”, ऐसा गाते हैं। एक-एक साँस को सजा की तरह भोगने वाला ये जो युग है, इसको जिया है हम लोगों ने, भोगा है। वहाँ से हर साँस में आनंद की धारा फूटती हो, ये पाँच दिन जो आपके साथ गुजरे, तो ऐसा नहीं लगा कि हमने जिन्दगी के पाँच दिन गुजारे हैं, वो ऐसा लगा जैसे पाँच युगों की यात्रा हमने इन पाँच दिनों में निकाली है। यहाँ पे इस यातना के शिविर से निकल कर आनंद की उंचाईयों तक, आपने जो मनुष्य जाति को ये रास्ता दिखाया, जो मार्गदर्शन किया, इस आश्रम में अपना समय दिया, इतने दूर से लोग आए। अर्चना यहाँ पर बैठी है, हर आदमी की एक भाषा होती है, जरूरी नहीं

है वो शब्दों से बोले। मेरे एक मित्र थे, वो नाचा का बहुत करते थे कार्यक्रम, बोलते थे नाच ही मेरी भाषा है, मैं कैसा नाचता हूँ, कैसे नचवाता हूँ उस भाषा में मेरी बात को सुनो। इस आश्रम में अर्चना की बहुत खिलखिला के हँसने की और कभी-कभी चुप-चुप रो देने की, इस भाषा में जो बोलती है, उस भाषा से। मनुष्य को यातना से निकाल कर, जो यहाँ तक की यात्रा, आपने इन पाँच दिनों के छोटे से समय में, पाँच युगों की यात्रा को जो आपने सम्पन्न किया, उसके लिए हम क्या कहें। बहुत सी ऐसी बातें हैं, जिसके लिए हमारे पास शब्द नहीं हैं।

बहुत एक ही शब्द है, तो हम जैसा जीये हैं, इससे अच्छे जीना ही है।

